ISSN : 2321-0443
UGC Care listed Journal

आज़ादी का अमृत महोत्सव

ज्ञान गरिमा सिंधु

(त्रैमासिक पत्रिका)

अंक – 83-84 (संयुक्तांक)

जुलाई-सितंबर-अक्तूबर-दिसंबर 2024

वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग
शिक्षा मंत्रालय
(उच्चतर शिक्षा विभाग)
भारत सरकार

COMMISSION FOR SCIENTIFIC AND TECHNICAL TERMINOLOGY
MINISTRY OF EDUCATION
(DEPARTMENT OF HIGHER EDUCATION)
GOVERNMENT OF INDIA

ज्ञान गरिमा सिंधु

(त्रैमासिक पत्रिका)

अंक 83-84 (संयुक्तांक)

जुलाई-सितंबर-अक्तूबर-दिसंबर 2024

वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग

शिक्षा मंत्रालय

(उच्चतर शिक्षा विभाग)

भारत सरकार

COMMISSION FOR SCIENTIFIC AND TECHNICAL TERMINOLOGY

MINISTRY OF EDUCATION

(DEPARTMENT OF HIGHER EDUCATION)

GOVERNMENT OF INDIA

ज्ञान गरिमा सिंधु 'मानविकी और सामाजिक विज्ञान' की एक त्रैमासिक पत्रिका है। पत्रिका का उद्देश्य है- भारतीय भाषाओँ के माध्यम से विश्वविद्यालयी एवं अन्य छात्रों के लिए मानविकी और सामाजिक विज्ञान संबंधी उपयोगी एवं अद्यतन पाठ्य पुस्तकीय तथा संपूरक साहित्य की प्रस्तुति। इसमें वैज्ञानिक लेख, शोध-लेख, तकनीकी निबंध, शब्द-संग्रह, शब्दावली- चर्चा, पुस्तक समीक्षा आदि का समावेश होता है।

लेखकों के लिए निर्देश-

1. लेख की सामग्री मौलिक, अप्रकाशित तथा प्रामाणिक होनी चाहिए।
2. लेख का विषय मानविकी एवं सामाजिक विज्ञान विषयों से संबंधित होना चाहिए।
3. लेख सरल हों जिसे विद्यालय/ महाविद्यालय के छात्र आसानी से समझ सकें।
4. लेख लगभग 2000 से 3000 शब्दों का हो।
5. प्रकाशन हेतु विस्तृत जानकारी आयोग की वेबसाइट http://cstt.education.gov.in/ पर उपलब्ध है।

पत्रिका का शुल्क:	भारतीय मुद्रा	विदेशी मुद्रा
सामान्य ग्राहकों/संस्थाओं के लिएप्रति अंक	Rs 14.00	पौंड 1.64 डॉलर 4.84
वार्षिक चन्दा	Rs 50.00	पौंड 5.83 डॉलर 18.00
विद्यार्थियों के लिए प्रति अंक	Rs 8.00	पौंड 0.93 डॉलर 10.80
वार्षिक चन्दा	Rs 30.00	पौंड 3.50 डॉलर 2.88

वेबसाइट : www.cstt.education.gov.in
https://shabd.education.gov.in

कॉपीराइट : ©2024

प्रकाशक :
वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग
शिक्षा मंत्रालय,भारत सरकार
पश्चिमी खंड -7 ,रामकृष्णपुरम,
नई दिल्ली - 110066

बिक्री हेतु पत्र-व्यवहार का पता :
प्रभारी अधिकारी, बिक्री एकक
वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग,
पश्चिमी खंड -7, रामकृष्णपुरम,
नई दिल्ली-110066
टेलीफोन - (011) 20867172
फैक्स - (011) 26105211/246

बिक्री स्थान :
प्रकाशन नियंत्रक, प्रकाशन विभाग
भारत सरकार,
सिविल लाइन्स, दिल्ली-110054

पत्रिका में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। इनसे संपादक मंडल की सहमति आवश्यक नहीं है।

अध्यक्ष की लेखनी से

वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग द्वारा प्रकाशित ज्ञान गरिमा सिंधु का नवीनतम और संयुक्त विशेषांक के साथ प्रस्तुत करते हुए मुझे अपार हर्ष हो रहा है। वैज्ञानिक तथा तकनीकी विषयों के प्रतिपादन में हिंदी की मानक शब्दावली का प्रयोग करने वाली एकमात्र पत्रिका है। हालांकि हिंदी में मूल रूप से वैज्ञानिक लेखन करने वाले लेखकों की संख्या बहुत अधिक नहीं है, तथापि विविध वैज्ञानिक पत्रिकाओं में 'ज्ञान गरिमा सिंधु' का अपना विशिष्ट स्थान है। पत्रिका के पाठक और लेखकों को विदित है कि 'ज्ञान गरिमा सिंधु' ज्ञान विज्ञान की अध्ययन सामग्री के अतिरिक्त मानक तकनीकी शब्दावली एवं उसके प्रयोग व प्रचार-प्रसार के प्रति भी कटिबद्ध है। अत: आशा और पूर्ण विश्वास है कि इस पत्रिका के माध्यम से भविष्य में भी पाठकों को उच्च स्तरीय पाठ्य सामग्री निरंतर प्राप्त होती रहेगी।

इस विशेष संयुक्त अंक में हम 22 लेखों का संग्रह प्रस्तुत कर रहे हैं, जो भारतीय ज्ञान परंपरा, कौटिल्यीय अर्थशास्त्र, पत्रकारिता में कृत्रिम बुद्धिमत्ता, और राष्ट्रीय शिक्षा नीति जैसे विविध विषयों पर केंद्रित हैं। साथ ही, कोविड-19 के दौरान खाद्य सुरक्षा, जेल रेडियो के माध्यम से शिक्षा, और यौन हिंसा पर सामाजिक-कानूनी दृष्टिकोण जैसे ज्वलंत मुद्दों पर भी विचार किया गया है। फिल्म समीक्षाएं और साहित्यिक विश्लेषण हमारे सांस्कृतिक और ऐतिहासिक धरोहर को उजागर करते हैं। हमें विश्वास है कि यह अंक आपके ज्ञान और विचारधारा को समृद्ध करेगा।

सभी पाठकों से अपेक्षा है कि वे पत्रिका के संबंध में अपने सुझावों एवं प्रतिक्रियाओं से आयोग को अवगत कराते रहें ताकि पत्रिका में सुधार हो और इसकी स्वीकार्यता में निरंतर वृद्धि होती रहे। हम उन विद्वानों के प्रति अत्यन्त आभारी हैं जिन्होंने ज्ञान गरिमा सिंधु के इस अंक के लिए लेख भेजे हैं। भविष्य में भी विद्वान लेखकों से इसी तरह के सहयोग की अपेक्षा रहेगी।

(प्रोफेसर गिरीश नाथ झा)
अध्यक्ष

संपादकीय

'ज्ञान गरिमा सिंधु' के 83-84वें अंक में आपका स्वागत है, जो समाजशास्त्र और मानविकी के नवीनतम अनुसंधानों पर आधारित है। यह अंक हमारी पत्रिका के विशेष दृष्टिकोण को प्रतिबिंबित करता है, जिसमें समाजशास्त्र और मानविकी के अद्यतन शोधों को प्रस्तुत किया गया है। मानविकी और सामाजिक विज्ञान समाज के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, जो शिक्षा, संस्कृति, आर्थिक प्रगति, और राजनीतिक प्रक्रियाओं की गहरी समझ को बढ़ावा देते हैं। हमारे बहु-सांस्कृतिक समाज, जिसमें विभिन्न जातियों, भाषाओं, धर्मों और संस्कृतियों का संगम है, को बेहतर समझने के लिए इस अंक में विविध विषयों पर आधारित शोध लेखों को शामिल किया गया है।

इस संयुक्त अंक में हमने 22 लेखों का संग्रह प्रस्तुत किया है, जिसमें भारतीय ज्ञान परंपरा, कौटिल्यीय अर्थशास्त्र, पत्रकारिता में कृत्रिम बुद्धिमत्ता, और राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 जैसे विषयों पर गहन विश्लेषण है। सिंधु जल संधि, कोविड-19 के दौरान खाद्य सुरक्षा, और जेल रेडियो के माध्यम से शिक्षा के प्रसार जैसे ज्वलंत मुद्दों पर भी विचार किया गया है। इसी के साथ श्रीकांत सूर्यविप्र द्वारा रामचरितमानस का असमिया साहित्य में प्रतिपादन और नरेंद्र कोहली की रामकथा के आधुनिकताबोध पर विशेष ध्यान दिया गया है। यौन हिंसा पर सामाजिक-कानूनी वर्जनाओं और सांस्कृतिक विविधता पर लेख भी समाज की गहरी समझ प्रदान करते हैं।

इस विशेष अंक को सफल बनाने में हमारे समीक्षा एवं संपादकीय के सदस्यों का सहयोग और समर्पण के लिए हम विशेष धन्यवाद देना चाहते हैं। उनकी समीक्षात्मक दृष्टि और संपादन कौशल ने इस अंक की गुणवत्ता को और अधिक सुदृढ़ बनाया है। हम उनके निरंतर सहयोग के लिए हृदय से आभारी हैं । हम विशेष रूप से धन्यवाद देना चाहते हैं: *प्रो. राजेंद्र पांडेय, डॉ. ज्योति, और डॉ. सेमवाल*, जिन्होंने इस अंक की समीक्षा और संपादन में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

इस पत्रिका के माध्यम से हम समाजशास्त्र और मानविकी के उच्च स्तरीय अनुसंधान को प्रोत्साहित करना चाहते हैं। हम लेखकों से आग्रह करते हैं कि वे अपने शोध और विचार हमारे साथ साझा करें, ताकि ज्ञान-विनिमय के माध्यम से एक समृद्ध समाज का निर्माण किया जा सके। आगामी अंकों में भी हम नवीनतम अनुसंधान और विचार प्रकाशित करेंगे।

(चकप्रम बिनोदिनी देवी)
सहायक निदेशक

परामर्श मंडल

प्रो. ए डीएन बाजपेयी अध्यक्ष

कुलपति अटल बिहारी बाजपेयी विवि, बिलासपुर
वाराणसी (यूपी) – 221002

प्रो. रजनीश कुमार शुक्ल सदस्य

प्रोफेसर, तुलनात्मक धर्म और दर्शन विभाग संपूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय

प्रो. नागेश्वर राव सदस्य

निदेशक, भारतीय उच्च अध्ययन संस्थान
राष्ट्रपति निवास, शिमला-171005

प्रो. श्रीनिवास वरखेड़ी सदस्य

कुलपति, केंद्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

प्रो.राजेश्वरी पंढरीपांडे सदस्य

सेवानिवृत्त प्रो.अरबाना इलिनोइस विश्वविद्यालय शैम्पेन, यूएसए

प्रो. धनंजय कुमार सिंह सदस्य

सदस्य सचिव, आई.सी.एस.एस.आर., भारतीय सामाजिक विज्ञान अनुसंधान परिषद,
नई दिल्ली -110067

प्रो. सच्चिदानंद मिश्र सदस्य

सदस्य-सचिव, भारतीय दार्शनिक अनुसंधान परिषद
नई दिल्ली - 110 062

प्रो (डॉ.) रवि प्रकाश टेकचंदानी सदस्य

निदेशक, राष्ट्रीय सिंधी भाषा प्रचार परिषद, दिल्ली - 110066

डॉ. मिथिलेश मिश्र सदस्य

निदेशक,दक्षिण एशियाई भाषा समन्वयक
अरबाना - केंपेन इलिनोइस विश्वविद्यालय
अरबाना, आईएल 6180

प्रो. अनिल जोशी सदस्य

अध्यक्ष, केंद्रीय हिंदी संसथान, आगरा

संपादन मंडल

प्रधान संपादक

प्रोफेसर गिरीश नाथ झा

अध्यक्ष

संपादक

श्रीमती चकप्रम बिनोदिनी देवी

सहायक निदेशक

सह-संपादक

श्री इन्द्रदीप सिंह

सहायक वैज्ञानिक अधिकारी(वाणिज्य)

समीक्षा एवं संपादन समिति

प्रो.राजेंद्र प्रसाद पाण्डेय

अनुवाद अध्ययन एवं प्रशिक्षण विद्यापीठ अनुवाद अध्ययन एवं प्रशिक्षण विद्यापीठ

इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय,नई दिल्ली

डॉ. ज्योति

सहायक प्रोफेसर,स्कूल ऑफ संस्कृत एंड इंडिक स्टडीज, जे.एन.यू नई दिल्ली-110067

डॉ. लक्ष्मण प्रसाद सेमवाल

पूर्व संपादक ‘हिमालय़ मैन एण्ड नेचर’ एवं रिर्सच कन्सल्टेंट सीएसआरडी

जे.एन.यू नई दिल्ली-110067

अनुक्रमाणिका

1.	अध्यक्ष की लेखनी से		ii
2.	संपादकीय		iii
3.	संपादन मंडल एवं समन्वय		iv
4.	परामर्श मंडल		v
	शोध पत्र		
5.	कौटिल्यीय अर्थशास्त्र में वर्णित राजनैतिक अवधारणाओं का अनुक्रमण एवं तकनीकी शब्दों का निष्कर्षण	आरुषि निगम अवधेश प्रताप सिंह सुभाष चन्द्र	1
6.	पत्रकारिता में कृत्रिम बुद्धिमत्ता की उपस्थिति और इससे जुड़ी नैतिक चुनौतियाँ और समाधान	डॉ. विनय कुमार राय	09
7.	विद्यालयी शिक्षा में राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के क्रियान्वयन हेतु नवाचारी प्रयास	अनामिका यादव डॉ. सरिता चौधरी	16
8.	वर्तमान संदर्भ में सिंधु जल संधि के समक्ष उभरती चुनौतियां एवं समाधान	अनु डॉ रमेश कुमार	24
9.	परंपरा की गूँज: श्रीकांत सूर्यविप्र द्वारा तुलसीदास कृत रामचरितमानस का असमिया साहित्य में प्रतिपादन	डॉ. सत्यकाम बोरठाकुर डॉ किरण हजारिका	30
10.	कोविड-19 का संकट और भारत की खाद्य सुरक्षा नीति में नवाचारः प्रधानमंत्री गरीब कल्याण अन्न योजना	लुके कुमारी विजय दीक्षित	37
11.	स्वतंत्रता संग्राम के महानायक महात्मा गाँधी की आत्मकथा ‘सत्य का प्रयोग’ से प्रेरित फिल्मों का सफ़र	रूबी पाण्डेय एवं बीर पाल सिंह यादव	45
12.	भारतीय संस्कृतियों में विविधता को समझने के लिए सहयोगात्मक पद्धति का उपयोग	डॉ. (श्रीमती) पूनम मागू	59
13.	नरेंद्र कोहली की रामकथा में आधुनिकताबोध	तरुण किशोर नौटियाल	64
14.	मैतै समुदाय की अंतिम संस्कार परंपरा: सांस्कृतिक, ऐतिहासिक और पुरातात्विक दृष्टिकोण से एक अध्ययन	हजारिमायुम बिस्मार्क शर्मा सलाम पुष्प देवी एवं इरोम लकीचंद मीतै	69
15.	भारतीय ज्ञान परम्परा में पशुपालन एवं प्रशिक्षण: कौटिलीय अर्थशास्त्र के विशेष संदर्भ में	मोहित कुमार पाण्डेय डॉ. आशीष कुमार दीपज्योति देव	78

16.	समाज में मीडिया की भूमिका: लोकतंत्र के विकास में अवसर एवं चुनौतियाँ	डॉ· सुमन मौर्य	91
17.	डिजिटल युग में नैगम संचार की उभरती प्रवृत्तियाँ: चुनौतियाँ एवं अवसर	डॉ. शैलेश शुक्ला	99
18.	सिनेमा की भाषा के रूप में दक्खिनी हिन्दी	प्रोमिला	108
19.	भारतीय शिक्षा का पुनरुत्थान: औपनिवेशिक प्रभावों से मुक्ति और सांस्कृतिक पुनर्जागरण	डॉ. प्रभाकर पाण्डेय	114

लेख

20.	भारतीय ज्ञान परम्परा आधारित वैज्ञानिक दृष्टिकोण की समकालीन प्रासंगिकता	मोहिता वर्मा डॉ. नीतू सिंह	120
21.	जेल रेडियो के जरिए हरियाणा की करनाल जेल में शिक्षा का प्रसार	डॉ. वर्तिका नन्दा	128
22.	कंजर समाज और उसका सामाजिक दस्तावेज ('रेत' उपन्यास के विशेष सन्दर्भ में)	डा. हरीश कुमार	134
23.	बदलते परिवेश में तुलसीदास के शैक्षिक मूल्यों की उपादेयता	डॉ. शीतल	137
24.	यौन हिंसा और वैवाहिक बलात्कार के संबंध में सामाजिक एवं कानूनी वर्जनाएँ	सत्येन्द्र कुमार पाण्डेय डॉ. हिमानी बिष्ट	142
25.	भारतीय ज्ञान परंपरा में श्री अरविंद का योगदान	कृष्ण कुमार यादव 'कनक	148

फिल्म समीक्षा

26.	तीसरी क़सम का फिल्मांकन (फिल्म समीक्षा)	चित्र लेखा वर्मा	154

कौटिल्यीय अर्थशास्त्र में वर्णित राजनैतिक अवधारणाओं का अनुक्रमण एवं तकनीकी शब्दों का निष्कर्षण

आरुषि निगम[1], अवधेश प्रताप सिंह[2] एवं सुभाष चन्द्र[3]

शोधसार:

अर्थशास्त्र को राजनीति विज्ञान, राजशास्त्र, सामाजिक प्रबंधन आदि का प्रामाणिक स्रोत माना जाता है। अर्थशास्त्र शब्द में प्रयुक्त पद "अर्थ" का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है। इसके अंतर्गत राज्य के स्वरूप, कानून, न्याय व्यवस्था, नागरिक व आपराधिक न्याय प्रणाली, नैतिकता, व्यापार, मन्त्रीस्तरीय परीक्षा के साधन, कूटनीति, युद्ध-सिद्धांत तथा विभिन्न कर्त्तव्यों एवं उत्तरदायित्वों पर प्रकाश डाला गया है। यह शास्त्र प्रमुख रूप से शासन के व्यावहारिक पहलुओं पर केंद्रित है तथा प्रभावी एवं कुशल प्रशासन के लिए यह एक अनुकरणीय दृष्टि भी प्रदान करता है। इसमें शक्तिशाली राजा के विभिन्न गुणों यथा; कूटनीति, कर नीति, दण्ड व्यवस्था आदि विषयों को शामिल किया गया है। वर्तमान; इंटरनेट, उन्नत डिजिटल तकनीक एवं सूचना प्रौद्योगिकी के युग में संपूर्ण विश्व में डिजिटल माध्यम से सूचनाओं का आदान-प्रदान करना सुलभ व सरल होता जा रहा है। डिजिटलीकरण के युग में जहाँ अर्थशास्त्र का अध्ययन एवं विश्लेषण केवल संस्कृत के विद्वानों द्वारा ही नहीं अपितु वैश्विक स्तर के इतिहासकार, समाजशास्त्री, राजनीतिज्ञ, अर्थशास्त्री, विधिवेत्ता एवं भाषाविद् भी करते हैं। वहां सबसे बड़ी निराशा की स्थिति यह है कि अर्थशास्त्र के लिए डिजिटल एवं ऑनलाइन त्वरित सूचना प्राप्ति प्रणाली की उपलब्धता नहीं है। अतः इस शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य; अर्थशास्त्र के लिए एक त्वरित संदर्भ प्रणाली एवं डिजिटल अनुक्रमण विकसित करना है, जहां अर्थशास्त्र में वर्णित अवधारणाओं को ऑनलाइन माध्यम से भी सरलता से खोजा जा सके।

मुख्य शब्दः कौटिल्यीय अर्थशास्त्र, अनुक्रमण, राजनैतिक-अवधारणा, सप्तांग-सिद्धांत, अर्थशास्त्र सूचना तन्त्र

परिचयः

कौटिल्य का अर्थशास्त्र; शासन कला, राजनीति और अर्थशास्त्र पर आधारित एक मौलिक ग्रंथ है (Basu & Sen, 2008)।[1] चौथी शताब्दी ईसा पूर्व के आस-पास रचित यह ग्रंथ शासन, विदेशनीति, सैन्य रणनीति, विधि तथा आर्थिक प्रबंधन पर व्यापक मार्गदर्शन प्रदान करता है (Boesche, 2002)।[2] यह शासन कला के व्यावहारिक पहलुओं को प्राथमिकता देता है, जो एक आदर्श राज्य के प्रशासन में अंतर्दृष्टि प्रदान करता है। इसमें एक राजा के कर्तव्यों, कूटनीति की कला, खुफिया जानकारी, कराधान, न्यायिक प्रक्रियाओं आदि का व्यावहारिक विवरण है। यह एक सुव्यवस्थित और अनुशासित राज्य के महत्व पर जोर देता है तथा युद्ध और शांति दोनों के लिए रणनीतियों की रूपरेखा तैयार करता है। कौटिल्य का अर्थशास्त्र; 15 अधिकरणों, 150 अध्यायों और 180 विषयों में संरचित

है। जिनमें से प्रत्येक राज्य कला, शासन और प्रशासन के विशिष्ट विषयों की चर्चा है।[3] यह आर्थिक प्रबंधन, व्यापार संबंधों और प्राकृतिक संसाधनों के प्रबंधन पर केंद्रित है।[4]

यद्यपि कौटिल्य को अर्थशास्त्र को राजनीति विज्ञान से संबंधित माना जाता है, तथापि सामाजिक प्रबंधन के सभी पहलुओं के लिए यह एक अनूठा दृष्टिकोण प्रदान करता है। प्राचीन भारत के शासन-प्रशासन के बारे में स्पष्ट जानकारी प्रदान करता है। यह अर्थशास्त्र समकालीन सामाजिक-राजनीतिक वास्तविकताओं को भी दर्शाता है। अपनी प्राचीन उत्पत्ति के बावजूद, यह ग्रंथ अपने स्थायी सिद्धांतों, नेतृत्व, नैतिकता और शासन पर चर्चा में अपने योगदान के लिए आज भी प्रासंगिक है। यह अर्थशास्त्र; प्रभावी शासन के लिए एक व्यापक राजनीतिक संरचना की रूपरेखा प्रस्तुत करता है।[5] इसमें वर्णित राजनीतिक संरचना के कुछ प्रमुख तत्व इस प्रकार हैं:

1. राजतन्त्र अथवा साम्राज्यवाद: अर्थशास्त्र; राजतंत्रीय व्यवस्था को परिपोषित करता है, जिसका सर्वोच्च अंग राजा का होता है। राजा को केंद्रीय प्राधिकारी माना जाता है जो पूरे राज्य के समग्र कल्याण के लिए जिम्मेदार होता है।
2. मंत्रिपरिषद: मंत्रिपरिषद का चयन राजा द्वारा बहुत विचार-विमर्श के बाद तथा विभिन्न प्रकार की परीक्षाएँ (जैसे धर्मोपध, अर्थोपध, कामोपध, भयोपध) लेकर किया जाता है। सभी परीक्षाओं में सफलतापूर्वक उत्तीर्ण होने के पश्चात् ही मंत्रियों को विभिन्न प्रशासनिक शाखाओं में नियुक्त किया जाता है। राजा मंत्रिपरिषद से परामर्श करने के बाद ही प्रशासन के विभिन्न पहलुओं की देख-रेख करता है। ये सभी मंत्री वित्त, रक्षा, विदेशी मामले और आंतरिक सुरक्षा जैसे क्षेत्रों के विशेषज्ञ होते हैं।
3. स्थानीय अथवा क्षेत्रीय प्रशासन: संपूर्ण राज्य को सुगमता से संचालन करने के लिए राज्य को छोटी-छोटी प्रशासनिक इकाइयों में विभाजित किया जाता है; फिर स्थानीय प्रशासन को क्षेत्रीय और नगरपालिका स्तर के अधिकारियों को सौंप दिया जाता है। ये अधिकारी नीतियों को लागू करने और जमीनी स्तर पर व्यवस्था बनाए रखने के लिए जिम्मेदार होते हैं।
4. विधि और न्याय: अर्थशास्त्र सुस्पष्ट रूप से परिभाषित कानूनों और दंडों सहित एक उत्कृष्ट कानूनी प्रणाली की रूपरेखा प्रस्तुत करता है। यह सामाजिक व्यवस्था बनाए रखने में न्याय के महत्त्व पर बल देता है। अतः न्याय सुनिश्चित करने की जिम्मेदारी राजा या न्यायपालिका की होती है।
5. गुप्तचर प्रणाली: अर्थशास्त्र में राजनैतिक संरचना की एक अनूठी विशेष गुप्तचर प्रणाली है। इस शास्त्र में राजा को आंतरिक और बाहरी खतरों के बारे में गुप्त सूचना या खुफिया जानकारी एकत्र करने के लिए गुप्तचरों का एक नेटवर्क बनाए रखने की सलाह दी जाती है।
6. आर्थिक नीतियां: कौटिल्य अर्थशास्त्र में कराधान, व्यापार, कृषि, धन प्रबंधन आदि आर्थिक नीतियों से संबंधित उपायों की चर्चा की गई है। जिन्हें एक सुशासित राज्य को समृद्धि के लिए अपनाना चाहिए।
7. सैन्य संगठन: इस अर्थशास्त्र सैन्य संगठन, षाड्गुण्य सिद्धान्त, सप्तांग राज्य, द्वादश प्रकृति, युद्धनीतियों आदि पर विस्तृत सामग्री प्रदान करता है, जिसमें सैन्य संरचना, युद्ध रणनीति और राज्य की सुरक्षा सुनिश्चित करने में सेना की भूमिका सर्वोपरि है।[6]

8. राजधर्म: राजनैतिक संरचना में धर्म, न्याय और नैतिक विचारों का निर्देशिन होने की अपेक्षा की जाती है। राजा को न्याय, अविश्वास और करुणा के साथ शासन करने की अनुमति दी जाती है।
9. सामाजिक कल्याण: सामाजिक कल्याण का प्रावधान राजनैतिक संरचना की आधारशिला है, जिसमें राजा समाज के सभी वर्गों के कल्याण के लिए जवाबदेह है।
10. विदेशी संबंध: अर्थशास्त्र प्रतिवेशी राज्यों के साथ सौहार्दता बनाए रखने अथवा शासकीय व्यवहार को चलायमान रखने के लिए राजनयिक संबंधों, संधियों और रणनीतियों का मार्गदर्शन करता है।[7]

प्राचीन भारत में राजनैतिक प्रशासन की दक्षता के प्रमाण के रूप में शासन के प्रति अर्थशास्त्र का विशद् दृष्टिकोण, शासन कला के विभिन्न पहलुओं के रूप में जाना जा सकता है। इसके सिद्धांत न केवल ऐतिहासिक रूप से प्रभावशाली रहे हैं अपितु समकालीन शासन प्रणालियों, युद्ध, दंड व्यवस्था और राज्य की स्थितियों को समझने के लिए इनका निरंतर अध्ययन भी किया जा रहा है। प्राचीन हिंदू व्यवस्था में सुशासन की अवधारणा[8] 'योगक्षेम' की ब्राह्मणवादी अवधारणा पर आधारित है। जिसका अर्थ है समाज या देश के नागरिकों का कल्याण। इसमें नागरिकों के सभी सामाजिक, आर्थिक, न्यायिक, स्वास्थ्य संबंधी तत्वों के 'योगक्षेम' और कल्याण की चर्चा की गई है। भारत की प्रशासनिक प्रणाली का पता प्राचीन हिंदू न्यायशास्त्र ग्रंथों के नक्शे-कदम पर चलकर लगाया जा सकता है जो वैश्विक समाज और न्याय प्रणाली की विशेषताओं का वर्णन करते हैं।[9] अर्थशास्त्र के अलावा, मनुस्मृति, याज्ञवल्क्यस्मृति, शुक्रनीति आदि सभी लोकप्रिय और प्रामाणिक ग्रंथों में राजधर्म एक बहुत ही महत्वपूर्ण विषय रहा है।[10] राजधर्म के अंतर्गत आने वाले प्रमुख विषय जैसे राज्य और राष्ट्र की अवधारणा, धर्म की अवधारणा, शासन, शासक के कर्तव्य, लोकतंत्र, मौलिक अधिकारों का सामाजिक दर्शन,[11] शासन की कला और विज्ञान, चुनाव सुधार, राष्ट्रीय एकीकरण, धार्मिक अल्पसंख्यक और धर्मनिरपेक्षता, योगक्षेम और पंचायती राज आदि सभी तत्व इन स्मृतियों में संकलित हैं। यह ग्रंथ कानून-व्यवस्था, राजनीति, अधिनायकवाद, विस्तृत कानूनी ढांचे, मानव संसाधन प्रबंधन और भ्रष्टाचार की रोकथाम से भी संबंधित हैं। अर्थशास्त्र में, पारंपरिक भारतीय संस्कृति ने शान्तिपूर्ण और सामञ्जस्यपूर्ण सामाजिक व्यवस्था, नागरिक भागीदारी, सन्तुलित सामूहिक वातावरण के कल्याण पर बल दिया है। इसी तरह के निर्गमों का वर्णन मनुस्मृति, याज्ञवल्क्यस्मृति, अत्रिस्मृति आदि में किया गया है। मनुस्मृति, याज्ञवल्क्यस्मृति, अर्थशास्त्र, धर्मशास्त्र के तीन प्रमुख उदाहरण हैं जो राज्यनीति और दंड सिद्धान्तों से संबद्ध हैं। जिससे समाज धर्म से विचलित न हो। यह राज्य सरकार का उत्तरदायित्व है कि वह अपने देशवासियों को विनियमित करते हुए उनका कल्याण भी सुनिश्चित करे (Singh, 2017)। भागीदारी, उत्तरप्रदाई, नागरिकों के कल्याण को अधिकतम करना, उनकी गरिमा व सम्मान की रक्षा करना, न्याय और नागरिकों की आकांक्षाओं के प्रति संवेदनशीलता को प्रभावी शासन के लिए मूल सिद्धांत माने जाते हैं।

अतः, यह शोध, अर्थशास्त्र[13] में दर्शाए गए जटिल राजनीतिक परिदृश्य को उजागर करने के लिए अनुक्रमण एंव अवधारणा निष्कर्षण[14] की उन्नत तकनीकों को नियोजित करता है। यह अध्ययन धार्मिक ग्रंथ में अंतर्निहित शासन सिद्धांतों, राजनीतिक रणनीतियों और प्रशासनिक संरचनाओं में सूक्ष्म अंतर्दृष्टि को उजागर करने का प्रयास करता है। शोध लेख का उद्देश्य आधुनिक सूचना प्रौद्योगिकी की मदद से अर्थशास्त्र में निहित मूल, महत्वपूर्ण और प्रासंगिक ज्ञान को समकालीन विद्वानों और नीति निर्माताओं के लिए सुलभ बनाना है। इसके अलावा, प्रमुख अवधारणाओं की खोज प्राचीन भारतीय शासन को आकार देने वाले राजनीतिक विचार की गहरी समझ प्रदान

करती है।[15] यह अंतर्विषयक दृष्टिकोण न केवल राजनीति विज्ञान और इतिहास के क्षेत्र में योगदान देता है बल्कि आधुनिक संदर्भ में प्राचीन राजनीतिक ज्ञान की प्रासंगिकता को भी प्रदर्शित करता है।

डेटा संग्रहण एवं डिजिटलीकरण

अर्थशास्त्र में निहित किसी भी शब्द को तुरंत सूचित करने और पुनः प्राप्त करने के लिए एक व्यापक संदर्भ विकसित किया गया है। अर्थशास्त्र की अवधारणाओं को देवनागरी लिपि में यूटीएफ-8 प्रारूप का उपयोग करके एक डिजिटल डेटा संग्रह में व्यवस्थित रूप से संग्रहीत किया गया है। सरल शब्दों में; अर्थशास्त्र के डेटा श्लोकों अथवा गद्यों को कंप्यूटर तकनीकों द्वारा निकाला जाता है। तत्पश्चात् सम्पादित एवं परिष्कृत करके अंत में डिजिटल रूप से संग्रहीत किया जाता है । यह खोजतन्त्र क्रमादेश ऑनलाइन अनुक्रमणिका की प्रक्रिया में निहित है।[16]

डेटा संग्रहण एवं विश्लेषण के लिए मात्रात्मक या परिमाणात्मक पद्धति का उपयोग किया गया है। इस ऑनलाइन खोज प्रणाली को विकसित करने व खोज के लिए संगणकीय भाषाविज्ञान (कम्प्यूटर भाषा विज्ञान) की सूचना निष्कर्षण पद्धतियों का मुख्य रूप से उपयोग किया गया है। अनुक्रमण एवं क्रम आधारित वेब खोज तकनीक का प्रयोग ऑनलाइन अनुक्रमण के लिए किया गया है। किसी भी अन्तर्जालाधारित प्रणाली में दो प्रमुख भाग होते हैं; अग्रभाग एवं पश्चभाग।

अग्रभाग- अग्रभाग को प्रयोक्ता अन्तराफलक के रूप में भी जाना जाता है, जिसे सीएसएस और जावास्क्रिप्ट क्रमादेश भाषा के साथ हाईपरटेक्स्ट मार्कप भाषा (एचटीएमएल) का उपयोग करके विकसित किया गया है।

पश्चभाग- पश्चभाग में क्रमादेशन भाषा, दत्तांश संग्रह एवं सर्वर संलग्न रहते हैं। इसके लिए क्रमादेशन भाषा के लिए पाइथॉन, पाठ सञ्चिका (टेक्सटफाइल्स) और सर्वर के लिए फ्लास्क का उपयोग किया गया है।

सङ्गणकीय (कंप्यूटिंग) प्लेटफार्म एवं तकनीक का विकास

अर्थशास्त्र खोज विधि अथवा त्वरित सन्दर्भीकरण प्रणाली कई डिजिटल घटकों[17] का उपयोग करते हुए एक सुसंगत तन्त्र के रूप में कार्य करता है। इसके प्रमुख घटक इस प्रकार हैं:

1. प्रयोक्ता अंतराफलक: इसके माध्यम से उपयोगकर्ता इस तन्त्र में खोज के लिए शब्द प्रविष्ट करता है।
2. पूर्वप्रक्रमक: यह एक घटक है जो उपयोगकर्ता द्वारा प्रदत्त पृच्छाओं का प्रारम्भिक प्रसंस्करण करता है।
3. लिपि सत्यापनकर्ता: उपयोगकर्ता द्वारा प्रदत्त शब्द की लिपि की जांच से प्राप्त परिणाम के लिपि का निर्धारण करता है।
4. अवधारणा सत्यापनकर्ता: अवधारणा सत्यापनकर्ता या कॉन्सेप्ट वैलिडेटर उपयोगकर्ता द्वारा इनपुट के रूप में प्रदत्त पृच्छाप्रश्न (खोज क्वेरी) के अनुसार पूर्वनिर्मित अवधारणाओं की सूचना से मिलान करता है।
5. सूचना निष्कर्षक: यह घटक अर्थशास्त्र दत्तांश संग्रह के लिए एक सूचकांक के रूप में कार्य करता है और उपयोगकर्ता द्वारा प्रदत्त इनपुट को परिणाम संतति के लिए सटीक रूप से संदर्भित करता है।
6. सूचना निर्माता: यह उपयोगकर्ता के पृच्छाप्रश्नों के आधार पर पृच्छानुरूप तथा सङ्गत जानकारी उत्पन्न करता है।

7. अर्थ निर्माता:ह घटक विशिष्ट शब्दों की व्याख्या और अर्थ उत्पन्न करने में सहायता करता है।
8. परिणाम जनित्र: अंतिम घटक परिणाम जनित्र है जो किसी दिए गए पृच्छाप्रश्न के लिए विभिन्न घटकों से आए परिणामों को जोड़कर वांछित परिणाम प्रदान करता है ।
9. इस खोजतन्त्र का समर्थन करने वाला संगणकीय परिवेश (कंप्यूटर परिवेश) के विभिन्न डेटा स्रोतों और निदर्शों की सहायता से बनाया गया है। अर्थशास्त्र के कुल 2688 पद्य अथवा गद्यों को सङ्कलित कर, एक डिजिटल दत्तांशनिधि निर्मित किया गया है । इसके अतिरिक्त, अर्थशास्त्र से निकाली गई अवधारणओं की संदर्भसहित एक सूची भी की तैयार गई है। रोमन लिपि के लिए एक लिप्यंतरण निदर्श भी विकसित किया गया। संक्षेप में, खोज प्रणाली एक उपयोगकर्ता-अनुकूल और इंटरैक्टिव मंच प्रदान करती है जो इस प्राचीन ग्रंथ से जानकारी संदर्भित करने और निकालने की प्रक्रिया को सुव्यवस्थित करती है । यह पारम्परिक ज्ञान प्रणालियों के साथ संगणकीय प्रविधि (कंप्यूटर प्रौद्योगिकी) के एकीकरण के लिए एक प्रमाणिक स्रोत है, जो विद्वानों और शोधार्थियों को पाठ के भीतर समाहित ज्ञान की खोज के लिए एक शक्तिशाली उपकरण प्रदान करता है। यह प्रणाली विभिन्न चरणों में कार्य करता है।

इसकी एक विशेषता यह है कि तन्त्र प्रयोक्ता द्वारा प्रदत्त लिपि में ही परिणाम प्रदान करता है। प्रयोक्ता प्रदत्त शब्द दो प्रकार से दे सकता है प्रथम पाठक्षेत्र में टंकित करके एवं अन्य पूर्व-निर्मित सूची में से किसी एक का चुनाव करके। अतः यह सर्वप्रथम प्रयोक्ता अन्तराफलक से प्राप्त शब्द कि लिपि का परीक्षण करता है। लिपि सत्यापन के पश्चात, लिपि की जानकारी के साथ शब्द अवधारणा विश्लेषक को भेजा जाता है। यदि प्रदत्त शब्द किसी भी अवधारणा से मिलान करता है तो उस अवधारणा से संबंधित जानकारी अर्थशास्त्र के डेटा संग्रह से निष्कासित करता है। यदि वह किसी अवधारणा से मेल नहीं खाता है तो सिस्टम उन श्लोकों की पूरी सूची प्रदान करता है, जिनमें उस विशेष शब्द का प्रयोग किया गया है। उपयोगकर्ता अवधारणा सूची के माध्यम से जिस अवधारणा का अध्ययन करना चाहता है, सम्पूर्ण सूची से उस विषय पर क्लिक करके, स्वचालित रूप से उस अवधारणा के अनुरूप श्लोक को प्रदर्शित किए जाएंगे। अंत में, परिणाम जनरेटर प्राप्त जानकारी को व्यवस्थित करता है व परिणाम को निर्दिष्ट प्रारूप में प्रदर्शित करने के लिए उपयोगकर्ता अंतराफलक (इंटरफ़ेस) को भेजता है। इसलिए यह प्रणाली अद्वितीय खोज तकनीकों और सूचना निष्कर्षण तकनीकों के आधार पर जानकारी प्राप्त करती है।

परिणाम विश्लेषण एवं परिचर्चा

डिजिटल अर्थशास्त्र खोजतन्त्र जो शैक्षणिक अनुसंधान के क्षेत्र में एक अभूतपूर्व प्रगति के रूप में विकसित किया गया है। यह तंत्र; विद्वानों के लिए प्राचीन भारतीय राजनीतिक विचार और विशेष रूप से अर्थशास्त्र में वर्णित, शासन की समृद्ध अवधारणाओं को गहराई से जाने के लिए एक अद्वितीय खोज प्रणाली है। वर्तमान डिजिटलीकरण के युग में, जहां सूचना पुनर्प्राप्ति एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है, वहीं यह तन्त्र एक प्रकाश स्तम्भ के रूप में उभरता है, जो इस शास्त्रीय पाठ[18]में अन्तर्निहित गहन अन्तर्दृष्टि तक पहुंचने, विश्लेषण करने और समझने के लिए एक अभिनव दृष्टिकोण प्रदान करता है। ऐतिहासिक संदर्भ के अतिरिक्त भी इसकी प्रासंगिकता अविरल बनी हुई है, जो शासन के लिए एक व्यापक मार्गदर्शिका के रूप में हमारे समक्ष प्रस्तुत है। डिजिटल अर्थशास्त्र खोजतन्त्र एक अनिवार्य उपकरण है, जो अतीत और वर्तमान के बीच एक सहज श्रृंखला के रूप में स्थित है।

तकनीकी आधार: यह अनुक्रमणतन्त्र अर्थशास्त्र के विशाल सामग्री भण्डार का उपयोग करने के लिए अत्याधुनिक प्रौद्योगिकियों का उपयोग करता है। ऑनलाइन अनुक्रमण और टैगिंग प्रविधियों के प्रयोग से अर्थशास्त्र में निहित अवधारणाओं की संपूर्ण सूचना प्रदान करता है। यह प्रणाली यह भी सुनिश्चित करती है कि शास्त्र में आने वाले विशिष्ट अवधारणाऔं, मुख्य शब्द (कीवर्ड) अथवा वाक्यांशों को सटीकता के साथ इंगित करें, जिससे त्वरित और सटीक संदर्भ प्राप्त हो सके।

1. उपयोगकर्तानुकूल अन्तराफलक डिजिटल अर्थशास्त्र अनुक्रमण एवं खोजतन्त्र का यूजर इण्टरफेस :(इण्टरफेस) प्रवेशयोग्यता अथवा प्रयोगकर्ता की अभिगम्यता को ध्यान में रखकर बनाया गया है। चाहे कोई एक अनुभवी शोधकर्ता हो या शास्त्रीय भारतीय राजनीतिक विचार की दुनिया में पहला कदम रखने वाला छात्र हो। यह प्रणाली विश्व के समस्त अध्येयताओं को अत्यन्त सरलता से समायोजित करती है। यह अन्तराफलक अनुसंधान आवश्यकताओं के एक वर्णपट्टिका को पूरा करते हुए संकेत शब्द, अवधारणा और वाक्यांश खोज की अनुमति देता है।
2. शैक्षिक निहितार्थशिक्षा के परिदृश्य में :, यह तन्त्र परिवर्तनकारी शिक्षा के लिए उत्प्रेरक के रूप में उभरता है। डिजिटल इंडिया पहल, साक्षर समाज की दृष्टि में महत्त्वपूर्ण योगदान देता है। शिक्षक इसे जटिल राजनीतिक सिद्धांतों को स्पष्ट करने के लिए एक शक्तिशाली संसाधन मानते हैं। डिजिटल माध्यम से छात्रों को प्राचीन भारत में शासन की सूक्ष्म समझ प्राप्त होती है। यह प्रणाली स्रोत सामग्री के साथ सक्रिय बद्धता को प्रोत्साहित करते हुए अन्वेषण की सुविधा प्रदान करती है।
3. डिजिटल भारत में योगदान समकालीन भारत :जैसेजैसे- स्वयं को एक डिजिटल महाशक्ति के रूप में स्थापित कर रहा है, डिजिटल अर्थशास्त्र जैसी प्रणालियाँ तेजी से डिजिटल इंडिया पहल के चरित्र का प्रतीक बन रही हैं। प्राचीन ग्रन्थों की जटिलताओं को सुलझाने के लिए डिजिटल प्रौद्योगिकी का उपयोग करके, यह न केवल सांस्कृतिक विरासत को संरक्षित करता है अपितु वैश्विक दर्शकों तक इसकी पहुंच भी सुनिश्चित करता है। यह तन्त्र डिजिटल रूप से समावेशी समाज की व्यापक दृष्टि के साथ संरेखित होकर, ज्ञान के लोकतन्त्रीकरण में योगदान देता है।
4. भावी संभावनाएँ एवं चुनौतियाँ ,मार्ग खोलता है। यह तन्त्र डिजिटल खोज तन्त्र भावी अर्थशास्त्र अनुसंधान के : शोधकर्ताओं को अज्ञात विषयों में गहन अध्ययन करने के लिए प्रेरित करता है, अतः पारम्परिक व्याख्याओं से परे बहुआयामी अनुसंधान के अन्वेषकों अन्वेष-ण की दृष्टि प्रदान करता है। यह तन्त्र अपनी सभी चुनौतियों का सामना करता है। शास्त्रीय भाषाओं की बारीकियों, प्राचीन राजनीतिक विचारों की प्रासङ्गिक पेचीदगियाँ और डिजिटल उपकरणों के निरंतर विकास के लिए नित्य सुधार की आवश्यकता बनी ही रहती है।

निष्कर्ष

अन्ततः कहा जा सकता है कि डिजिटल अर्थशास्त्र खोजतन्त्र के रूप में विकसित एक प्रबुद्ध प्रणाली है। यह पारंपरिक और प्रौद्योगिकी के सामंजस्यपूर्ण सहसंयोजन का प्रमाण है। यह शिक्षण के नए आयामों का मार्ग प्रशस्त करता है। इस प्रणाली का प्रारूप विकसित कर लिया गया है। दिल्ली विश्वविद्यालय के संस्कृत विभाग की वेबसाइट पर यह उपलब्ध है। भविष्य में, नारद स्मृति, याज्ञवल्क्य स्मृति, पारस्करगृह्यसूत्र आदि जैसे धर्मशास्त्र के अन्य प्रमुख पाठों

का भी डिजिटलीकरण करने की योजना है। इस प्रणाली का उपयोग करके इन स्मृतियों में वर्णित सभी अवधारणाओं को ऑनलाइन भी प्राप्त किया जा सकता है। इस प्रणाली के इनपुट-आउटपुट तरीकों को बहुभाषी (पंजाबी, संस्कृत, बंगाली, तेलुगु, तमिल, कन्नड़ आदि) बनाने की भी योजना है।

कृतज्ञताः यह शोधपत्र प्रतिष्ठित संस्थान (Institution of Eminence:IoE), दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली के संकाय वित्तपोषित अनुसंधान कार्यक्रम (Faculty Research Programme: FRP) के तहत वित्तपोषित (Ref. No./IoE/2023-24/12/FRP dated August 31, 2023) परियोजना का प्रतिफल है। लेखक प्रतिष्ठित संस्थान (Institution of Eminence: IoE), दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली के वित्तीय समर्थन के लिए अति आभारी हैं।

संदर्भ

1. R. L. Basu & R. K Sen, *Ancient Indian Economic Thought.* Rawat Publications.2008
2. R. Boesche, *The First Great Political Realist: Kautilya and His Arthashastra.* Lexington Books. 2002
3. Rangarajan, L. N. *The Arthashastra.* Penguin Books India.1992
4. D. Basu, Ethics of Kautilya. *In Ethics, Morality and Business: The Development of Modern Economic* Systems, 1, 105–124. 2021
5. P.Chandrasekaran, Kautilya: Politics, Ethics and Statecraft. 2006
6. A Kumar, The Structure and Principles of Public Organization in Kautilya's Arthashastra. *The Indian Journal of Political Science:*, 463–488. 2005.
7. Bisht, M. The Concept of 'Order' in Arthashastra: Re-engaging the Text. *South Asian Survey , 21* ((1–2)), 211–216. 2014
8. S. K. Sharma, Indian Idea of Good Governance: Revisiting Kautilya's Arthshastra. Dynamics of Public Administration , 17((1–2)), 8–19. 2005.
9. D. M. Prasad,. Politics and Ethics in Kautilya's Arthashastra. *The Indian Journal of Political Science, 39* (2), 240–49.1978
10. K.R.Aiyangar, Aspects of the Social and Political System of Manusmrti. Cosmo Publications. 2019.
11. A.Chousalkar, Political Philosophy of Arthashastra Tradition. The Indian Journal of Political Science, 42((1)), 54–66. 1981
12. M. P. Singh, Kautilya: Theory of State. In Indian Political Thought, 1. 2017
13. J. D. Anderson, Guidelines for Indexes and Related Information Retrieval Devices. Retrieved from " NISO Technical Report 2. NISO Press.: ttp://niso.kavi.com/publications/tr/tr02.pdf. 1997

14. N Balasubramanian, A.R. Diekema , A. R., & Goodrum. Analysis of User Image Descriptions and Automatic Image Indexing Vocabularies: An Exploratory Study. International Workshop on Multidisciplinary Image, Video, and Audio Retrieval and Minin. 2004

15. M. Liebig, Kauṭilya's Arthaśāstra: A Classic Text of Statecraft and an Untapped Political Science Resource. Heidelberg Papers in South Asian and Comparative Politics, 74, 2014

16. Anju, & S.Chandra, Sākhya-Yoga Darśana Paribhāṣā ḍeṭābesa evaṃ Onalāina khoja. Research Review: International Journal of Multidisciplinary, 3(1) 2018

17. Nigam, A, & Chandra, S. Digital Accessibility and Information Mining of Dharmaśāstric Knowledge Traditions. WILDRE-6 Workshop within the 13th Language Resources and Evaluation Conference. (2022).

18. M. Liebig, Kautilya's Relevance for India Today. India Quarterly, 69 ((2)), 99–116. 2013.

आरुषि निगम
शोध छात्रा, संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय
(*anigam@sanskrit.du.ac.in*)
अवधेश प्रताप सिंह
सहायक-आचार्य, संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय
(*apsingh@sanskrit.du.ac.in*,)
सुभाष चन्द् Corresponding Author एवं सह-आचार्य,
संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय,
(*schandra@sanskrit.du.ac.in*)

पत्रकारिता में कृत्रिम बुद्धिमत्ता की उपस्थिति और इससे जुड़ी नैतिक चुनौतियाँ और समाधान

डॉ. विनय कुमार राय

सारांशः

तेज गति के इंटरनेट, बहुउद्देश्यीय स्मार्टफोन, स्वास्थ्य क्षेत्र से जुड़े इलेक्ट्रॉनिक गैजेट्स, शिक्षा क्षेत्र में डिजिटल सेवाओं का बढ़ता उपयोग और वर्चुअल स्ट्रीमिंग जैसी आधुनिक तकनीकों ने आज के मानव समाज के आधुनिकीकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इसने जहां आज संचार और कनेक्टिविटी को जहां बहुत बढ़ा दिया है, वहीं इसके तौर तरीकों को भी बदल दिया है। इन्हीं उभरती हुई उन्नत तकनीक में से एक कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) है, जो वर्तमान समय में एक बड़ी परिवर्तनकारी शक्ति के रूप में उभरी है। आज पत्रकारिता के क्षेत्र में भी एआई की क्षमताओं का लाभ उठाया जा रहा है। एआई पत्रकारिता के क्षेत्र को कई रोमांचक तरीकों से बदल रहा है। जहां इससे जुड़ी कुछ नैतिक चुनौतियां भी हैं, जिसमें गोपनीयता, सुरक्षा और अन्य मुद्दे शामिल हैं, वहीं एआई से जुड़ी कुछ आशंकाएं भी हैं। जिसमें अनुचित खबरों का चयन और कवरेज हो सकता है। इसके अलावा एआई का उपयोग करते हुए कैसे पत्रकारिता की सुचिता बनी रहे इस बारे में भी विश्लेषण किया गया है।

मुख्य शब्दः *कृत्रिम बुद्धिमत्ता*, पत्रकारिता और तकनीक, पत्रकारिता, नैतिकता, गोपनीयता, निष्पक्षता, स्वचालन, पत्रकारिता में तकनीकी नवाचार

प्रस्तावना

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (कृत्रिम बुद्धिमता) बुद्धिमान मशीनों के अध्ययन और उनके विकास से जुड़ा है। मानव व्यवहार और उनके जैसी भावनात्मक व संज्ञानात्मक क्षमताओं वाली मशीनों और कंप्यूटर को विकसित करना ही एआई का उद्देश्य है। आसान शब्दों में कहें तो कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) कंप्यूटर विज्ञान की ही एक शाखा है, जो मशीनों और कंप्यूटर सिस्टम में मनुष्य जैसी बौद्धिक क्षमताएं प्रदान करने को लेकर काम कर रही है। इसी तरह एआई पत्रकारिता को कई महत्वपूर्ण तरीकों से बदल रहा है. एआई को अपनाकर, पत्रकार उच्च-स्तरीय सोच, रचनात्मकता और मानवीय भावनाओं पर ध्यान केंद्रित कर सकते हैं। साथ ही एआई पत्रकारिता में उपयोग होने वाले नियमित डेटा या जटिल डेटा कार्यों को सरल बनाने का कार्य भी कर रहा है। एक पत्रकार और एआई के इस तालमेल में पत्रकारिता की गुणवत्ता, दक्षता और प्रभाव को बढ़ाने की क्षमता है। एआई आज पत्रकारों को तमाम विषयों पर त्वरित शोध करने, डेटा का तेजी से विश्लेषण करने में मदद कर सकता है। पत्रकारिता के क्षेत्र से जुड़े एआई-संचालित उपकरण खबरों और रिपोर्ट के अलावा पूरा लेख ही तैयार कर सकते हैं, जिससे अधिक गहन रिपोर्टिंग के लिए पत्रकारों का समय बच जाता है।

उद्देश्यः डिजिटल मीडिया हो या इलेक्ट्रॉनिक या फिर प्रिंट ही क्यों न हो आज एआई की दस्तक मीडिया के हर रूप में हो चुकी है। इलेक्ट्रॉनिक मीडिया में तो अब एआई एंकरों का भी प्रवेश हो चुका है। एआई के कई सकारात्मक पहलू भी अब सामने आने लगे हैं।

वहीं इस शोध का मुख्य उद्देश्य पत्रकारिता के क्षेत्र में एआई के बढ़ते उपयोग की वजह से आने वाली नैतिक समस्याओं का विश्लेषण करते हुए समाधान हेतु सुझाव प्रदान करना है। ऐसे में निम्नलिखित बिन्दुओं पर खास तौर पर ध्यान केंद्रित किया गया है:

1. कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) को लेकर भरोसा और विश्वसनीयता
2. पारदर्शिता
3. प्रासंगिक सामग्री
4. नैतिक रूप से एआई से जुड़ी कुछ आशंकाएं

प्रक्रिया

यह शोध पत्र आनलाइन से लेकर ऑफलाईन और रिपोर्ट्स के अलावा अन्य माध्यमों के जरिए तैयार किया गया है। जिसमें तकनीक और पत्रकारिता को लेकर एक गुणात्मक दृष्टिकोण अपनाया गया है, पत्रकारिता में एआई के बढ़ते उपयोग के कारण इससे जुड़ी नैतिक चुनौतियां और अन्य पहलुओं का अवलोकन करना इस शोध का मुख्य उद्देश्य है। वहीं कुछ बिंदुओं पर विशेष तौर पर ध्यान भी दिया गया है।

1. कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) सिस्टम में विद्यमान पूर्वग्रहों
2. जानकारी के दुरुपयोग की आशंका
3. कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) से उत्पन्न नैतिक चिंताएँ और उनका समाधान

पत्रकारिता में कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई)

हालांकि, इन सब के बीच सवाल यह भी उठना है कि क्या कृत्रिम बुद्धिमत्ता पत्रकारिता की विश्वसनीयता बढ़ा सकता है? ऐसे में इस बात को समझने के लिए इसके विस्तार में जाना होगा। यदि स्पष्ट रूप से कहें तो यह कह सकते हैं कि हाँ, एआई कई तरीकों से पत्रकारिता की विश्वसनीयता बढ़ा सकता है, तो आइए उन तरीकों को समझते हैं।

अगर साफ शब्दों में कहें तो हम कह सकते हैं कि हाँ, एआई कई तरीकों से पत्रकारिता की विश्वसनीयता बढ़ा सकता है, तो ऐसे में आईये उन तरीकों के बारे में समझते हैं।

1. तथ्य-जांच: एआई उपकरण पत्रकारों को जानकारी को शीघ्रता से सत्यापित करने, सटीकता सुनिश्चित करने और गलत सूचना के खिलाफ लड़ने में मदद करते हैं। एआई खबरों से जुड़े तथ्यों और स्रोतों को तेजी से सत्यापित कर सकता है, जिससे पत्रकारों को अशुद्धियों को पहचानने व खबरों की रिपोर्टिंग की विश्वसनीयता बढ़ाने में मदद मिलती है। उन्नत एल्गोरिदम का उपयोग करके, एआई उपकरण तथ्य-जांच प्रक्रिया को बेहतर तरीके से सुव्यवस्थित करते हैं और ये सुनिश्चित करते हैं कि जनता तक पहुंचने वाली जानकारी सटीक व विश्वसनीय हो।

2. प्राथमिकताओं के अनुसार समाचार: एआई लोगों की व्यक्तिगत प्राथमिकताओं के अनुसार समाचार वितरण की एक उन्नत व्यवस्था को तैयार कर सकता है, यह सुनिश्चित करते हुए कि दर्शकों को प्रासंगिक और विश्वसनीय जानकारी प्राप्त हो, जो उनकी रुचियों के अनुरूप हो। बड़े पैमाने पर डेटा का विश्लेषण करके, एआई एल्गोरिदम उन समाचार लेखों का चयन करने में सक्षम है, जो दर्शकों के एक विशेष वर्ग के लिए प्रासंगिक हैं, जिससे उपयोगकर्ताओं को उनकी रुचि बढ़ाने वाली सामग्री खोजने में सहायता मिलती है।

3. पूर्वग्रहों का पता लगाना: एआई भाषा के उपयोग और अपने उपकरणों की सहायता से खबरों की जांच करके उनसे जुड़े पूर्वग्रहों को पहचानने और उसे कम करने में सहायता कर सकता है। यह विश्लेषण खबरों के अधिक न्यायसंगत दृष्टिकोण को बढ़ावा देता है, यह सुनिश्चित करता है कि खबरों को प्रत्येक एंगल से समझने के लिए उनमें विविध दृष्टिकोण शामिल हैं और रिपोर्टिंग निष्पक्ष और अधिक संतुलित हैं।

4. खबरों की पारदर्शिता को बढ़ावा: एआई खबरों के निर्माण और सोर्सिंग की समझ को बढ़ाता है, यहां तक की यह संपादकीय प्रक्रिया में पारदर्शिता को बढ़ावा देता है। यह तकनीक दर्शकों को समझने की अनुमति देती है कि खबरें कैसे विकसित की जाती हैं, जिससे उनके द्वारा उपभोग की जाने वाली सामग्री में स्पष्टता और विश्वसनीयता सुनिश्चित होती है।

एआई पत्रकारों को मदद करके संभावित रूप से पत्रकारिता में सुधार कर सकता है ताकि वे कहानी कहने और खोजी कार्यों पर ध्यान केंद्रित कर सकें। एआई खबरों के प्रति लोगों की विश्वसनीयता बढ़ाने के अवसर प्रदान करता है, नैतिक मानकों को बनाए रखने को सुनिश्चित करने के लिए इसे सावधानीपूर्वक कार्यान्वयन की भी आवश्यकता होती है।

कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) से जुड़ी कुछ आशंकाएं और पूर्वग्रह

हालांकि, नैतिक रूप से एआई से जुड़ी कुछ आशंकाएं भी हैं। जैसे कि एआई के माध्यम से निर्णय लेने में पूर्वाग्रह, व्यक्तिगत जानकारी के दुरूपयोग की आशंका के अलावा गोपनीयता और सुरक्षा से जुड़े अन्य मुद्दे, क्योंकि आखिर में है तो यह मशीनी बुद्धिमत्ता ही, जो कि मानव द्वारा निर्मित है, ऐसे में यह जानना जरूरी है कि न्यूज़ रूम में एआई से कौन सी नैतिक चिंताएँ उत्पन्न हो सकती हैं?

इसके अलावा एआई सिस्टम मौजूदा पूर्वाग्रहों को लेकर पत्रकार को आशंकित कर सकता है, जिसमें अनुचित खबरों का चयन और कवरेज हो सकता है, जो खबरों की प्राथमिकता और उनके विषय के चित्रण और प्रस्तुतीकरण को प्रभावित करता है। यहाँ तक कि इन आशंकाओं को इस बात से बल मिलता है कि यदि निगरानी न की जाए तो वे गलत सूचना भी फैला सकते हैं, और उनके अपारदर्शी एल्गोरिदम जनता के विश्वास को खत्म कर सकते हैं।

नौकरी विस्थापन के बारे में चिंता

स्वचालन पत्रकारिता में एआई नौकरी विस्थापन के बारे में चिंता पैदा करता है और एआई-जनित सामग्री में त्रुटियों के लिए जवाबदेही को जटिल बनाता है। इसके अतिरिक्त, एआई डीपफेक बना सकता है, जिससे नैतिक

पत्रकारिता के लिए जोखिम पैदा हो सकता है। हाल ही में डीपफेक को लेकर कुछ बड़े लोगों से जुड़ी खबरें मीडिया में छाई रहीं। यह चीज इस तरफ से इशारा करती है कि एआई पर अत्यधिक निर्भरता मानवीय अंतर्दृष्टि को कम करके पत्रकारिता की गुणवत्ता को कम कर सकती है। इन मुद्दों को सुलझाने के लिए मजबूत नीति विकास और पत्रकारिता में नैतिक मानकों के प्रति प्रतिबद्धता की आवश्यकता है।

कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) से सामग्री स्वचालन

एआई अपनी उन्नत तकनीक के कारण सामग्री स्वचालन मे भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। एआई समाचार और सूचना को कुशलतापूर्वक खबरों के रूप में परिवर्तित करता है और उसके पसंदीदा पाठकों या दर्शकों तक वितरित करना संभव बनाता है, यह सामग्री स्वचालन में एक बड़ी भूमिका निभाता है। इसके कार्य के कुछ महत्वपूर्ण पहलू यहां दिए गए हैं:

1. स्वचालित रिपोर्टिंग: मानव सहायता के बिना, एआई वित्तीय रिपोर्ट, व्यापार से जुड़ी खबरों या किसी भी खेल के स्कोर जैसे संरचित डेटा से नियत समय पर लेख या वीडियो जैसी सामग्री बना सकता है।

2. वैयक्तिकरण: एआई उपयोगकर्ता के व्यवहार और रुचियों के आधार पर सामग्री अनुशंसाओं को अनुकूलित करके पाठक अनुभव और जुड़ाव में सुधार कर सकता है।

3. सोशल मीडिया प्रबंधन: दर्शकों या पाठकों के डेटा का उपयोग करके, एआई समाधान सोशल मीडिया प्लेटफार्मों पर सामग्री के बेहतर ढंग से प्रस्तुतीकरण और साझाकरण को स्वचालित करके इसमें लगने वाले समय और श्रम को बचा सकता है।

4. भाषा अनुवाद: एआई पत्रकारों द्वारा तैयार सामग्री को कई भाषाओं में स्वचालित रूप से अनुवाद करके, विश्व के विविध भाषाई देशों में उनका प्रसार कर सकता है। जिससे की खबरों की भाषाई बाध्यता नहीं रह जाती। हालांकि, यह समझना भी जरूरी है कि अनुवाद की गुणवत्ता इस बात को प्रभावित करती है कि दर्शक या पाठक एआई द्वारा तैयार खबरों को कैसे देखते हैं?

एआई-जनित समाचारों के प्रति दर्शकों की धारणाएँ: विश्वास, गुणवत्ता और पारदर्शिता की चुनौतियाँ

एआई-जनित समाचार को दर्शकों द्वारा कई कारणों से अलग-अलग रूप में देखा जाता है, जिनमें निम्नलिखित शामिल हैं:

1. विश्वास और विश्वसनीयता: गलत सूचना और मानवीय निगरानी की कमी के कारण AI द्वारा निर्मित समाचारों को संदेह की दृष्टि से देखा जाता है, तथा कुछ दर्शक कृत्रिम बुद्धिमत्ता द्वारा निर्मित सामग्री की सटीकता और विश्वसनीयता के बारे में संशय में रहते हैं।

2. दर्शकों और पाठकों के बीच स्वीकार्यता: आज के दर्शक या पाठक अधिक तकनीक-प्रेमी हैं, ऐसे में युवा दर्शक एआई-जनित समाचारों के प्रति अधिक ग्रहणशील हो सकते हैं, वे इसे एक उपकरण के रूप में देखते हैं, जो ज्ञान को अधिक सुलभ बनाता है।

3. गुणवत्ता संबंधी मुद्दे: कई लोग इस बात से भी चिंतित हैं कि एआई द्वारा उत्पादित समाचार, पत्रकारों द्वारा उत्पादित समाचारों की तरह गहराई से, सूक्ष्मता से या आलोचनात्मक रूप से विश्लेषित नहीं होते हैं।

4. पारदर्शिता: आज के समय में समाचार निर्माण के पीछे की प्रक्रियाओं के बारे में दर्शकों के लिए स्पष्टता आवश्यक है। एआई की भागीदारी के बारे में पारदर्शी होने से, मीडिया घराने अपने उपभोक्ताओं का भरोसा बढ़ा सकते हैं और उनके संदेह को कम कर सकते हैं।

5. प्रासंगिक सामग्री: कई उपयोगकर्ता एआई द्वारा संचालित अनुरूप समाचार सुझावों को महत्व देते हैं, क्योंकि यह उन्हें प्रासंगिक सामग्री ढूंढने में सक्षम बनाती हैं;

6. **विश्वसनीयता:** पत्रकारिता में पूर्वग्रह से संबंधित मुद्दे और एआई के नैतिक निहितार्थ, एआई द्वारा उत्पादित समाचारों की विश्वसनीयता के बारे में दर्शकों की धारणा को प्रभावित कर सकते हैं।

कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) के सकारात्मक पहलू

समाज से लेकर तकनीक तक में समय-समय पर परिवर्तन होते रहते हैं। वर्तमान समय में वैज्ञानिकों और शोधकर्ताओं की मदद से तकनीक का विकास बहुत तेज़ गति से हो रहा है। जिससे कि आज हमारे रोजमर्रा के जीवन में भी इसका प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। कई तरह की उन्नत नई तकनीकों ने आज समाज और लोगों के उनके विभिन्न कार्यक्षेत्रों में गुणात्मक सुधार और गति प्रदान करने का भी काम किया है।

सामग्री निर्माण: कृत्रिम बुद्धिमत्ता तेजी से; समाचार लेख, कहानियां, रिपोर्ट और समाचार सारांश जल्दी से बना सकता है, विशेष रूप से पत्रकारिता के क्षेत्र में डेटा-केंद्रित विषयों के लिए यह बहुत की कारगर सिद्ध हो रहा है। एआई की यह क्षमता पत्रकारों को पत्रकारिता और खबरों की गुणवत्ता को बढ़ाते हुए, अधिक जटिल खबरों और खोजी रिपोर्टिंग के लिए उनके प्रयासों को और अधिक सक्षम बनाती है।

2. वैयक्तिकरण: कृत्रिम बुद्धिमत्ता एल्गोरिदम पाठक या दर्शक की प्राथमिकताओं का आंकलन करता है, जिससे मीडिया हाउस को अपने प्रत्येक उपयोगकर्ता के लिए सामग्री को उनके अनुकूल बनाने में सहायता मिलती है। एआई व्यक्तिगत रुचियों से मेल खाने वाले प्रासंगिक लेख प्रदान करके उपयोगकर्ता की उनमें जिज्ञासा और सहभागिता बढ़ाता है और लेखों के प्रति उन्हें संतुष्टि भी प्रदान करता है। वहीं डेटा का विश्लेषण करके, एआई यह सुनिश्चित करता है कि उपयोगकर्ताओं को एक बेहतर समाचार अनुभव प्राप्त हो।

3. डेटा विश्लेषण: एआई, समाचार के रुझानों और तथ्यों को अधिक सटीकता के साथ पहचानने के लिए बड़े पैमाने के डेटासेट को कुशलतापूर्वक संसाधित कर सकता है। जिससे आज के युवा पत्रकारों की खोजी पत्रकारिता में रुचि बढ़ सकती है। कई मामलों में एआई उपकरण बिना मानव विश्लेषकों वाली खबरों के पैटर्न की पहचान करके पत्रकारों को छिपी हुई कहानियों को उजागर करने और उनका गहन विश्लेषण प्रदान करने के लिए सशक्त बनाते हैं। एआई की यह क्षमता न केवल खबरों के जांच प्रक्रिया को पूरी तरह सुव्यवस्थित करती है, बल्कि रिपोर्टिंग की गुणवत्ता को भी बढ़ाती है, जिससे एआई आधुनिक पत्रकारिता में अपना महत्वपूर्ण योगदान देती है।

कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) आधारित पत्रकारिता से जुड़े नैतिक समाधान

एआई प्रणाली को विश्वसनीय बनाने और इसमें पत्रकारिता की सुचिता का ध्यान रखते हुए विशेष तत्वों पर ध्यान देने की जरूरत है।

1. **गोपनीयता नीति का पालन आवश्यक -** सबसे पहले एआई से जुड़ी जो समस्या है वह है गोपनीयता को लेकर। ऐसे में गोपनीयता नीति का सख्ती से पालन होना चाहिए। वहीं पत्रकारिता में डेटा सुरक्षा को लेकर कानून भी बनाने की जरूरत है
2. **पूर्वाग्रह को दूर करने के उपाय -** इसके लिए यह आवश्यक है की एआई मॉडल से तैयार खबरों में एआई से प्राप्त संतुलित डेटा का उपयोग किया जाए, जिससे कि खबरों का उच्चतम पैमाना बन रहे और किसी तरह का पूर्वाग्रह ना रहे।
3. **खबरों में सत्यता और जवाब देही का हो पालन -** जिस तरह पत्रकार के लिए निश्पक्षता जरूरी है उसी तरह एआई आधारित खबरों को निष्पक्षता के सिद्धांतों के अनुसार निर्मित किया जाना चाहिए। इसे लेकर जवाब देही भी तय करनी चाहिए.
4. **पत्रकारों को मिले प्रशिक्षण -** चूंकि एआई तकनीक अभी नई है और पत्रकारिता में इसका उपयोग शुरू हो चुका है, ऐसे में जरूरी है कि पत्रकारों को इसके उपयोग हेतु विशेष तौर पर प्रशिक्षित किया जाए.

जिम्मेदार एआई नैतिक और कानूनी दोनों नजरियों से कृत्रिम बुद्धिमत्ता को विकसित करने और उपयोग करने का एक तरीका है। इसका उद्देशः एआई को सुरक्षित, भरोसेमंद और नैतिक तरीके से नियोजित करना है। एआई का जिम्मेदारी से उपयोग करने से पत्रकारिता के क्षेत्र में पारदर्शिता बढ़ेगी, साथ ही एआई पूर्वाग्रह जैसी आशंकाओं को कम करने में मदद मिलेगी।

निष्कर्ष-

आज कृत्रिम बुद्धिमत्ता स्वास्थ्य सेवाओं और वित्त से लेकर मनोरंजन, विभिन्न अनुसंधानों और अन्य क्षेत्रों को एक नया आकार दे रही है। ऐसे में मानव जीवन में प्रगति के लिए एआई को अपनाने के सन्दर्भ में यह नई खोज की यात्रा शुरू करने जैसा कहा जा सकता है। जो अभूतपूर्व तरीकों से उद्योग, व्यवसाय और मीडिया संस्थानों के अलावा देश दुनिया के समाजों को एक नया रूप दे रही है। एआई को लेकर संक्षेप में कहे तो धरातल पर होने वाली चीज और मानवीय धारणाएँ काफी भिन्न होती हैं, ऐसे में तकनीक के प्रति विश्वास कायम करने के लिए समाचार संगठनों को भी अभी और अधिक कार्य करने की आवश्यकता हो सकती है। एआई से जुड़ी नैतिक आशंकाओं को दूर करने के साथ साथ-साथ इसके जरिए तैयार की जाने वाली खबरों की सत्यता और पारदर्शिता पर भी विशेष नजर रखने की जरूरत है। इसके अलावा इस नई तकनीक को लेकर प्रशिक्षण पर भी विशेष ध्यान देने की जरूरत है, ताकि खबरों की गुणवत्ता उच्चतम बनी रहे। एआई से जुड़ी नैतिक आशंकाओं को दूर करने के साथ-साथ इसके जरिए तैयार की जाने वाली खबरों की सत्यता और पारदर्शिता पर भी विशेष नजर रखने की जरूरत है। इसके अलावा इस नई तकनीक को लेकर प्रशिक्षण पर भी विशेष ध्यान देने की जरूरत है, ताकि खबरों की गुणवत्ता उच्चतम बनी रहे।

संदर्भ:

1. शर्मा,डॉ. सुनील कुमार (2024),आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस: एक अध्ययन, वाणी प्रकाशन दिल्ली।
2. कुमार, आर. (2020), एथिक्स इन एआई-ड्रिवन जर्नलिज्म: चैलेंजेज एंड सॉल्यूशन्स,एशियन जर्नल ऑफ मीडिया एथिक्स।
3. बिल्डिंग अ रिस्पॉन्सिबल एआई: हाउ टू मैनेज द एआई एथिक्स डिबेट। (n.d.). आईएसओ। https://www.iso.org/artificial-intelligence/responsible-ai-ethics
4. जैक्सन, एम. (2022), प्राइवेसी एंड एआई इन मीडिया: नैविगेटिंग डेटा कंसर्न्स, जर्नल ऑफ डिजिटल प्राइवेसी, 10 (1), 22–35।

डॉ. विनय कुमार राय

सहायक प्राध्यापक,पत्रकारिता विभाग,

कालिंदी कॉलेज,दिल्ली विश्वविद्यालय

विद्यालयी शिक्षा में राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के क्रियान्वयन हेतु नवाचारी प्रयास

अनामिका यादव

डॉ. सरिता चौधरी

सारांश

शिक्षा एक उद्देश्यपूर्ण प्रक्रिया है जिससे मनुष्य की अंतर्निहित शक्तियों के विकास के साथ-साथ उसके ज्ञान एवं कौशल में वृद्धि होती है। यह व्यक्ति के सर्वांगीण विकास से लेकर समग्र समाज को आकार देने तथा उसमें सुधारने में परिवर्तनकारी भूमिका का निर्वहन करती है। शिक्षा के माध्यम से, बालक में व्यापक दृष्टिकोण, समस्या समाधान, आलोचनात्मक सोच, संचार कौशल और निर्णय लेने की क्षमता विकसित होती है। यह सामाजिक न्याय, सद्भाव और शांति को बढ़ावा देकर एक ज्ञानवान, सशक्त और समृद्ध समाज का निर्माण करती है एवं मनुष्य के व्यक्तित्व एवं चरित्र का निर्माण कर उसे अपने अधिकारों और कर्तव्यों के प्रति जागरूक बनाती है। शिक्षा के महत्व को देखते हुए समय-समय पर विभिन्न शिक्षा नीतियों का निर्माण एवं पहले से निर्मित नीतियों में आवश्यक सुधार किए जाते रहें हैं। इसी क्रम में राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 को एक परिवर्तनकारी नीति के रूप में सबके समक्ष प्रस्तुत की गई। यह भारतीय ज्ञान परंपरा, संस्कृति और मूल्य प्रणाली को अपने में समाविष्ट करते हुए 21वीं सदी की शिक्षा के आकांक्षात्मक लक्ष्यों को प्रस्तुत करती है। प्रस्तुत शोध आलेख राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 द्वारा प्रस्तावित आवश्यक सुधार एवं नए लक्ष्यों पर ध्यान आकर्षित करते हुए इसके क्रियान्वयन हेतु अपनाई जा रही रचनात्मक एवं **नवीन पहलों पर** *केंद्रित है।*

मुख्य शब्द: नवाचारी पहल, दीक्षा, पीएम श्री स्कूल, ई विद्या, प्रस्तावना

भारत जैसे **विविधतापूर्ण** देश में सभी की **शैक्षिक** आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए नीति निर्माताओं द्वारा आवश्यकतानुसार समय-समय पर शिक्षा नीति में बड़े सुधार एवं बदलाव किए जाते रहें हैं। इसी क्रम में राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1968), राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) **के बाद भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय द्वारा राष्ट्रीय शिक्षा नीति (2020) प्रस्तुत की गई।** जिसमें प्राथमिक स्तर से लेकर उच्च शिक्षा स्तर तक, स्थानीय ज्ञान से लेकर वैश्विक ज्ञान, व्यावसायिक शिक्षा से लेकर कौशल विकास सभी पहलुओं पर ध्यान देते हुए नवाचारों और प्रयोगों को बड़े बदलावों से जोड़ने की बात कही गई है।। सरकार द्वारा राष्ट्रीय शिक्षा नीति (2020) के कार्यान्वयन के लिए अनेक पहलें की गई हैं। 29 जुलाई 2024 को राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने अपने 4 वर्ष पूर्ण किए। इस संदर्भ में प्रस्तुत शोध पत्र, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के क्रियान्वयन हेतु सरकार द्वारा अब तक के किए गए कुछ प्रमुख प्रयासों पर केंद्रित है। जिनका विवरण निम्नानुसार है:–

विद्यालयी शिक्षा के क्रियान्वयन हेतु सरकारी पहल

1. विद्यालयों के उन्नयन के लिए 7 सितंबर 2022 को पीएम श्री (प्रधानमंत्री स्कूल्स फॉर राइजिंग इंडिया) योजना आरंभ की गई। जिसके अंतर्गत कुल 14,597 विद्यालयों को आदर्श विद्यालय के रूप मे विकसित करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है। पीएम श्री विद्यालय का उद्देश्य प्रत्येक छात्र हितों को सुनिश्चित करते

हुए समावेशी, सुरक्षित और समृद्ध शैक्षणिक वातावरण प्रदान करना, सीखने के लिए विविध अनुभव प्रदान करने के साथ-साथ अच्छे भौतिक बुनियादी ढांचे एवं उपयुक्त संसाधनों तक उनकी पहुँच सुनिश्चित करना है।[1] इस पहल को सफल बनाने हेतु पहली कड़ी के रूप में केंद्रीय विद्यालय संगठन (केवीएस) एवं नवोदय विद्यालय संगठन (एनवीएस) के साथ 27 राज्यों एवं केंद्र शासित प्रदेशों में 6207 पीएम श्री विद्यालयों को 630.11 करोड़ रुपये जारी किए गए हैं।[2]

2. ई-जादुई पिटारा राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद एवं भारत सरकार द्वारा आरंभ किया गया मोबाइल ऐप है। इसमें खिलौने, खेल, पहेलियाँ, कठपुतलियाँ, पोस्टर, फ़्लैशकार्ड, कहानी कार्ड, छात्रों के लिए गतिविधि-आधारित पुस्तकें और शिक्षकों के लिए हैंडबुक शामिल हैं, जो किसी भी स्कूल में बुनियादी स्तर के लिए आवश्यक हैं।[3]

3. समग्र शिक्षा योजना, प्री-स्कूल से लेकर कक्षा 12 तक विद्यालयी शिक्षा क्षेत्र के लिए एक व्यापक कार्यक्रम है। इस योजना का उद्देश्य सभी बच्चों को समान और समावेशी कक्षा के परिवेश के साथ गुणवत्तापूर्ण शिक्षा तक पहुँच सुनिश्चित करना है। इसमें उनकी विविध पृष्ठभूमि, बहुभाषी आवश्यकताओं, विभिन्न शैक्षणिक क्षमताओं का ध्यान रखा जाए और उन्हें सीखने की प्रक्रिया में सक्रिय भागीदार बनाया जाए।[4]

4. पीएम पोषण शक्ति निर्माण योजना को भी एनईपी 2020 की सिफारिश के साथ जोड़ा गया है। आर्थिक मामलों की मंत्रिमंडलीय समिति (सीसीईए) ने 2021-22 से 2025-26 तक सरकारी और सरकारी सहायता प्राप्त विद्यालयों में एक बार गर्म एवं पका हुआ भोजन उपलब्ध कराने के लिए पीएम पोषण शक्ति निर्माण योजना को मंजूरी दी है।[5] पीएम पोषण शक्ति निर्माण योजना का मुख्य उद्देश्य भूख और कुपोषण को दूर करना, स्कूल में नामांकन और उपस्थिति में वृद्धि करना, जातियों के बीच समाजीकरण में सुधार करना और विशेष रूप से महिलाओं को जमीनी स्तर पर रोजगार प्रदान करना है।

5. समझ और संख्यात्मकता के साथ पढ़ने में प्रवीणता के लिए राष्ट्रीय पहल (निपुण भारत) को शिक्षा मंत्रालय द्वारा 5 जुलाई, 2021 को लागू किया गया। ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि देश का प्रत्येक बच्चा सत्र 2026-27 तक ग्रेड 3 के अंत तक आवश्यक रूप से बुनियादी साक्षरता और अंकगणित में दक्षता प्राप्त कर ले।[6]

6. विद्या-प्रवेश कक्षा 1 के बच्चों के लिए खेल-आधारित विद्यालय तैयारी मॉड्यूल है। जिसका उद्देश्य कक्षा 1 के बच्चों के लिए अनुकूल, आनंदमय और तनाव-मुक्त शैक्षिक वातावरण तैयार करना है जो कि विद्यार्थियों को आनंद, सुरक्षा और भावनात्मक सहयोग प्रदान करने के लिए कार्य करता है।[7]

7. डिजिटल/ऑनलाइन/ऑन-एयर शिक्षा के लिए त्कालीन वित्त मंत्री (भारत सरकार) श्रीमती निर्मला सीतारमण ने विद्यार्थियों के लिए पीएम ई-विद्या कार्यक्रम की घोषणा की है। इस कार्यक्रम का उद्देश्य मल्टी-मॉडल एक्सेसिबिलिटी- टेलीविज़न, रेडियो, दीक्षा ऐप के माध्यम से देश भर में 260 मिलियन से ज़्यादा विद्यार्थियों और लगभग 10 मिलियन अध्यापकों को डिजिटल शिक्षा प्रदान करना था। पीएम ई-विद्या का

प्रमुख घटक एक-कक्षा के लिए एक-चैनल के अंतर्गत कक्षा 1-12 के लिए 12 पीएम ई-विद्या डीटीएच टीवी चैनल को आरंभ किया गया है। पीएम ई-विद्या कार्यक्रम के अंतर्गत इन 200 डीटीएच चैनलों को 09 मार्च 2024 को माननीय शिक्षा मंत्री श्री धर्मेंद्र प्रधान द्वारा देश को समर्पित किया गया।[8]

8. दीक्षा (DIKSHA: डिजिटल इन्फ्रास्ट्रक्चर फॉर नॉलेज शेयरिंग/ज्ञान साझा करने के लिए डिजिटल अवसंरचना) वन नेशन वन डिजिटल प्लेटफॉर्म की टैग लाइन के साथ विद्यालयी शिक्षा के लिए एक राष्ट्रीय मंच है। भारत के तत्कालीन उपराष्ट्रपति श्री एम. वेंकैया नायडू द्वारा 2017 में लॉन्च किए गए दीक्षा प्लेटफॉर्म का लक्ष्य प्रौद्योगिकी और नवाचार का लाभ उठाकर शिक्षा प्रदान करने के तरीके को बदलना है। वर्तमान में संविधान की अनुसूची में सम्मिलित 22 भाषाओं तथा अन्य भारतीय एवं विदेशी भाषाओं में भी शिक्षण सामग्री उपलब्ध है।[9]
9. स्कूल शिक्षा और साक्षरता विभाग, शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा समावेशन की ओर एक और कदम बढ़ाने हेतु **प्रशस्त** योजना 6 सितंबर 2022 को आरंभ किया गया। इस योजना का मुख्य उद्देश्य नियमित अध्यापकों और विशेष अध्यापकों की भागीदारी के माध्यम से दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकार (RPwD) अधिनियम 2016 में मान्यता प्राप्त 21 विकलांगताओं के लिए स्कूल-स्तरीय स्क्रीनिंग की सुविधा प्रदान करना है। प्रशस्त स्क्रीनिंग पुस्तिका, फ्लिप बुक और ई बुक प्रारूप में उपलब्ध है। प्रशस्त मोबाइल ऐप 20 भाषाओं में उपलब्ध है। जिससे अधिक से अधिक लोग इस योजना का लाभ उठा सकें।[10]
10. फाउंडेशनल स्टेज के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा में बड़े परिवर्तन किए गए। जिसमें अध्यापकों को जिम्मेदारी सौंपी गई कि वे विद्यार्थियों के समग्र विकास हेतु पंचकोश की शिक्षा के साथ-साथ 3 से 8 वर्ष के आयु के बच्चों के लिए रचनात्मक शिक्षण विधियों को सम्मिलित करते हुए शिक्षण-अधिगम की प्रक्रिया को पूर्ण करें।[11]

11. विद्यालयी शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा में परिवर्तन करते हुए विद्यालय प्रमुखों और अध्यापकों की समग्र उन्नति के लिए राष्ट्रीय पहल (निष्ठा) 1.0 (प्राथमिक स्तर), 2.0 (माध्यमिक स्तर), 3.0 (निपुण भारत) एवं 4.0 (अर्ली चाइल्ड्हुड केयर एंड एजुकेशन) द्वारा विद्यालयी शिक्षा के विभिन्न चरणों के लिए एक एकीकृत अध्यापक प्रशिक्षण कार्यक्रम को लागू किया गया। जिसमें अध्यापक छात्रों को समझ के साथ पढ़ना, संख्या माप, तर्क को समझना, स्वतंत्र रूप से समझ के साथ लिखना एवं समस्या का समाधान करने में आत्मनिर्भर बनाने का प्रयास करते हैं।[12]

12. इसी क्रम में राष्ट्रीय मूल्यांकन केंद्र, परख (समग्र विकास के लिए ज्ञान का प्रदर्शन मूल्यांकन, समीक्षा और विश्लेषण) की स्थापना की गई जोकि राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में सुझाए गए मानदंडों, मानकों, दिशा-निर्देशों को निर्धारित करने और विद्यार्थियों के मूल्यांकन से संबंधित गतिविधियों को लागू करने का प्रयास करता है। परख, विद्यार्थियों द्वारा अर्जित अधिगम परिणामों और 21वीं सदी के जीवन कौशल के स्व-मूल्यांकन के लिए एक मंच प्रदान करके शिक्षाविदों और उद्योग के मध्य संबंध मजबूत करने की एक पहल है। ताकि वैश्विक प्रतिस्पर्धा सुनिश्चित की जा सके।

13. विद्यालयी बस्तों के भार को कम करने पर ध्यान केंद्रित करते हुए विद्यालयी बस्तों के वजन संबंधी नई नीति राज्यों/केंद्र शासित प्रदेशों में संचारित की गई है। विद्यालय बैग नीति, 2020 के मुताबिक स्कूली विद्यार्थियों का बैग उनके शरीर के वजन के 10 फीसद से ज्यादा नहीं होना चाहिए, साथ ही पूर्व-प्राथमिक कक्षाओं में पढ़ने वाले विद्यार्थियों के लिए विद्यालय बैग की परिपाटी खत्म होनी चाहिए। इसके मुताबिक पहली और दूसरी कक्षा के बच्चों के स्कूली बस्ते 1.6 से 2.2 किलोग्राम, तीसरी से पांचवीं के लिए 1.7 से 2.5 किग्रा, छठी और सातवीं के लिए 2 से 3 किग्रा, आठवीं के लिए 2.5 से 4 किग्रा और नौवीं एवं दसवीं के लिए 2.5 से 4.5 किग्रा वजन के होंगे। वहीं, 11वीं और 12वीं क्लास के बच्चों के बस्ते न्यूनतम 3.5 किग्रा और अधिकतम 5 किग्रा के होंगे।[13]

14. सभी के लिए शिक्षा (पूर्व में वयस्क शिक्षा के रूप में जाना जाता है) के सभी पहलुओं को सम्मिलित करने के लिए वित्त वर्ष 2022-2027 की अवधि के लिए एक नई केंद्र प्रायोजित योजना "उल्लास" को भारत सरकार द्वारा मंजूरी दी है। जिसके अंतर्गत संसाधनों तक पहुंच को सुनिश्चित करने के लिए, वयस्क शिक्षा के पूरे दायरे को सम्मिलित करने वाले ऑनलाइन मॉड्यूल पेश किए जाएंगे। इस योजना का उद्देश्य न केवल आधारभूत साक्षरता और संख्यात्मकता प्रदान करना है बल्कि अन्य घटकों को भी सम्मिलित करना है जो 21वीं सदी के नागरिकों के लिए आवश्यक हैं जैसे महत्वपूर्ण जीवन कौशल (वित्तीय साक्षरता, डिजिटल साक्षरता, वाणिज्यिक कौशल, स्वास्थ्य देखभाल और जागरूकता, बाल देखभाल, शिक्षा और परिवार कल्याण सहित); व्यावसायिक कौशल विकास (स्थानीय रोजगार प्राप्त करने की दृष्टि से); बुनियादी शिक्षा (प्रारंभिक, मध्य और माध्यमिक स्तर की समतुल्यता सहित) सतत शिक्षा (कला, विज्ञान, प्रौद्योगिकी, संस्कृति, खेल, मनोरंजन में समग्र वयस्क शिक्षा पाठ्यक्रमों के साथ-साथ स्थानीय शिक्षार्थियों के लिए रुचि या उपयोग के अन्य विषय, जैसे महत्वपूर्ण जीवन कौशल पर अधिक उन्नत सामग्री सहित) आदि को इस योजना के माध्यम से विकसित करने का प्रयास है।[14]

15. उत्कृष्ट पेशेवरों का एक बड़ा पूल बनाने के लिए राष्ट्रीय मेंटरिंग मिशन (एनएमएम) भी शुरू किया गया है, जो विद्यालयी अध्यापकों को सलाह देने के लिए तत्पर है। एनएमएम को 30 केंद्रीय विद्यालयों में शुरू किया गया है। इसके अतिरिक्त, पूरे देश में सामुदायिक और निजी क्षेत्र की भागीदारी के माध्यम से सरकारी एवं सरकारी सहायता प्राप्त विद्यालयों को अधिक मजबूती प्रदान करने के उद्देश्य से विद्यांजलि नामक एक विद्यालय स्वयंसेवक प्रबंधन कार्यक्रम शुरू किया गया है। अब तक 6,71,512 सरकारी और सरकारी सहायता प्राप्त विद्यालयों ने विद्यांजलि पोर्टल पर पंजीकरण किया है और 4,43,539 स्वयंसेवकों ने अपना पंजीकरण करवाया है।

16. राष्ट्रीय विद्या समीक्षा केंद्र (आरवीएसके) का उद्देश्य नीति निर्माताओं को वास्तविक समय या लगभग वास्तविक समय के शैक्षिक आंकड़ों और विश्लेषण से युक्त करके शैक्षिक पारिस्थितिकी तंत्र में उत्प्रेरक के रूप में कार्य करना है, जिससे आंकड़ों के आधार पर नीति संबंधित निर्णय लेने में सुविधा हो। सीआईईटी, एनसीईआरटी में विद्या समीक्षा केंद्र को राष्ट्रीय विद्या समीक्षा केंद्र के लिए नोडल संगठन के रूप में नामित

किया गया है और इसका उद्घाटन 9 मार्च, 2024 को किया गया था। आरवीएसके ने 6ए एजुकेशनल डेटा कैप्चरिंग फ्रेमवर्क का उपयोग किया, जिसमें उपस्थिति, मूल्यांकन, मान्यता, प्रशासन, वार्षिक निष्पादन मूल्यांकन और समीक्षा (एपीएआर) और कृत्रिम बुद्धिमत्ता सम्मिलित है।[15]

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 को विद्यालयी शिक्षा में क्रियान्वयन हेतु सरकार द्वारा अलग-अलग स्तर पर विभिन्न प्रयास किए जा रहें हैं। कुछ अन्य प्रयासों को नीचे प्रस्तुत किया जा रहा है

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा 2023 द्वारा विद्यालयी शिक्षा हेतु पहल

1. समग्र प्रगति कार्ड

समग्र प्रगति कार्ड, 360-डिग्री, एक बहुआयामी प्रतिवेदन है जो विद्यार्थी की संज्ञानात्मक, भावात्मक और मनोप्रेरक क्षेत्रों की प्रगति के साथ-साथ उनकी विशिष्टता को भी विस्तार से दर्शाती है। इसमें आत्म-मूल्यांकन और सहकर्मी मूल्यांकन, परियोजना आधारित, पूछताछ आधारित सीखने, प्रश्नोत्तरी, भूमिका निभाने, समूह कार्य, पोर्टफोलियो आदि में बच्चे की प्रगति के साथ-साथ शिक्षक मूल्यांकन भी शामिल है।[16]

2. विषय चयन में लचीलापन

नेशनल क्रेडिट फ्रेमवर्क (एनसीआरएफ) बहुविषयक शिक्षा का मार्ग प्रशस्त करते हुए पाठ्यक्रमों के चयन में लचीलेपन के माध्यम से विद्यार्थियों को सशक्त बनाता है ताकि वे अपने स्वयं के सीखने के मार्ग और कार्यक्रम का चयन कर सकें। एनसीआरएफ संस्थानों को सशक्त बनाने का कार्य करता है और उन्हें कल्पनाशील और लचीली पाठ्यचर्या संरचनाओं, विषयों के रचनात्मक संयोजन और अन्य विशेष आवश्यकताओं एवं उनकी विशिष्ट शैक्षणिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए आवश्यक लचीलापन प्रदान करता है।[17]

3. **अनुभव आधारित शिक्षण/अनुभवात्मक शिक्षा**

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (2020) वर्तमान भारतीय शिक्षा प्रणाली में सुधार लाने और इसे विश्व स्तर पर स्वीकृत शैक्षिक मानक के साथ संरेखित करने के लिए अनुभवात्मक शिक्षा पर जोर देती है जो छात्रों को वास्तविक दुनिया की स्थितियों में अपने ज्ञान को लागू करने में मदद करती है।[18] यह दृष्टिकोण व्यावहारिक अनुभव, आलोचनात्मक सोच, समस्या-समाधान दृष्टिकोण और करके सीखने को प्रोत्साहित करता है तथा पाठ्यक्रम के साथ गहन जुड़ाव को सशक्त बनाता है।[19] अनुभवात्मक शिक्षा के अंतर्गत हम निम्नलिखित शिक्षण विधियों को एकीकृत करते हैं-

i. **कला एकीकृत शिक्षण**

कला एकीकृत शिक्षण 'कला के माध्यम से' और 'कला के साथ' सीखने पर आधारित एक शिक्षण पद्धति है।[20] एनईपी 2020 निर्धारित करती है कि आधारभूत स्तर पर, सभी शिक्षा 'कला' के माध्यम से होनी चाहिए, जिसमें अक्षर, भाषा, संख्याएँ, गिनती, रंग, आकार, इनडोर और आउटडोर खेल और पहेलियाँ शामिल हैं। यह बच्चों को कला, शिल्प, संगीत, गतिविधि, सामग्री, खिलौने, कविता, कहानी, आउटडोर खेल और उनके तात्कालिक वातावरण के माध्यम से खेल के माध्यम से सीखने के लिए प्रेरित करने पर जोर देता है।[21]

ii. **आईसीटी एकीकृत शिक्षण**

iii. आईसीटी एकीकृत शिक्षण छात्रों और शिक्षकों के लिए विविध प्रकार की शिक्षण सामग्री तक पहुँच को संभव बनाती है और प्रौद्योगिकी के माध्यम से दुर्लभ संसाधनों को सभी के लिए उपलब्ध कराने में सहयोग प्रदान करता है। वर्चुअल लैब और सिमुलेशन ऐसी पहुँच के उदाहरण हैं।

iv. **खिलौना आधारित शिक्षण**

शिक्षा मंत्रालय के अनुसार खिलौना आधारित या खिलौना एकीकृत शिक्षा खेल-आधारित शिक्षा के व्यापक दायरे में आती है। विभिन्न प्रकार के खिलौनों जैसे चलती और स्थिर कठपुतलियाँ, स्थानीय सड़क के खेल, बोर्ड गेम, इलेक्ट्रॉनिक गेम आदि को शामिल करके खिलौनों के अर्थ को व्यापक बना रहे हैं।[22]

इस प्रकार एनसीएफ-एसई 2023 में सुझाए गए उपाय राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के प्रभावी कार्यान्वयन को सफल बनाने की ओर एक प्रयास होगा।

शैक्षिक निहितार्थ

प्रस्तुत शोध लेख शिक्षण-अधिगम में आने वाली समस्याओं को दूर करने, पाठ्यक्रम से लेकर मूल्यांकन प्रक्रियाओं में लचीलेपन को बढ़ावा देने, आजीवन सीखने के अवसरों का निर्माण करने के साथ-साथ समग्र शिक्षा और कौशल के साथ-साथ एकीकृत सीखने के लिए एक बेंचमार्क स्थापित करने में एक बड़े परिवर्तक के रूप में सुझाव देने में सक्षम होगा। इसके अतिरिक्त **छात्र ऐसी शिक्षण-अधिगम** प्रक्रिया के माध्यम से मूर्त और अनुभवात्मक शिक्षा में **संलग्न होंगे** जिसमें ज्ञान निर्माण, चिंतन और प्रशंसा **शामिल है।**

सुझाव

सभी पहलुओं को ध्यान में रखते हुए यह सुझाव दिया जाता है कि यदि केस अध्ययन, प्रोजेक्ट, निर्देशित रीडिंग (प्रश्न पूछना, समूह चर्चा, ऑडियो-विजुअल साधनों का उपयोग, ऑनलाइन टूल्स और ऐप्स) और अन्य समान दृष्टिकोणों के माध्यम से अनुभवात्मक शिक्षा को और अधिक सक्षम किया जाए तो भविष्य में अनुभवात्मक शिक्षा को पूर्ण रूप से लागू किया जा सकता है। उपर्युक्त उपायों या या दृष्टिकोणों में से जो भी दृष्टिकोण शिक्षण में अपनाया जाए, उसमें यह अवश्य ध्यान रखा जाए कि छात्रों को स्थानीय स्तर पर उन शिक्षण प्रक्रियाओं का परीक्षण करने के अवसर उपलब्ध होने चाहिए, ताकि वे बाद में अपनी समझ को क्षेत्रीय, राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय चिंताओं और कार्यों में विस्तारित कर सकें।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि यदि उपरोक्त सुझाए गए विचारों या रणनीतियों को विद्यालय में शिक्षकों द्वारा अपनाया जाता है तो निश्चित रूप से हम राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में निर्धारित किए गए लक्ष्यों या एजेंडों को प्राप्त करने में सक्षम होंगे। उपर्युक्त रणनीतियाँ न सिर्फ शिक्षण-अधिगम को अधिक रोचक बनायेंगी अपितु विद्यार्थी अधिक सक्रिय और रचनात्मक तरीके से अपना शिक्षण पूरा करेंगे। ये नवीन रणनीतियाँ राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020

के क्रियान्वयन में अहम योगदान दे सकती हैं। यदि हम इन युक्तियों को एक शिक्षक के रूप में अपने शिक्षण विधियों या प्रक्रियाओं में सम्मिलित करते हैं तो निश्चित ही हम राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 को जमीनी स्तर पर क्रियान्वित करने में अपना योगदान दे सकते हैं।

संदर्भ

1. डिपार्ट्मेंट ऑफ स्कूल एजुकेशन एंड लिटेरेसी, (2024). पीएम स्कूल फॉर राइज़िंग इंडिया, PM Schools for Rising India (PM SHRI)|Ministry of Education, GoI पुनः अभिगमन तिथि 4 अगस्त, 2024,10:50 pm.
2. मिनिस्ट्री ऑफ एजुकेशन, (2023). आचीवमेन्टस ऑफ नेशनल एजुकेशन पॉलिसी, *प्रेस इनफार्मेशन ब्यूरो,* पुनः अभिगमन तिथि 31 जुलाई, 2024. 01:32 pm Press ReleaseI:Press information Bureau (pib.gov.in).
3. ई-जादुई पिटारा, (2024). दीक्षा, *राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद,* नई दिल्ली Jaadui Pitara (ncert.gov.in)
4. डिपार्ट्मन्ट ऑफ स्कूल एजुकेशन एंड लिटरेसी, (2023). समग्र शिक्षा, *मिनिस्ट्री ऑफ एजुकेशन*, भारत सरकार, पुनः अभिगमन तिथि 31 जुलाई, 2024, Samagra Shiksha | Ministry of Education, GoI
5. प्रधान मंत्री पोषण शक्ति निर्माण, (2024). मिनिस्ट्री ऑफ एजुकेशन, *गवर्नमेंट ऑफ इंडिया*, पुनः अभिगमन तिथि 31 जुलाई, 2024. Pradhan Mantri Poshan Shakti Nirman (PM POSHAN) in India (education.gov.in)
6. मिनिस्ट्री ऑफ एजुकेशन, (2021). गवर्नमेंट सेट्स अप नेशनल स्टिरिंग कमिटी फॉर इम्प्लिमेन्टेशन ऑफ द निपुण भारत मिशन, *प्रेस इनफार्मेशन ब्यूरो*, 25 अक्टूबर, 2021, पुनः अभिगमन तिथि 31 जुलाई, 2024. Press Release:Press Information Bureau (pib.gov.in)
7. विद्या प्रवेश, (2022). कक्षा-1 के बच्चों के लिए तीन माह के खेल आधारित 'स्कूल तैयारी मॉड्यूल' हेतु दिशानिर्देश, *राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद*, नई दिल्ली.
8. सीआईईटी, (2024). पीएम-ई विद्या, *राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद,* नई दिल्ली. पुनः अभिगमन तिथि 31 जुलाई, 2024, 09:43 pm.
9. दीक्षा पोर्टल, (2024) Homepage (diksha.gov.in), पुनः अभिगमन तिथि 11 जुलाई, 2024.
10. डिपार्ट्मेंट ऑफ स्कूल एजुकेशन एंड लिटेरेसी, (2022). प्रशस्त, *राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद,* नई दिल्ली. पुनः अभिगमन तिथि 04 अगस्त, 2024, 02:43 pm.
11. एनसीएफ-एफएस, (2022). नेशनल करिक्यूलम फ्रेमवर्क फॉर फाउंडेशनल स्टेज, *राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद,* नई दिल्ली. पृ. सं. 54.
12. निष्ठा पोर्टल, (2019). निष्ठा ट्रेनिंग (इंटीग्रेटेड टीचर ट्रेनिंग फॉर चेंज). *राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद,* नई दिल्ली. पुनः अभिगमन तिथि 5 अगस्त, 2024, 02:58 pm.

13. पोखरियाल, एस. (2021). स्कूली विद्यार्थियों के बस्ते का वजन कम करना है जरूरी, New School Bag Policy स्कूली विद्यार्थियों के बस्ते का वजन कम करना है जरूरी - School Bag Policy 2021 It is important to reduce the weight of school students Jagran Special
14. उल्लास पोर्टल, (2021-22). उल्लास (नव भारत साक्षरता कार्यक्रम), शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार, ULLAS (education.gov.in)
15. सीआईईटी, (2023). विद्या समीक्षा केंद्र, *राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद,* नई दिल्ली Vidya Samiksha Kendra_050423_NCERT PMevidya.pptx.pdf
16. एनसीएफ-एसई, (2023). नेशनल करिक्यूलम फ्रेमवर्क फॉर स्कूल एजुकेशन, *राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद,* नई दिल्ली. पैरा क्रमांक 3.4.10, पृ. सं. 123.
17. नेशनल क्रेडिट फ्रेमवर्क, (2022). ड्राफ्ट रिपोर्ट ऑफ नैशनल क्रेडिट फ्रेमवर्क. द *रिपोर्ट ऑफ द हाई-लेवल इन्टर मिनिस्टीरीयल कमिटी ऑन नैशनल क्रेडिट अक्यूम्यलैशन एंड ट्रांसफर फ्रेमवर्क.*
18. रानी, के. एवं त्यागी, टी. के. (2022). एक्सपेरिनसियल लर्निंग इन स्कूल एजुकेशन: प्रोस्पेक्ट्स एंड चैलेंजेस, *इंटरनेशनल जर्नल ऑफ अड्वान्स एंड अप्लाइड रिसर्च*, 10(2). 378-383.
19. लोने, एस. ए. एवं कौर, एस. जे. (2024). विविफिकेशन ऑफ एक्सपेरिनसियल लर्निंग विद रेफ्रन्स टू एनईपी 2020, द *इंटरनेशनल जर्नल ऑफ इंडियन साइकोलॉजी*, 12(1). 1635-1640.
20. आर्ट इंटीग्रेटेड लर्निंग, (2023). हैंडबुक फॉर टीचर्स टीचिंग क्लाससेस i-v (फाउंडेशनल स्टेज एंड प्रेप्रटॉरी स्टेज). *राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद*, नई दिल्ली, पृ. सं. 1. https://ncert.nic.in/deaa/pdf/ArtIntegratedLearning-Handbook-Classes%20I-V.pdf
21. तदैव, पृ. सं. 9.
22. मिनिस्ट्री ऑफ एजुकेशन, (2022). टॉय-बेस्ड पेडागोजी-अ हैंडबुक लर्निंग फॉर फन, जॉय एंड हॉलिस्टिक डेवलपमेंट, *डिपार्ट्मेंट ऑफ स्कूल एजुकेशन एंड लिटरेसी,*. पृ. सं. 4. https://dsel.education.gov.in/sites/default/files/update/toy_based_pedagogy.pdf

अनामिका यादव
पी-एच. डी. शोधार्थी, शिक्षा विभाग,
महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय,वर्धा महाराष्ट्र-442001
डॉ. सरिता चौधरी
सहायक आचार्य, शिक्षा मनोविज्ञान एवं शिक्षा आधार विभाग,
राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद, नई दिल्ली 110016

वर्तमान संदर्भ में सिंधु जल संधि के समक्ष उभरती चुनौतियां एवं समाधान

अनु
डॉ रमेश कुमार

सारांश

भारत और पाकिस्तान के बीच सिंधु नदी तंत्र की साझा नदियों पर जल विवाद के साथ-साथ सीमा विवाद का संघर्ष; उनके द्विपक्षीय संबंधों के लिए एक गंभीर खतरा है। सिंधु नदी तंत्र दोनों देशों के बीच विश्व बैंक की मध्यस्थता से हुई जल संधि द्वारा नियंत्रित होती है, जो भारत और पाकिस्तान के बीच जल बंटवारा समझौता है। यह संधि एक प्रभावी संरचनात्मक ढांचा प्रस्तुत करती है तथा दोनों देशों की साझा नदियों पर उनके अधिकारों, जिम्मेदारियों और प्रबंधन को निर्धारित करने के साथ ही साझा नदियों के जल विवादों को हल करने का समाधान तंत्र प्रस्तुत करती है। प्रस्तुत शोध लेख में यह जानने का प्रयास किया गया है कि सिंधु जल संधि कैसे दोनों देशों के द्विपक्षीय संबंधों को प्रभावित करती है और दोनों देश कैसे मिलकर व्यवस्थित एवं सहयोगात्मक रणनीति से सिंधु नदी तंत्र के विवाद का सर्वोत्तम संभव समाधान ढूंढ सकते हैं?

मुख्य शब्द : सिंधु जल संधि, सीमा पार जल, जलविद्युत परियोजनाएँ, द्विपक्षीय संबंध, संघर्ष-समाधान, जलवायु परिवर्तन।

प्रस्तावना

जल पृथ्वी पर जीवन के लिए सबसे आवश्यक तत्वों में से एक है। जल नहीं जानता कि कहां बहना है, राष्ट्र-राज्यों के बीच सीमाओं की उसे जानकारी भी नहीं है। वर्तमान परिपेक्ष्य में यह देखा जा सकता है कि किस प्रकार सीमापारीय नदी जल विवाद विश्व के सभी प्रमुख मुद्दों में सबसे विवादास्पद बन गया है। कोई देश जो किसी अन्य देश से नदी जल साझा करता है, इस प्रकार की समस्याओं से मुक्त नहीं है। भारत और उसके पड़ोसी देश, विशेष रूप से पाकिस्तान के साथ भारत का नदी जल विवाद कोई अपवाद नहीं है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भारत और पाकिस्तान के बीच क्षेत्र आधिपत्य के लिए बढ़ते राजनीतिक संघर्ष में सीमा विवाद के साथ-साथ सिंधु नदी जल तंत्र को लेकर भी विवाद की स्थिति थी क्योंकि सीमा आयोग ने जल संसाधनों को पूर्ण रूप से चिह्नित नहीं किया था, जिसके परिणामस्वरूप दोनों देशों के मध्य गंभीर जल संघर्ष हुआ। जल बंटवारे को लेकर दोनों देशों के मध्य राजनीतिक तनाव और कटुता द्विपक्षीय विवाद का विषय बन गया था। वर्ष 1960 में सिंधु संधि द्वारा जल विवाद को सुलझाने का प्रयास किया गया था। इसके बावजूद बांधों के निर्माण से संबंधित अनेक विवादित जलविद्युत परियोजनाएँ जैसे चिनाब पर सलाल और बगलिहार बांध का निर्माण, झेलम पर तुलबुल परियोजना आदि दोनों देशों के बीच विवाद का कारण बने हुए हैं। इस तरह के विवाद दोनों देशों के बीच मौजूदा रिश्तों को और खराब करते हैं।

कुछ विचारकों का तर्क है कि बदलती परिस्थितियों के अनुसार सिंधु-संधि की उपयोगिता समाप्त हो चुकी है। इसे निरस्त करने या एक नई संधि के साथ प्रतिस्थापित करने की आवश्यकता है। वर्ष 2002 में, जम्मू-कश्मीर की विधानसभा ने भी लगभग सर्वसम्मति से एक प्रस्ताव पारित किया। जिसमें सिंधु जल संधि को रद्द करने का आह्वान किया गया क्योंकि पश्चिमी नदियों पर प्रतिबंध अवैध रूप से कश्मीरी विकास को बाधित कर रहा है। हरियाणा और पंजाब भी सिंधु जल संधि के तहत हुए नदियों के बंटवारे से असहमत हैं।[1]

शोध अध्ययन के उद्देश्य

प्रस्तुत शोध अध्ययन के उद्देश्य निम्नलिखित हैं :

1. सिंधु जल संधि का भारत-पाकिस्तान के द्विपक्षीय संबंधों पर प्रभाव का अध्ययन करना।
2. बदलते परिदृश्य में सिंधु जल संधि की उपयोगिता का आकलन करना।
3. सिंधु जल संधि में उभरती चुनौतियों का अध्ययन करना एवं उनके समाधान के लिए सुझाव प्रस्तुत करना।

शोध प्रविधि

प्रस्तुत शोध-पत्र के अध्ययन के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए द्वितीयक आंकड़ों का प्रयोग किया गया है। ये आंकड़े मुख्य रूप से सिंधु जल समझौते से संबंधित; पुस्तकों, लेखों, शोध-पत्रों, शोध-पत्रिकाओं के रूप में प्रकाशित सामग्री, अन्य पत्रिकाओं एवं समाचार पत्रों की प्रसांगिक कतरनों के विश्लेषण पर आधारित है।

सिंधु जल संधि की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

वर्ष 1947 में भारत विभाजन के साथ ही सिंधु नदी जल तंत्र भी विभाजित हो गया था। सिंधु नदी का जल भारत और पाकिस्तान के बीच एक प्रमुख सीमा रेखा के रूप में उभर कर सामने आया। जम्मू-कश्मीर के विवादित क्षेत्र को लेकर भारत-पाकिस्तान के बीच हुए टकराव के चलते 1 अप्रैल, 1948 को भारत ने पाकिस्तान की ओर बहने वाले पानी को रोक दिया। परिणामस्वरूप पाकिस्तान में खेती के लिए पानी नहीं मिल सका। इस पर पाकिस्तान ने आपत्ति जताते हुए पानी के ऐतिहासिक अधिकार की मांग की, जिसे भारत ने स्वीकार नहीं किया। भारत और पाकिस्तान में लंबे समय तक चले जल विवाद को हल करने के लिए वर्ष 1960 में विश्व बैंक की मध्यस्थता से सिंधु जल संधि पर हस्ताक्षर किए। इस समझौते के तहत दोनों देशों के मध्य; सिंधु नदी जल तंत्र की छह नदियों का समान बंटवारा किया गया। परिणाम में भारत को सिंधु नदी जल तंत्र की तीन पूर्वी नदियां; सतलुज, ब्यास और रावी प्राप्त हुई तथा शेष तीन पश्चिमी नदियां; चिनाब, झेलम और सिंधु पाकिस्तान को दी गई। जल संधि में हस्ताक्षरकर्ता देशों को **सिंधु बेसिन** में उत्पन्न होने वाले मुद्दों का शांतिपूर्वक प्रबंधन करने के लिए साझा तंत्र प्रदान किया है। संधि से संबंधित; असहमति या विवादित मुद्दों को द्विपक्षीय आधार पर हल करने के नियमों की व्याख्या के लिए स्थाई सिंधु आयोग का गठन किया गया है। आयोग में भारत और पाकिस्तान के एक-एक प्रतिनिधि आयुक्त शामिल होते हैं। भारत और पाकिस्तान के आयुक्त जब किसी विवादित विषय के समाधान पर सहमत नहीं होते हैं तो मुद्दे को आयुक्तों से परे ले जाना पड़ता है। इसके लिए विश्व बैंक द्वारा एक तटस्थ विशेषज्ञ और मध्यस्थता न्यायालय की नियुक्ति की जाती है। जैसा कि विश्व बैंक बताता है कि, "प्रश्नों" को आयोग द्वारा नियंत्रित किया जाता है; "मतभेदों" को तटस्थ विशेषज्ञ द्वारा हल किया जाता है। "विवादों" को; सात सदस्यीय मध्यस्थता न्यायाधिकरण, मध्यस्थता न्यायालय में भेजा जाता है।[2] इसके बावजूद भी समय समय पर दोनों देशों के मध्य सिंधु संधि को लेकर गतिरोध तथा तनावपूर्ण स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

भारत-पाकिस्तान सिंधु जल संधि का द्विपक्षीय संबंधों पर प्रभाव

सिंधु जल संधि ने दोनों देशों के मध्य; संघर्षों और समस्याओं का समाधान ढूंढने के लिए एक मंच प्रदान किया है। यह मध्य व्यवस्था; दोनों देशों की सीमा सुरक्षा और आपसी सहयोग के मामलों पर सकारात्मक प्रभाव

डालती है। दोनों देशों की साझा नदियों पर अंतर्निर्भरता के कारण वितरण, उपयोग और प्रबंधन के मामलों को सुधारने का एक साझा मंच मिलता है। कुछ विशेषज्ञों का मानना है कि दोनों देश, लंबे समय से चली आ रही कटुता के बावजूद, जल की दीर्घकालिक आपूर्ति सुनिश्चित करने के लिए संधि के उचित कार्यान्वयन में रुचि रखते हैं।

सिंधु जल संधि के समक्ष उभरती चुनौतियां

आलोचकों का यह आरोप है कि यह संधि कुछ विशिष्ट मुद्दों को संबोधित करने में विफल है और उभरती चुनौतियों का सामना करने के लिए अपर्याप्त रूपरेखा प्रस्तुत करती है। वे इस बात पर अफसोस जताते हैं कि यह संधि, सिंधु जल तंत्र के भौतिक विभाजन और विनियमन पर केंद्रित है जो वर्तमान में उभरते जटिल सामाजिक-आर्थिक, जलवायु और पर्यावरणीय दबावों को हल करने के लिए उपयुक्त नहीं है।[3] संधि में शामिल मुद्दों के ऐतिहासिक विश्लेषण से पता चलता है कि वर्ष 1960 में दोनों देशों ने जलविद्युत और पानी की मात्रा के मुद्दों पर समझौते को प्राथमिकता दी थी। जिसमें बड़े पैमाने पर जलवायु परिवर्तन जैसे पर्यावरणीय मुद्दों को नजरअंदाज कर दिया था।[4] संधि के समक्ष उभरते प्रमुख मुद्दे जैसे जल गुणवत्ता, जलवायु परिवर्तन, जनसंख्या वृद्धि आदि किसी भी समझौते में शामिल नहीं हैं। बेसिन में ताजे पानी की आपूर्ति कम और बढ़ती मांग पर कुछ पर्यवेक्षक; दोनों देशों के बीच भविष्य में हिंसक संघर्ष और 'जल युद्ध' की चेतावनी देते हैं।[5] कई आलोचक जल सहयोग बढ़ाने या देशों के बीच समग्र संबंधों को सुधारने में संधि की विफलता की ओर इशारा करते हैं।[6]

अन्य विश्लेषक संधि के तहत दोनों देशों के मध्य हुए वितरण को अनुचित मानते हैं। क्योंकि सिंधु नदी बेसिन के कुल जल में से 80 प्रतिशत पश्चिमी नदियों के माध्यम से पाकिस्तान में बहता है। जबकि केवल 20 प्रतिशत ही पूर्वी नदियों के माध्यम से भारत में बहता है। जबकि सिंधु बेसिन के उचित वितरण के अनुसार 42.8 प्रतिशत पानी भारत को मिलना चाहिए था।[7] कुछ विश्लेषकों और नीति निर्माताओं का मानना है कि भारत को संधि के अनुपालन को जारी रखना चाहिए और पाकिस्तान को उसके घरेलू चरमपंथियों पर नकेल कसने के लिए मजबूर करने के लिए अपनी ऊपरी स्थिति का लाभ उठाना चाहिए।[8] जबकि संधि में स्पष्ट रूप से भारत और पाकिस्तान के बीच गंभीर रणनीतिक तनाव को कम करने की मांग की गई थी। इसके लिए साझा नदियों से संबंधित विवादास्पद मुद्दों को राजनीति से अलग करके इंजीनियरों द्वारा हल किए जाने की अनुशंसा की गई है।[9] आलोचक संधि को एक स्थिर तकनीकी उपकरण के रूप में देखते हैं, जिसकी कोई अंतिम तिथि नहीं है। इसके अतिरिक्त संधि की संरचनात्मक कमी दोनों देशों के बीच बार-बार होने वाली बातचीत को प्रोत्साहित नहीं करती है। जल संधि में भविष्य की आवश्यकताओं पर भी बहुत कम ध्यान दिया है। कुछ विश्लेषक भविष्य की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर संधि की पुनर्व्याख्या, संशोधन करने का आह्वान करते हैं।[10] संधि में आसानी से संशोधन करने या नए मुद्दे जोड़ने के लिए औपचारिक साधनों का भी अभाव है। संधि के अंतिम प्रावधान (अनुच्छेद XII), अनुमति देता है कि संधि को संशोधित किया जा सकता है। इसमें एक बड़ी बाधा यह है कि संधि के प्रावधानों को केवल भारत और पाकिस्तान की पारस्परिक सहमति से ही संशोधित या समाप्त किया जा सकता है। लेकिन, कई बार दोनों देशों के बीच विभिन्न मुद्दों पर उचित सहमति नहीं हो पाती है।

सिंधु जल संधि के समक्ष उभरती चुनौतियां के समाधान के लिए सुझाव

भारत और पाकिस्तान को सिंधु जल संधि में जलवायु परिवर्तन से उत्पन्न चुनौतियों के समाधान के लिए अपनी बातचीत में पानी की गुणवत्ता और पर्यावरण संबंधी चिंताओं को शामिल करना चाहिए। संधि स्पष्ट करती है कि यदि दोनों देश सहमत हैं तो वे नदियों के किनारे संयुक्त इंजीनियरिंग परियोजनाओं में सहयोग कर सकते हैं

(अनुच्छेद VII, 1 सी)। लेकिन दोनों देशों ने संधि लागू होने के बाद कभी भी अनुच्छेद VII को अधिनियमित नहीं किया है जो संधि की कमी की अपेक्षा आपसी सहयोग, विश्वास और राजनीतिक इच्छाशक्ति की कमी को दर्शाता है। कई पर्यवेक्षकों को उम्मीद है कि इस अनुच्छेद के क्रियान्वयन से दोनों पक्षों के बीच सहयोग को बढ़ावा मिलेगा। नदी संधियों की सफलता या विफलता का मूल्यांकन राष्ट्रों के समग्र संबंधों को बेहतर बनाने की उनकी क्षमता के आधार पर नहीं किया जाना चाहिए क्योंकि भले ही सिंधु जल संधि ने भारत और पाकिस्तान के बीच अन्य मुद्दों पर शांतिपूर्ण स्थिति उत्पन्न नहीं की है। यह तर्क देना भी उतना ही वैध और मूल्यवान है कि संधि ने जल विवादों को बढ़ने से रोकने में योगदान दिया है।[11]

सिंधु संधि तकनीकी रूप से सटीक है किंतु इसकी अनुकूलनशीलता के संबंध में कमजोरियां हैं। संधि में दिए गए अनुच्छेद XII में अंतिम प्रावधानों के माध्यम से अन्य संशोधनों का प्रयास किया जा सकता है। परन्तु संधि पर दोबारा गौर करने से उन मुद्दों के फिर से खुलने का खतरा है जो पहले ही सुलझाए जा चुके हैं। आधिकारिक तौर पर संधि के तहत नए समझौतों पर बातचीत करना वर्तमान समझौते से असंतुष्ट पार्टियों को बदले की रणनीति में शामिल होने के लिए आमंत्रित कर सकता है। मौजूदा संधि से निराशा के कारण कुछ लोगों ने संधि को पूरी तरह से रद्द करने का आह्वान किया है। परन्तु, टूटी हुई संधियाँ युद्ध का संकेत होती हैं।[12] जैसे वर्साय की संधि का उल्लंघन होने पर द्वितीय विश्व युद्ध शुरू हो गया था। सिंधु जल संधि के परिप्रेक्ष्य में ऐसा इलाज बीमारी से भी बदतर होगा। एकतरफा रद्दीकरण से और भी समस्याएं पैदा हो सकती हैं, क्योंकि भारत के लिए, संधि को छोड़ने से पश्चिमी सहायक नदियों से प्रतिबंध हट जाएगा, जिससे थोड़ा तात्कालिक लाभ होगा लेकिन गंभीर अंतरराष्ट्रीय निंदा होगी।[13]

एक अन्य विशेषज्ञ रामास्वामी आर अय्यर का मानना है कि कश्मीर समस्या पर सहमति बनने के बाद ही भारत और पाकिस्तान के बीच बेहतर जल संधि हो सकती है, तब तक बेहतर होगा कि सिंधु जल संधि को ज्यों का त्यों छोड़ दिया जाए। इसकी कार्यप्रणाली में सुधार करने के प्रयास किए जाए।[14] अतः संधि को संशोधित करने या इसकी औपचारिक पुनर्वार्ता प्रक्रियाओं का उपयोग करने के बजाय, राज्यों को आधिकारिक समझौते के बाहर समझौता ज्ञापन (MoU) और अन्य सहकारी रास्ते अपनाने चाहिए जो अन्य मुद्दों को संबोधित करते हैं। जलवायु परिवर्तन के मुद्दों के समाधान के लिए अन्य वैकल्पिक तरीके अपनाने से अधिकारों और आवंटन के सवालों को फिर से खोलने से बचा जा सकता है। भारत-पाकिस्तान संधि की अखंडता को बनाए रखने के लिए समझौता ज्ञापन के माध्यम से बातचीत संघर्ष समाधान के लिए एक मंच तैयार कर सकते हैं, जिससे राजनयिक संबंधों और क्षेत्रीय स्थिरता के सुधार में योगदान मिलेगा। जल संसाधनों से संबंधित साझा चुनौतियों के समाधान से, दोनों देश आपसी समझ और सहयोग स्थापित कर सकते हैं जो नदियों के दायरे से कहीं दूर तक फैला हुआ है।

निष्कर्ष

सिंधु बेसिन जनसंख्या वृद्धि, सामाजिक-आर्थिक विकास, जलवायु परिवर्तन के प्रभावों व जल प्रदूषण के माध्यम से महत्वपूर्ण बदलाव के दौर से गुजर रहा है। परिणामस्वरूप, तटवर्ती इलाकों को साझा जल संसाधनों के प्रबंधन में बढ़ती चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है, जिससे बेसिन में भविष्य में संघर्ष की चिंता बढ़ रही है। छह दशकों से, सिंधु जल संधि ने भारत और पाकिस्तान के बीच जल संबंधों को विनियमित किया है। कई विशेषज्ञों का मानना है कि संधि तटवर्ती इलाकों को नई समस्याओं और नई वास्तविकताओं से निपटने के लिए तैयार नहीं करती है, जो 1960 में (जब संधि पर हस्ताक्षर किए गए थे) बेसिन के सामने आने वाली समस्याओं से काफी भिन्न है। संधि के विश्लेषणात्मक अध्ययन से पता चलता है कि आलोचनाएँ कुछ हद तक वैध हैं। फिर भी, जैसे-जैसे जलवायु

परिवर्तन का प्रभाव बेसिन पर पड़ रहा है, पानी की गुणवत्ता खराब हो रही है, भूजल का अत्यधिक दोहन हो रहा है, तटवर्ती इलाकों को इन दबावों का जवाब देने की आवश्यकता होगी। इन समस्याओं के समाधान के लिए संरचनात्मक बदलावों के साथ-साथ सहयोग की आवश्यकता होगी, जो शत्रुता और संघर्ष के इतिहास से परे हो सकता है। संधि की संरचनात्मक बाधाओं को दूर करने के लिए राजनीतिक रूप से स्वीकार्य समाधान खोजने की आवश्यकता है।

यह जल संधि काफी हद तक अभी भी उपयुक्त है, लेकिन इसमें समकालीन पर्यावरणीय मानकों और जल संसाधनों को प्रभावित करने वाली सामाजिक वास्तविकताओं को शामिल करना चाहिए। दो कट्टर प्रतिद्वंद्वियों के बीच लगातार शत्रुता और युद्ध के बावजूद, संधि ने अच्छी तरह से काम किया है और अभी भी क्षेत्र की सुरक्षा व शांति के लिए यह संधि महत्वपूर्ण है।

संदर्भ:

1. Swain, A. (2017). Water insecurity in the Indus Basin: The costs of noncooperation. *Imagining Industan: Overcoming Water Insecurity in the Indus Basin*, 37–48.
2. Ahmad, O. (2023, January 31). *Current Events Surrounding the Indus Waters Treaty Have Consequences Beyond India and Pakistan*. The Wire. https://thewire.in/south-asia/india-pakistan-indus-waters-treaty
3. Burgess, J. P., Owen, T., & Sinha, U. K. (2016). Human securitization of water? A case study of the Indus Waters Basin. *Cambridge Review of International Affairs*, *29*(2), 382–407.
4. Hamner, J. H., & Wolf, A. T. (1998). Patterns in international water resource treaties: The transboundary freshwater dispute database. *Colo. J. Int'l Envtl. L. & Pol'y*, *9*, 157.
5. Chandio, K. H. (2014, August 27). India Re-thinking Indus Water Treaty. *IPRI-Islamabad Policy Research Institute*. https://ipripak.org/2014/08/27/ india-re-thinking-indus-water-treaty/
6. Sarfraz, H. (2013). Revisiting the 1960 Indus waters treaty. *Water International*, *38*(2), 204–216.
7. Zawahri, N. A., & Mitchell, S. M. (2011). Fragmented governance of international rivers: Negotiating bilateral versus multilateral treaties. *International Studies Quarterly*, *55*(3), 835–858.
8. Chellaney, B.(2011).*Water: Asia's new battleground*. Georgetown University Press.
9. Biswas, A. K. (1992). Indus water treaty: The negotiating process. *Water International*, *17*(4), 201–209.
10. Adeel, Z., & Wirsing, R. G. (2016). *Imagining Industan: Overcoming water*

insecurity in the Indus basin. Springer.
11. Kraska, J. (2009). Sharing water, preventing war—Hydrodiplomacy in South Asia. *Diplomacy & Statecraft*, *20*(3), 515–530.
12. Abbas, H. (2023, January 27). *Will India Scrap Indus Water Treaty?* https://kashmirobserver.net/2023/02/04/will-india-scrap-indus-water-treaty/
13. Kugelman, M. (2016). Why the India-Pakistan war over water is so dangerous. *Foreign Policy*, *30*.
14. IDSA Task Force (Ed.). (2010). *Water security for India: The external dynamics*. Institute for Defence Studies and Analyses.

अनु

शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग, हरियाणा केंद्रीय विश्वविद्यालय, महेन्द्रगढ़ (हरियाणा)

डॉ रमेश कुमार

विभागाध्यक्ष एवं आचार्य, राजनीति विज्ञान विभाग, हरियाणा केंद्रीय विश्वविद्यालय, महेन्द्रगढ़ (हरियाणा)

परंपरा की गूँज: श्रीकांत सूर्यविप्र द्वारा तुलसीदास कृत रामचरितमानस का असमिया साहित्य में प्रतिपादन

डॉ. सत्यकाम बोरठाकुर
डॉ किरण हजारिका

सारांश

असमिया साहित्य में 14वीं शताब्दी के महाकाव्य रामायण का अनुवाद करने की एक समृद्ध परंपरा है। क्षेत्र के सांस्कृतिक ताने-बाने में निहित इस परंपरा में सदियों से उल्लेखनीय परिवर्तन हुए हैं। इस शोध गत्र में सूर्यविप्र द्वारा तुलसीदास के रामचरितमानस से 'लंकाकांड' का असमिया में अनुवाद करने के ऐतिहासिक और सांस्कृतिक महत्व की खोज करता है, जो असमिया साहित्यिक इतिहास में एक मील का पत्थर है। यह 18वीं शताब्दी के उत्तरार्ध के असम के सामाजिक-राजनीतिक संदर्भ की जांच करता है, जो मायामारा क्रांति और उसके बाद ब्रिटिश और हिंदुस्तानी ताकतों की भागीदारी से चिह्नित है, जिसने सूर्यविप्र के अनुवाद प्रयासों को प्रभावित किया। अहोम राजा कमलेश्वर सिंह के संरक्षण में पूरा किया गया यह अनुवाद मूल पाठ और स्थानीय मौखिक परंपराओं के मिश्रण को दर्शाता है, जो इसे सख्त प्रतिपादन के बजाय एक अनुकूलन बनाता है। सूर्यविप्र के काम का विश्लेषण लोकप्रिय लोक समाज को लक्षित करने वाले नए आख्यानों को शामिल करने और असमिया और हिंदी भाषी क्षेत्रों के बीच सांस्कृतिक आदान-प्रदान को बढ़ावा देने में इसकी भूमिका के लिए किया गया है।

मुख्य शब्द: श्रीकांत सूर्यविप्र, रामचरितमानस, शंकरदेव, रामायण परंपरा

परिचय:

रामचरितमानस के *'लंकाकांड'* का असमिया में अनुवाद असमिया साहित्य के इतिहास में एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर है। यह अनुवाद किसी भी प्राचीन हिंदी (विशेष रूप से अवधी) क्लासिक को असमिया भाषा में प्रस्तुत करने का पहला प्रयास है, जिसके गहरे साहित्यिक और ऐतिहासिक निहितार्थ हैं। ऐतिहासिक रूप से यह उल्लेखनीय है कि 18वीं शताब्दी तक, असम में हिंदी भाषी आबादी का प्रवासी प्रभाव न्यूनतम था। हालाँकि, इस अवधि के दौरान, असम के अहोम साम्राज्य ने उत्तर भारत से सशस्त्र बलों को शामिल करना शुरू कर दिया। इस सैन्य जुड़ाव ने असम और उत्तर भारत के बीच एक सहजीवी संबंध को बढ़ावा दिया, जो केवल राजनीति से आगे बढ़कर समृद्ध सांस्कृतिक आदान-प्रदान को शामिल करता है। यह ऐतिहासिक पृष्ठभूमि सूर्यकांत विप्र द्वारा अनुवाद के महत्व को रेखांकित करती है, जिन्हें संभवतः इस सांस्कृतिक तालमेल की विरासत विरासत में मिली थी। इसके अलावा, सूर्यकांत विप्र के प्रयास का उद्देश्य *रामचरितमानस* का असमिया संस्करण तैयार करना था। जिससे हिंदी भाषी क्षेत्रों में प्रचलित रामायण परंपरा को असमिया संस्कृति से जोड़ा जा सके। ऐसा करके, इस अनुवाद ने सांस्कृतिक आदान-प्रदान के लिए एक माध्यम के रूप में कार्य किया,

उद्देश्य

- तुलसीदास के रामचरितमानस से 'लंकाकांड' के श्रीकांत सूर्यविप्र द्वारा असमिया में किए गए अनुवाद के ऐतिहासिक और सांस्कृतिक महत्व का पता लगाना।

- अहोम राजा कमलेश्वर सिंह के संरक्षण और उस युग की सामाजिक-राजनीतिक गतिशीलता के भीतर सूर्यविप्र के अनुवाद को प्रासंगिक बनाना।स्थानीय मौखिक परंपराओं और नई कथाओं के समावेश पर ध्यान केंद्रित करते हुए सूर्यविप्र के अनुवाद में संरचनात्मक और कथात्मक संशोधनों का विश्लेषण करना।
- लोकप्रिय लोक समाज के साथ प्रतिध्वनित होने के उद्देश्य से अनुकूलन के रूप में सूर्यविप्र के काम के महत्व को उजागर करना।
- असमिया साहित्य पर सूर्यविप्र के अनुवाद के प्रभाव और असम में रामायण परंपरा को संरक्षित व बढ़ावा देने में इसकी भूमिका का मूल्यांकन करना।

कार्यप्रणाली:

इस अध्ययन में अपनाई गई कार्यप्रणाली में श्रीकांत सूर्यविप्र द्वारा तुलसीदास के रामचरितमानस से 'लंकाकांड' के असमिया में अनुवाद को समझने और उसका विश्लेषण करने के लिए एक व्यापक, बहुआयामी दृष्टिकोण शामिल है। शोध मुख्य रूप से गुणात्मक है, जो ऐतिहासिक, साहित्यिक और प्रासंगिक विश्लेषण पर निर्भर करता है। निम्नलिखित चरण कार्यप्रणाली की रूपरेखा प्रस्तुत करते हैं:

- **ऐतिहासिक संदर्भीकरण:**
  साहित्य समीक्षा: असम में 18वीं शताब्दी के उत्तरार्ध से संबंधित ऐतिहासिक दस्तावेजों, ग्रंथों और पिछले शोध की व्यापक समीक्षा करना, जिसमें सामाजिक-राजनीतिक वातावरण, मायामारा क्रांति और ब्रिटिश और हिंदुस्तानी सेनाओं की भागीदारी पर ध्यान केंद्रित करना।
  प्राथमिक स्रोत: अहोम राजाओं लक्ष्मी सिंह, गौरीनाथ सिंह और कमलेश्वर सिंह के शासनकाल के बारे में विस्तृत जानकारी एकत्र करने के लिए उस युग के ऐतिहासिक अभिलेखों, पत्रों और दस्तावेजों सहित प्राथमिक स्रोतों की जांच करना है।
- **पाठ्य विश्लेषण:**
  मूल पाठ से तुलना: तुलसीदास द्वारा रचित मूल रामचरितमानस के साथ 'लंकाकांड' के असमिया अनुवाद की तुलना करना, ताकि अंतर, परिवर्धन और चूक की पहचान की जा सके।
  कथात्मक और संरचनात्मक विश्लेषण: अनुवादित पाठ की कथात्मक संरचना और सामग्री का विश्लेषण करना इस बात पर ध्यान केंद्रित करना कि सूर्यविप्र ने स्थानीय मौखिक परंपराओं, नई कथाओं और लोकप्रिय लोक समाज को लक्षित करने वाले तत्वों को कैसे शामिल किया।
  साहित्यिक विश्लेषण: सूर्यविप्र के अनुवाद की साहित्यिक गुणवत्ता का मूल्यांकन करें, काव्यात्मक और शैलीगत तत्वों पर विचार करें, और शंकरदेव के बाद के काल के अन्य समकालीन साहित्यिक कार्यों के साथ इसकी तुलना की जा सके।

- **सांस्कृतिक और सामाजिक विश्लेषण:**
  सांस्कृतिक आदान-प्रदान: 18वीं शताब्दी के उत्तरार्ध के दौरान असमिया और हिंदी भाषी क्षेत्रों के बीच सांस्कृतिक आदान-प्रदान की जाँच करें, जाँच करें कि इस बातचीत ने सूर्यविप्र के अनुवाद प्रयासों को कैसे प्रभावित किया।

सामाजिक-राजनीतिक प्रभाव: ऐसे सामाजिक-राजनीतिक कारकों का आकलन करें, जिन्होंने हिंदी पाठ का असमिया में अनुवाद करना आवश्यक और सुगम बनाया, ऐसे सांस्कृतिक और साहित्यिक आदान-प्रदान के व्यापक निहितार्थों पर विचार करें।

- **संपादकीय और प्रकाशन विश्लेषण:**
  प्रकाशन इतिहास: सूर्यविप्र के अनुवाद के प्रकाशन इतिहास की समीक्षा करें, विशेष रूप से 1975 में महेश्वर नियोग के संपादन में असम साहित्य सभा द्वारा इसका प्रकाशन।
  प्रस्तावना और संपादकीय टिप्पणियाँ: अनुवाद और इसके ऐतिहासिक महत्व पर विद्वानों के दृष्टिकोण को समझने के लिए नागेन सैकिया और महेश्वर नियोग द्वारा लिखी गई प्रस्तावना और संपादकीय टिप्पणियों की जाँच करें।

यह पद्धतिगत ढाँचा सूर्यविप्र के अनुवाद, इसके ऐतिहासिक संदर्भ, साहित्यिक गुणों और सांस्कृतिक महत्व की गहन तथा गुणात्मक समझ सुनिश्चित करता है। इस बहुआयामी विश्लेषण के माध्यम से, अध्ययन का उद्देश्य सूर्यविप्र के काम और असमिया साहित्य व संस्कृति पर इसके स्थाई प्रभाव का व्यापक मूल्यांकन प्रदान करना है।

विश्लेषण:

श्रीकांत सूर्यविप्र रामायण के विभिन्न संस्करणों के असमिया में अनुवाद से जुड़ी चर्चाओं में एक प्रमुख स्थान रखते हैं। तुलसी दास के रामचरितमानस के 'लंकाकांड' का असमिया में उनका अनुवाद असमिया कविता के व्यापक परिदृश्य में विशेष महत्व रखता है, खासकर उनके समय में सीमांत भाषाओं से अनुवादों की कमी को देखते हुए। यह उपलब्धि विशेष रूप से उल्लेखनीय है क्योंकि उनके युग के दौरान सांस्कृतिक और भाषाई बाधाएं मौजूद थीं, जिससे ऐसे अनुवाद असमिया साहित्य में एक दुर्लभ और मूल्यवान योगदान बन गए। इस परियोजना को शुरू करके, सूर्यविप्र ने न केवल साहित्यिक परिदृश्य में योगदान दिया, अपितु सांस्कृतिक आदान-प्रदान को भी सुगम बनाया, जिससे भाषाई सीमाओं के पार महत्वपूर्ण सांस्कृतिक और धार्मिक ग्रंथों के प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। अनुवादित पाठ को समझने से पहले, सूर्यविप्र के युग के ऐतिहासिक संदर्भ को समझना अनिवार्य है। अनुवाद को सबसे पहले 1975 में महेश्वर नियोग के संपादन में असम साहित्य सभा द्वारा प्रकाशित किया गया था। प्रस्तावना में, असम साहित्य सभा के तत्कालीन सचिव नागेन सैकिया ने कहा कि अनुवाद 1716 शक (1794 ई. के बराबर) में पूरा हुआ था, एक अवधि जिसे महेश्वर नियोग ने हितेश्वर बरबरुआ के संदर्भ में भी पुष्टि की है। यह तिथि सूर्यविप्र के काम को असम में महत्वपूर्ण राजनीतिक और सामाजिक उथल-पुथल द्वारा चिह्नित एक अशांत ऐतिहासिक अवधि के भीतर रखती है। उल्लेखनीय रूप से, अनुवादक ने पूर्णानंद बुरहागोहेन को कमलेश्वर सिंह के शासनकाल (1795-1811) के दौरान मायामारा क्रांति [1] ("जेन माटे भगना राज्य करीला उद्धार," इबिड, पृ.1) के बाद तबाह हुए राज्य को पुनर्जीवित करने में सहायक के रूप में दर्शाया है। इससे पता चलता है कि अनुवाद संभवतः कमलेश्वर सिंह के शासनकाल के दौरान या उसके बाद हुआ था, जो अनुवाद की तिथि और राजा के राज्यारोहण के बीच सीधे संबंध की धारणा को चुनौती देता है। इसके अलावा, अनुवादक द्वारा ऐतिहासिक घटनाओं को शामिल करना, जैसे कि पूर्णानंद बुरहागोहेन द्वारा असमिया कंपनियों का गठन [2] और हिंदुस्तानी ताकतों का हस्तक्षेप, एक व्यापक सामाजिक-राजनीतिक संदर्भ का सुझाव देता है। पूर्ववर्ती राजाओं लक्ष्मी सिंह (1769-1780) और गौरीनाथ सिंह (1780-1795) के शासनकाल के दौरान, मायामारा क्रांति ने एक महत्वपूर्ण चुनौती पेश की, जिसके कारण गौरीनाथ सिंह को ब्रिटिश सेना से सहायता लेनी पड़ी[3] । जवाब में, लॉर्ड कॉर्नवालिस ने सितंबर 1792 में कैप्टन वेल्श को भेजा, जिनकी सेनाओं ने 24 नवंबर, 1792 तक ग्वालपाड़ा में प्रभावी रूप से व्यवस्था बहाल कर दी। कैप्टन वेल्श

की इकाई ने 1794 के मध्य तक ऊपरी असम में मोवामारिया विद्रोह को भी दबा दिया, जिसमें मुख्य रूप से हिंदी बोलने वाले हिंदुस्तानी सशस्त्र कर्मियों को शामिल किया गया था [4]।

यह ऐतिहासिक संदर्भ श्रीकांत सूर्यविप्र द्वारा हिंदी पाठ का असमिया में अनुवाद करने की आवश्यकता को रेखांकित करता है, क्योंकि यह उस समय की सामाजिक-राजनीतिक गतिशीलता को दर्शाता है, जिसमें कैप्टन वेल्श के अभियान के माध्यम से अहोम साम्राज्य और वर्तमान भारत के हिंदी भाषी क्षेत्रों के बीच मुठभेड़ भी शामिल है। ऐसे कारकों ने निस्संदेह युग के सांस्कृतिक और साहित्यिक आदान-प्रदान को प्रभावित किया, जिसने सूर्यविप्र के अनुवाद प्रयासों को आकार दिया। रामचरितमानस के एक महत्वपूर्ण हिस्से का अनुवाद करके, सूर्यविप्र ने असमिया भाषी आबादी को उत्तर भारत के सबसे महत्वपूर्ण धार्मिक और सांस्कृतिक ग्रंथों में से एक तक पहुंच प्रदान की, जिससे एक गहन सांस्कृतिक एकीकरण और समझ को बढ़ावा मिला। रामचरितमानस से "लंकाकांड" का अनुवाद मूल पाठ का सख्त प्रतिपादन नहीं था; बल्कि, यह रामचरितमानस का एक असमिया रूपांतर था, जिसमें कई नए तत्वों को शामिल किया गया था जबकि कुछ को छोड़ दिया गया था। इस दृष्टिकोण से, यह एक संक्षिप्त अनुवाद के अधिक निकट था। अनुवादक ने तुलसीदास को श्रद्धांजलि अर्पित की, उन्हें समाज में एक प्रकाशमान व्यक्ति के रूप में प्रशंसा की [5]। इसके अतिरिक्त, उन्होंने पांडुलिपि को 'पच्चीमा भाषा' [6] में लिखा हुआ बताया, जो दर्शाता है कि मूल पांडुलिपि जिससे उन्होंने "लंकाकांड" का अनुवाद किया था, वह 'पच्चीमा हिंदी' में रचित थी। यह संभव है कि उनके पास रामायण की पांडुलिपि व मौखिक दोनों प्रतिपादन उपलब्ध थे। जिससे उन्हें आवश्यकतानुसार स्थानीय परिवर्धन और चूक को शामिल करने की स्वतंत्रता मिली। उन्होंने स्थानीय मौखिक रामायण परंपरा के तत्वों को भी अपने अनुवाद में शामिल किया। अनुवाद और अनुकूलन की प्रक्रिया में केवल भाषाई हस्तांतरण ही नहीं बल्कि सांस्कृतिक हस्तांतरण भी शामिल है। सूर्यविप्र के कार्य के लिए स्रोत व लक्ष्य दोनों संस्कृतियों की गहरी समझ की आवश्यकता होगी। कई उदाहरणों में, अनुवादक सांस्कृतिक मध्यस्थ के रूप में कार्य करते हैं, जो अलग-अलग परंपराओं के बीच की खाई को पाटते हैं। इस मामले में, सूर्यविप्र ने प्रभावी रूप से एक सांस्कृतिक सेतु की भूमिका निभाई। यह सुनिश्चित करते हुए कि असमिया भाषी दर्शक मूल रामचरितमानस के सार व भव्यता को बनाए रखते हुए अनुवादित पाठ से जुड़ सकें।

हालांकि, सूर्यविप्र ने कथा के भीतर काका-गरुरा को अधिक गतिशील रूप में चित्रित किया। तुलसीदास की तरह, सूर्यकांत ने बिभीषण की सलाह का पालन करते हुए सुग्रीव द्वारा इंद्रजीत का कटा हुआ सिर रखने की कहानी को शामिल किया। उन्होंने अपने अनुवाद में तुलसीदास के समान कई विवरण भी बनाए रखे। इनमें से कुछ विवरण महेश्वर नियोग द्वारा मुद्रित पुस्तक की प्रस्तावना में स्पष्ट रूप से वर्णित किए गए हैं:

- मेघनाद का दाहिना हाथ इंद्रजीत के घर के आंगन में गिरा।
- मेघनाद की पत्नी सुलोचना की प्रार्थना में कटे हुए हाथ की उंगलियों ने घास की मदद से लक्ष्मण की कहानी लिखी।
- सुलोचना ने अपने घर से प्रस्थान किया और रावण, मंदोदरी के पास शरण ली।
- सुलोचना का राम और लक्ष्मण से सामना, साथ ही मेघनाद के कटे हुए सिर को वापस लाने और अनुष्ठान के अनुसार उसका दाह संस्कार करने का वृत्तांत।
- मेघनाद की चिता के साथ सुलोचना द्वारा मृत्यु को स्वीकार करना, आदि।

हालाँकि, सूर्यविप्र द्वारा किया गया अनुवाद नए आख्यानों के जुड़ने से उतना ही समृद्ध है। उन्होंने लोकप्रिय लोक समाज को लक्षित करने वाले आख्यानों को शामिल करने का प्रयास किया, जो अक्सर कल्पना से भरे होते हैं जो दर्शकों या पाठक के 'अद्भुत रस' को जगाते हैं। उदाहरण के लिए, 'सेतुबंधन' के समय, 'परम जनार्दन' को हनुमान के अहंकार को कुचलने की आवश्यकता महसूस हुई। इस प्रकार, जनार्दन ने अपनी माया से मछली का रूप धारण कर लिया और हनुमान द्वारा[7] उठाए गए एक बड़े पर्वत को निगल लिया और उसे समुद्र में गिरा दिया। हनुमान इस पर्वत को लंका में 'रामसेतु' बनाने के लिए लाए थे[8]। महिरावण का विस्तृत वर्णन भी अनुवादक द्वारा अतिशयोक्तिपूर्ण जोड़ है। हालाँकि, उन्होंने नए आख्यानों को शामिल करने के बाद मूल पाठ का अनुवाद पेश करके मूल 'रामचरितमानस' के केंद्रीय विषयों को बनाए रखने का प्रयास किया। कामरूप प्रांत में रामायण की प्रचलित कहानी कहने की प्रवृत्ति को देखते हुए, यह स्पष्ट है कि यह मानने की बहुत गुंजाइश थी कि ये नए समावेश प्रांत की लोक कथा कहने की परंपरा का हिस्सा थे, जो विशेष रूप से समाज के लोकप्रिय लोगों को लक्षित करते थे। इसलिए, हालांकि अनुवाद एक अहोम राजा के संरक्षण में किया गया था। इस प्रयास में लोकप्रिय लोगों को रामायण परंपरा की ओर आकर्षित करने की प्रवृत्ति स्पष्ट थी।

यह भी उल्लेखनीय है कि शंकरदेव काल के बाद की काव्य परंपरा के साहित्यिक गुणों में स्वाभाविक और क्रमिक गिरावट आई थी। हालाँकि, सूर्यविप्र का अनुवाद दूसरों की तुलना में बेहतर कृति के रूप में सामने आता है। यह असमिया संस्कृति के भीतर रामायण कथा की स्थायी अपील और महत्व को इंगित करता है, साथ ही अनुवादक और अनुकूलक के रूप में सूर्यविप्र की कुशलता और रचनात्मकता को भी दर्शाता है। मूल पाठ को स्थानीय परंपराओं और आख्यानों के साथ मिलाकर, उन्होंने एक ऐसी रचना की रचना की जो असमिया पाठकों के साथ गहराई से जुड़ी हुई थी। जिसने असम में रामायण की निरंतर प्रासंगिकता और प्रभाव सुनिश्चित किया।

उपरोक्त चर्चा से यह साबित होता है कि, श्रीकांत सूर्यविप्र द्वारा रामचरितमानस से 'लंकाकांड' का असमिया में अनुवाद एक उल्लेखनीय उपलब्धि है जो उनके समय की सामाजिक-राजनीतिक और सांस्कृतिक गतिशीलता को दर्शाता है। हिंदी भाषी क्षेत्रों की रामायण परंपरा को असमिया संस्कृति से जोड़कर, सूर्यविप्र ने एक मूल्यवान साहित्यिक कृति बनाई जिसने असमिया साहित्य को समृद्ध किया। उनके अनुवाद ने न केवल मूल पाठ के केंद्रीय विषयों को संरक्षित किया बल्कि स्थानीय आख्यानों और मौखिक परंपराओं को भी शामिल किया, जिससे यह असम की साहित्यिक विरासत में एक अनूठा और महत्वपूर्ण योगदान बन गया। यह अनुवाद रामायण की स्थायी विरासत और भाषाई और सांस्कृतिक सीमाओं को पार करने की इसकी क्षमता का प्रमाण है जो विभिन्न समुदायों के बीच गहरी समझ और प्रशंसा को बढ़ावा देता है।

प्रमुख निष्कर्ष और समापन:

श्रीकांत सूर्यविप्र द्वारा तुलसीदास के रामचरित मानस से 'लंकाकांड' के असमिया में अनुवाद की चर्चा से कई महत्वपूर्ण निष्कर्ष सामने आए:

- सूर्यविप्र का अनुवाद मूल शब्दानुवाद की तुलना में असमिया रूपांतरण अधिक है। वह नए तत्वों को शामिल करते हैं जबकि दूसरों को छोड़ देते हैं, जो रामायण कथा को असम के सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भ में अनुकूलित करने के एक सचेत प्रयास को दर्शाता है।
- सूर्यविप्र दर्शकों की कल्पना को मोहित करने के लिए लोकप्रिय लोक समाज को लक्षित करने वाली कहानियों को एकीकृत करता है, जो अक्सर कल्पना से भरी होती हैं। यह कामरूप प्रांत में प्रचलित स्थानीय मौखिक परंपराओं और कहानी कहने की प्रवृत्ति के प्रभाव को दर्शाता है।

- नए आख्यानों को शामिल करने के बावजूद, सूर्यविप्रा मूल *रामचरितमानस* के केंद्रीय विषयों को बनाए रखने का प्रयास करता है।
- अनुवाद में ऐतिहासिक घटनाओं और स्थानीय परिवर्धन का समावेश पाठ को सूर्यविप्र के समय के असम के सामाजिक-राजनीतिक संदर्भ में अनुकूलित करने के एक सचेत प्रयास का सुझाव देता है।
- सूर्यविप्र का अनुवाद असमिया कविता के व्यापक परिदृश्य में विशेष महत्व रखता है, खासकर उनके समय के दौरान सीमांत भाषाओं से अनुवाद की कमी को देखते हुए। यह सांस्कृतिक और भाषाई सीमाओं को पाटकर असमिया साहित्य के संवर्धन में योगदान देता है।

कुल मिलाकर, चर्चा सूर्यविप्र के अनुवाद की बहुमुखी प्रकृति और असमिया साहित्य के लिए इसके निहितार्थ पर प्रकाश डालती है, इस प्रकृति के साहित्यिक कार्यों को समझने में ऐतिहासिक संदर्भ, अनुकूलन रणनीतियों और सांस्कृतिक प्रभावों पर विचार करने के महत्व पर जोर देती है।

संदर्भ सूची

1. श्रीकान्त सुयविप्रा, 'लंकाकांड रामायण', पृष्ठ 1-2
2. ''जेन मट भगना राज्य करीला उद्धार'', उक्त, पृष्ठ 1
3. *तुंगखुंगिया बुरांजी*, पैरा 246, पृ.129-13
4. उक्त, पृष्ठ 125-126
5. उक्त, पृष्ठ 125-129
6. "तुलसीदास नाम जगते प्रकाश," श्रीकान्त सुयविप्रा 'लंकाकांड', पृष्ठ 2
7. उक्त
8. उक्त, पृष्ठ 06

अन्य संदर्भ सूची

- गोस्वामी, जतीन्द्रनाथ, और मुरुलीचरण दास, संपादक. *कलीराम मेधी रचनावली*, असम साहित्य सभा, 1979।
- गीता प्रेस, श्रीरामचरितमानस, गीता प्रेस, गोरखपुर (ई.बुक)
- निओग, महेश्वर.1987, *असामिया साहित्य रूपरेखा.* 7वाँ संस्करण, चन्द्र प्रकाश,
- वात्सायन, कपिला.1996,*परम्परागत भारतीय नाट्य: बहुमुखी धारा*, बीरेंद्रनाथ दत्ता द्वारा अनुवादित, एनबीटी,
- भट्टाचार्य, हरिचंद्र. *असामिया नाट्य साहित्य जिलिंगनि*, तीसरा संस्करण, लेयर्स बुक स्टॉल
- श्रीकान्त सुयविप्रा. *लंकाकाण्ड रामायण*. महेश्वर नियोग द्वारा संपादित, प्रथम संस्करण, असम साहित्य सभा, 1975।
- सत्येन्द्रनाथ, सरमा. प्रतिमा देवी, 1993. *असामिया नाट्य साहित्य.*
- प्रतिमा देवी, 1991.*असामिया साहित्य समिख्यात्मक इतिब्रित्ता*,

- सूर्य कुमार, भुइयां, संपादक. *तुंगखुंगिया बुरांजी*. चौथा संस्करण, ऐतिहासिक और पुरातन अध्ययन विभाग, गुवाहाटी, 1990।

डॉ. सत्यकाम बोरठाकुर, प्रोफ़ेसर, असमिया विभाग

डिब्रूगढ़ विश्वविद्यालय

डॉ किरण हजारिका,प्रो वाइस चांसलर,इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय

कोविड-19 का संकट और भारत की खाद्य सुरक्षा नीति में नवाचार: प्रधानमंत्री गरीब कल्याण अन्न योजना

लुके कुमारी
विजय दीक्षित

शोध सार: प्रधानमंत्री गरीब कल्याण अन्न योजना भारत सरकार द्वारा कोविड महामारी के दौरान समाज के आर्थिक रूप से कमजोर और वंचित वर्गों को खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के उद्देश्य से प्रारंभ की गई एक सकारात्मक पहल है। यह योजना न केवल खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करती है अपितु सामाजिक न्याय एवं आर्थिक स्थिरता के लिए एक मजबूत आधार भी प्रदान करती है। प्रस्तुत शोध पत्र में योजना के उद्देश्यक्रियान्वयन प्रक्रिया , तथा सामाजिक-आर्थिक प्रभाव का विश्लेषण किया गया है।अध्ययन के लिए गुणात्मक पद्धति अपनाई गई है जिसमें सरकारी रिपोर्ट , नीति आयोग की सिफारिशें और सार्वजनिक वितरण प्रणाली पर आधारित अध्ययन शामिल है। शोध पत्र में संविधान के अनुच्छेद के तहत 21; सतत विकास के लक्ष्य, शून्य भुखमरी एवं भारतीय नागरिकों के अधिकारों को परखते हुए योजना के प्रभावों का मूल्यांकन किया गया है।

मुख्य शब्द: समावेशी विकास ,21 अनुच्छेद ,शून्य भुखमरीसामाजिक ,सतत विकास लक्ष्य , कल्याण

परिचय

प्राचीन भारतीय ग्रंथों में भोजन को भौतिक अस्तित्व के साथ एक आध्यात्मिक और नैतिक मूल्य के रूप में देखा गया है। उपनिषदों में कहा गया है कि अन्नं बहुकृतं, अन्नं सदा सुखाय अर्थात् भोजन का उत्पादन तथा उसका वितरण समाज के कल्याण के लिए आवश्यक है। इस संदर्भ में, महात्मा गांधी ने कहा था कि स्वदेशी उत्पादन और स्थानीय वितरण ही सच्ची खाद्य सुरक्षा का आधार हैं। उन्होंने मानवीय गरिमा और सामाजिक समरसता को सुनिश्चित करने के लिए खाद्य सुरक्षा को एक आवश्यक सिद्धांत माना (Gandhi, 1947)[1]। आधुनिक भारतीय चिंतकों में, अमृत्य सेन ने खाद्य सुरक्षा की अवधारणा को नए सिरे से परिभाषित किया है। उनके अनुसार, भोजन की उपलब्धता से अधिक महत्वपूर्ण है कि लोग भोजन प्राप्त करने में सक्षम हों, यह भोजन तक पहुँच की असमानता को उजागर करता है। उनका तर्क है कि भुखमरी केवल आर्थिक असमानता का परिणाम नहीं है, बल्कि यह नीतिगत असफलताओं का भी परिणाम है। इसी संदर्भ में, ज्याँ द्रेज व रीतिका खेड़ा ने खाद्य सुरक्षा के सामाजिक एवं राजनीतिक आयामों पर ध्यान केंद्रित किया है। उन्होंने सुझाव दिया कि खाद्य सुरक्षा की नीतियों में समावेशी दृष्टिकोण अपनाना आवश्यक है ताकि समाज के सभी वर्गों को लाभ पहुंच सके। यह दृष्टिकोण न केवल आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है अपितु सामाजिक न्याय और मानवाधिकारों की रक्षा के लिए भी आवश्यक है (Dreze & Khera, 2020)[2]। प्रधानमंत्री गरीब कल्याण अन्न योजना इस विचारधारा का एक महत्वपूर्ण उदाहरण है। जिसमें महामारी के समय सरकार ने सुनिश्चित किया कि वंचित वर्गों को अनाज प्राप्त हो सके। इस योजना के माध्यम से सरकार ने खाद्य सुरक्षा को एक मौलिक अधिकार के रूप में स्थापित करने का प्रयास किया है।

प्रधानमंत्री गरीब कल्याण अन्न योजना: एक अवलोकन

प्रधानमंत्री गरीब कल्याण अन्न योजना एक महत्वपूर्ण खाद्य सुरक्षा पहल है, जिसे भारत सरकार द्वारा कोविड-19 महामारी के संदर्भ में कार्यान्वित किया गया। इस योजना का उद्देश्य विशेष रूप से आर्थिक संकट और

खाद्य असुरक्षा से प्रभावित वर्गों को खाद्य सहायता प्रदान करना है। इसकी शुरुआत अप्रैल 2020 में की गई, जब महामारी के कारण देशव्यापी लॉकडाउन लागू किया गया था। जिससे करोड़ों लोग अपनी जीविका खो बैठे और खाद्य सामग्री की उपलब्धता में कमी आई। इसके अंतर्गत, सरकार ने राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम के तहत पात्र, लाभार्थियों को अतिरिक्त मुफ्त खाद्य सामग्री के तहत, प्रत्येक माह 5 किलो अनाज, जैसे कि गेहूं या चावल व 1 किलोग्राम दाल जैसे पोषणयुक्त खाद्य पदार्थ दी जाती है (Ministry of Consumer Affairs, Food & Public Distribution, 2023)[3]। यह योजना न केवल खाद्यान्न की उपलब्धता को सुनिश्चित करती है अपितु सामाजिक सुरक्षा की दिशा में भी यह एक महत्वपूर्ण कदम है।

प्राचीन भारतीय वेदों में अन्न को सर्वोच्च स्थान दिया गया है। यजुर्वेद में उल्लेख है, कि 'अन्नमयं हि सोमः,' जो यह दर्शाता है कि अन्न का महत्व केवल शारीरिक पोषण तक सीमित नहीं है, बल्कि यह आध्यात्मिक विकास का आधार भी है। प्राचीन भारतीय व्याकरणज्ञ पाणिनि ने अन्न की महत्ता को स्पष्ट करते हुए कहा था कि अन्न जीवन का आधार है। आदि शंकराचार्य ने अपने तात्त्विक विचारों में बताया है कि अन्न के बिना जीवन का कोई मूल्य नहीं है। उनका विचार दर्शाता है कि भौतिक आवश्यकताएँ आध्यात्मिकता के लिए आवश्यक हैं। चार्वाक दर्शन ने जीवन के भौतिक पक्ष को प्रमुखता दी। उन्होंने कहा, सुख में भोजन है जो संकेत देता है कि भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति ही मानव जीवन का लक्ष्य है। ऋग्वेद में कहा गया है, 'अन्नं न मिषत मर्दनं,' जिसका अर्थ है कि अन्न का महत्व और इसके प्रति सम्मान होना चाहिए। अमृत्य सेन ने अपने सिद्धांत क्षमता के विकास के तहत खाद्य सुरक्षा को मानव विकास का अभिन्न हिस्सा बताया है। उनके अनुसार, भोजन तक पहुँच केवल एक भौतिक आवश्यकता नहीं, अपितु सामाजिक न्याय और मानवाधिकार का एक पहलू है (Dreze & Sen,1991)(4)। छांदोग्य उपनिषद में भोजन को ब्रह्म के रूप में मान्यता दी गई है, जो इसे केवल भौतिक वस्तु नहीं बल्कि आध्यात्मिक संतुलन का माध्यम बनाता है। इन विचारों का समावेश भारत की आधुनिक नीतियों में भी देखने को मिलता है। इसके अतिरिक्त, ज्याँ द्रेज जैसे सामाजिक विचारक ने भारतीय खाद्य वितरण प्रणाली की प्रभावशीलता पर जोर देते हुए यह सुझाव दिया है कि खाद्य सुरक्षा नीतियों को सामाजिक समावेशिता को बढ़ावा देने के लिए डिज़ाइन किया जाना चाहिए। डॉ. भीमराव अंबेडकर का दृष्टिकोण भी इस संदर्भ में महत्वपूर्ण है। उन्होंने सामाजिक समानता और न्याय के लिए खाद्य सुरक्षा को अनिवार्य बताया। यह योजना इस संदर्भ में एक क्रांतिकारी कदम है जो अंबेडकर के सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए समाज के वंचित वर्गों को सशक्त बनाने का प्रयास करता है। दयानंद सरस्वती ने शिक्षा के माध्यम से समाज की स्थिति सुधारने और हर वर्ग को समान अवसर देने की बात की कही, उनका कहना था कि एक सशक्त समाज के लिए सभी को समान रूप से पोषण मिलना चाहिए)Dayananda ,1883([5]। इसके अतिरिक्त रवींद्रनाथ टैगोर ने भारतीय समाज में खाद्य वितरण को मानवीयता और सहानुभूति का एक प्रतीक बताया। उनका मानना था कि समाज की प्रगति तभी संभव है जब सभी वर्गों को समान अवसर मिलें (Tagore,1917)[6] यह योजना इस दृष्टिकोण का अनुसरण करते हुए एक ऐसा तंत्र विकसित करती है जिसमें सभी को आधारभूत खाद्य सामग्री प्रदान की जाती है, ताकि सामाजिक समरसता को बढ़ावा दिया जा सके।

भारत में खाद्य सुरक्षा तथा पोषण सुनिश्चित करने के लिए विभिन्न कानूनों और नीतियों का कार्यान्वयन एक जटिल, बहुआयामी प्रक्रिया है, जो प्रशासनिक संरचना, सामाजिक ढांचे और आर्थिक स्थितियों के समुचित सामंजस्य पर निर्भर करती है। इस संदर्भ में, राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम 2013 एक महत्वपूर्ण विधायी पहल है। खाद्य सुरक्षा, जिसे एक मौलिक अधिकार के रूप में परिभाषित किया गया है। इसका उद्देश्य सुनिश्चित करना है कि

लगभग दो तिहाई भारतीय जनसंख्या को उचित मूल्य पर खाद्यान्न उपलब्ध कराया जाए। इस अधिनियम के अंतर्गत विभिन्न योजनाओं, जैसे कि प्रधानमंत्री गरीब कल्याण अन्न योजना, का कार्यान्वयन किया जाता है। विशेष रूप से इसे संकट काल में खाद्य सहायता प्रदान करने के लिए डिज़ाइन किया गया है (Ministry of Consumer Affair, 2013)[7]। इसका कार्यान्वयन विभिन्न राज्यों में उनके विशेष संदर्भ और आवश्यकताओं के अनुरूप किया जाता है, जिससे यह सुनिश्चित होता है कि उचित मूल्य की दुकानों के माध्यम से खाद्यान्न का वितरण किया जा सके। यह खाद्य वितरण प्रणाली कई कारकों पर निर्भर करती है, जिनमें लाभार्थियों की पहचान, भौगोलिक बाधाएँ, और आपूर्ति श्रृंखला की दक्षता शामिल हैं। यद्यपि यह अधिनियम प्रभावी रूप से कार्यान्वित होने का लक्ष्य रखता है, किन्तु कार्यान्वयन के दौरान कई चुनौतियाँ भी सामने आती हैं। प्रशासनिक अव्यवस्था, भ्रष्टाचार और लाभार्थियों के चयन में असमानताएँ, जो योजना की प्रभावशीलता को बाधित कर सकती हैं।

भारतीय संविधान में खाद्य सुरक्षा के लिए कानूनी प्रावधान

भारतीय संविधान में खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए एक विस्तृत कानूनी ढांचा स्थापित किया गया है जो मौलिक अधिकारों तथा सामाजिक न्याय के सिद्धांतों को एकीकृत करता है। भारतीय नागरिकों के अधिकारों की रक्षा के लिए विभिन्न अनुच्छेदों के माध्यम से यह सुनिश्चित किया गया है कि सभी नागरिकों को खाद्य सुरक्षा का लाभ मिले। अनुच्छेद 21 में, जो जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकार की सुरक्षा करता है, खाद्य सुरक्षा को जीवन के अधिकार का एक अनिवार्य घटक माना जाता है। भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने कई मामलों में यह निर्णय दिया है कि यदि किसी व्यक्ति को भोजन की कमी का सामना करना पड़ता है, तो उसका जीवन व गरिमा प्रभावित होती है। इसलिए, खाद्य सुरक्षा का अधिकार संविधान के अंतर्गत निहित है। अनुच्छेद 39(a) में राज्यों को निर्देश दिया गया है कि वे उन सभी नागरिकों को उचित जीवन स्तर व पर्याप्त भोजन की उपलब्धता सुनिश्चित करें। इस प्रावधान के माध्यम से संविधान खाद्य सुरक्षा को सामाजिक न्याय और समानता की दिशा में एक महत्वपूर्ण तत्व के रूप में प्रस्तुत करता है। अनुच्छेद 47 में राज्य को जन स्वास्थ्य और पोषण को सुधारने का दायित्व दिया गया है, जिसमें कुपोषण, भुखमरी और अन्य संबंधित मुद्दों को दूर करने के प्रयास शामिल हैं। इस अनुच्छेद के तहत, सरकार को खाद्य सुरक्षा व पोषण की स्थिति को बेहतर बनाने के लिए प्रभावी नीतियाँ और कार्यक्रम लागू करने की आवश्यकता होती है (Ambedkar, 1949)[8]। इसके अतिरिक्त, राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम 2013 को भारतीय संविधान की दिशा में एक महत्वपूर्ण कानूनी पहल के रूप में देखा जा सकता है। इस अधिनियम के अंतर्गत, खाद्य सुरक्षा को एक मौलिक अधिकार के रूप में स्थापित किया गया है। जिसमें लगभग दो तिहाई भारतीय जनसंख्या को अनाज व अन्य खाद्य सामग्रियों की उपलब्धता सुनिश्चित की गई है। इसके अंतर्गत, सरकार को विशेष रूप से कमजोर व वंचित वर्गों के लिए उचित मूल्य पर खाद्यान्न प्रदान करने का दायित्व सौंपा गया है।

"खाद्य सुरक्षा न केवल नागरिकों के भूख से मुक्ति का साधन है अपितु गरीबी उन्मूलन व सामाजिक समता के निर्माण में भी मदद करता है" (Dreze & Khera, 2013)9। नंदन निलेकणी ने यह तर्क दिया कि आधार के माध्यम से खाद्य वितरण प्रणाली को पारदर्शी व प्रभावी बनाया जा सकता है, ताकि लाभार्थियों तक खाद्यान्न सही तरीके से पहुँच सके (Nilakeni, 2014)10। उनका विचार है कि भारत में खाद्य सुरक्षा की चुनौती को आधुनिक तकनीकों के माध्यम से हल किया जा सकता है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद-46 में अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों व अन्य कमजोर वर्गों के प्रति विशेष देख-भाल करने का निर्देश दिया गया है, जो खाद्य सुरक्षा में समानता समावेशिता के सिद्धांत को अधिक मजबूत करता है। अनुच्छेद 46 सुनिश्चित करता है कि इन वर्गों को विशेष सहायता

और संरक्षण प्रदान किया जाए। जिससे उनकी खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित हो सके। इस प्रकार, भारतीय संविधान में खाद्य सुरक्षा के लिए एक मजबूत कानूनी ढांचा मौजूद है। यह न केवल नागरिकों के मौलिक अधिकारों की रक्षा करता है, अपितु उन्हें सामाजिक-आर्थिक सुरक्षा भी प्रदान करता है।

आहार वितरण का अवलोकनः यहां कुछ प्रमुख डेटा की मदद से प्रधानमंत्री गरीब कल्याण अन्न योजना से संबंधित आरेख प्रस्तुत किए जा रहे हैं।

सारणी सं.1: प्रधानमंत्री गरीब कल्याण अन्न योजना के अंतर्गत वितरित खाद्यान्न की मात्रा

गरीब कल्याण अन्न योजना के अंतर्गत वर्षवार वितरित खाद्यान्न			
क्रम स.	योजना के चरण	वर्ष	वितरित खाद्यान्न की कुल मात्रा (लाख मीट्रिक टन में)
1	1	2020	58.19 LMT
2	2	2020	58.19 LMT
3	3	2021	14.71 LMT
4	4	2021	36.79 LMT
5	5	2021-22	29.43 LMT

स्रोतः [प्रेस सूचना ब्यूरो, भारत सरकार (2023)]

राज्यवार लाभार्थियों का वितरण

यह प्रधानमंत्री गरीब कल्याण अन्न योजना के तहत विभिन्न राज्यों में वितरित खाद्यान्न के लाभार्थियों का वितरण दर्शाता है।

सारणी सं.2: गरीब कल्याण अन्न योजना के तहत राज्यवार खाद्यान्न के लाभार्थियों की संख्या

गरीब कल्याण अन्न योजना के तहत विभिन्न राज्यों में वितरित खाद्यान्न के लाभार्थियों		
क्रम स.	**राज्य के नाम**	**लाभार्थी की संख्या (करोड़ में)**
1	उत्तर प्रदेश	**14.72**
2	बिहार	6
3	मध्य प्रदेश	5
4	राजस्थान	4.5
5	महाराष्ट्र	4

स्रोतः उपभोक्ता मामले मंत्रालयखाद्य और सार्वजनिक , वितरण मंत्रालयभारत सरकार ,)2022(

इस सारणी के माध्यम से हम योजना की प्रभावशीलता और इसके सामाजिक-आर्थिक प्रभावों को बेहतर समझ सकते हैं, यह प्रदर्शित कर सकते हैं कि यह योजना कैसे गरीबी उन्मूलन और खाद्य सुरक्षा के क्षेत्र में योगदान करती है।

वर्तमान परिपेक्ष्य में भारत सरकार द्वारा किए गए प्रयास एवं योगदान

भारतीय सरकार ने खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए समकालीन समय में कई प्रभावशाली कदम उठाए हैं, जो न केवल वंचित वर्गों को पोषण और खाद्य संसाधनों तक पहुँचाने के लिए महत्वपूर्ण हैं, बल्कि यह भी दर्शाते हैं कि सरकार ने कैसे समयानुकूल नीतिगत उपायों को अपनाया है। इन प्रयासों का प्रमुख उद्देश्य समाज के सभी वर्गों के लिए खाद्य उपलब्धता, पहुँच और उपयोगिता सुनिश्चित करना है।

1. राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम: यह कानून सरकार की सबसे महत्वपूर्ण खाद्य सुरक्षा नीतियों में से एक है, जो लगभग 67% भारतीय जनसंख्या को सब्सिडी वाला खाद्यान्न प्रदान करता है। इसके तहत, अंत्योदय अन्न योजना और प्राथमिकता वाले घरों को सब्सिडी वाले दरों पर चावल, गेहूँ और मोटे अनाज की आपूर्ति की जाती है। इसके अतिरिक्त, माताओं और बच्चों के लिए पोषण सुरक्षा का प्रावधान भी किया गया है।

2. वन नेशन, वन राशन कार्ड योजना: सरकार ने वन नेशन, वन राशन कार्ड योजना को लागू किया है, जिसका उद्देश्य प्रवासी कामगारों और गरीबों को देशभर में राशन की समान उपलब्धता सुनिश्चित करना है। इस योजना के तहत लाभार्थी अपने राशन कार्ड का उपयोग किसी भी राज्य में कर सकते हैं जिससे उनके प्रवास के बावजूद खाद्यान्न की निरंतर आपूर्ति बनी रहे (Sharma, 2021)[11]।

3. मध्याह्न भोजन योजना: बच्चों में पोषण तथा उनकी शैक्षणिक उपलब्धियों को बढ़ावा देने के लिए सरकार ने मध्याह्न भोजन योजना को बढ़ावा दिया है। इस योजना के तहत सरकारी और सहायता प्राप्त स्कूलों में बच्चों को पौष्टिक भोजन दिया जाता है। इससे बच्चों में कुपोषण कम करने में मदद मिलती है।

4. आंगनवाड़ी केंद्र और सार्वजनिक वितरण प्रणाली: सरकार ने आंगनवाड़ी केंद्रों और सार्वजनिक वितरण प्रणाली के माध्यम से खाद्य और पोषण सुरक्षा सुनिश्चित करने का प्रयास किया है। आंगनवाड़ी केंद्र; गर्भवती महिलाओं, स्तनपान कराने वाली माताओं और छोटे बच्चों को पूरक पोषण प्रदान करते हैं।

5. डिजिटलीकरण और तकनीकी नवाचार: सरकार ने खाद्य सुरक्षा कार्यक्रमों में पारदर्शिता और प्रभावशीलता बढ़ाने के लिए डिजिटलीकरण का सहारा लिया है। भ्रष्टाचार को कम करने और लाभार्थियों की सटीक पहचान सुनिश्चित करने के लिए राशन कार्डों के डिजिटलीकरण, ऑनलाइन निगरानी और बायोमेट्रिक पहचान प्रणाली जैसी तकनीकों का इस्तेमाल किया जा रहा है।

6. किसानों के लिए न्यूनतम समर्थन मूल्य नीति: सरकार ने किसानों को आर्थिक सुरक्षा प्रदान करने और खाद्यान्न उत्पादन को प्रोत्साहित करने के लिए न्यूनतम समर्थन मूल्य नीति लागू की है। इससे यह सुनिश्चित होता है कि किसानों को उनकी उपज का उचित मूल्य मिले और वे खाद्यान्न उत्पादन बढ़ा सकें। किसानों को अपनी उपज बेचने में अधिक स्वतंत्रता देने के लिए कृषि विपणन सुधार लागू किए गए हैं।) Mohan &Kumar ,2020([12]।

7. मिशन पोषण 2.0: कुपोषण के खिलाफ़ लड़ाई में सरकार ने मिशन पोषण 2.0 की शुरुआत की है। इस पहल का उद्देश्य कुपोषित बच्चों, गर्भवती महिलाओं तथा स्तनपान कराने वाली माताओं के लिए पोषण सुरक्षा को बढ़ावा देना व पोषण सेवाओं की गुणवत्ता में सुधार करना है।

कोविड महामारी के दौरान, प्रधानमंत्री गरीब कल्याण अन्न योजना में लगभग 80 करोड़ भारतीय नागरिकों को मुफ्त खाद्यान्न किया गया (Ministry of Finance, 2020)[13]। महामारी के कारण लॉकडाउन व अन्य प्रतिबंधों के चलते, यह योजना संकट की घड़ी में खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने में अत्यधिक प्रभावी रही (Panda & Saha, 2020)[14]

इन समकालीन नीतिगत कदमों व कार्यक्रमों के माध्यम से सरकार ने खाद्य सुरक्षा को सुनिश्चित करने का उद्देश्य न केवल समाज के वंचित वर्गों को भोजन उपलब्ध कराना है अपितु खाद्य सुरक्षा के माध्यम से एक समृद्ध-स्वस्थ समाज का निर्माण करना है।

यह सारणी योजना के विभिन्न चरणों के लिए खाद्य सुरक्षा कार्यक्रमों के लिए किए गए वित्तीय आवंटन को दर्शाता है, जिसमें केंद्र और राज्य सरकारों का योगदान शामिल है।

सारणी सं. 2: **खाद्य सुरक्षा कार्यक्रमों के वित्तीय आवंटन में केंद्र और राज्य सरकारों का योगदान**

खाद्य सुरक्षा योजना के विभिन्न चरणों में वित्तीय आवंटन		
क्रम स.	चरण	खाद्य सुरक्षा के लिए वित्तीय आवंटन (करोड़ में)
1	1	18,922
2	2	18,922
3	3	4,438.
4	4	1,096
5	5	8,877

स्रोत: उपभोक्ता मामले मंत्रालय) खाद्य और सार्वजनिक वितरण मंत्रालय, भारत सरकार ,2022(

प्रधानमंत्री गरीब कल्याण अन्न योजना के समक्ष अवसर एवं चुनौतियां

प्रधानमंत्री गरीब कल्याण अन्न योजना के अंतर्गत खाद्य सुरक्षा को सुनिश्चित करने के लिए जो अवसर और चुनौतियाँ उत्पन्न होती हैं, वे न केवल समाज के आर्थिक और सामाजिक ढांचे को प्रभावित करती हैं, बल्कि यह नीति-निर्माण के संदर्भ में भी महत्वपूर्ण हैं। अवसर की इसने खाद्य सुरक्षा को एक प्राथमिकता बनाते हुए आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों को तत्काल राहत प्रदान की है, जिससे उनकी जीवन स्थितियों में सुधार की संभावनाएँ बढ़ी हैं। इस योजना के माध्यम से, सरकार ने भूख और कुपोषण के विरुद्ध एक सशक्त उपाय प्रस्तुत किया है, जो समाज के वंचित वर्गों को मुख्यधारा में लाने का कार्य करती है। हालाँकि इस योजना को विभिन्न चुनौतियों का सामना भी करना पड़ता है। पहली चुनौती खाद्यान्न वितरण की प्रभावशीलता से संबंधित है। राज्यों के विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों में आर्थिक-सामाजिक विसमताएँ हैं जो खाद्य सहायता वितरण में बाधाएं उत्पन्न करती हैं। इसके अतिरिक्त, प्रशासनिक अव्यवस्थाएँ व भ्रष्टाचार भी योजना की सफलता में बाधा उत्पन्न कर सकते है। जिससे लाभार्थियों तक लाभ पहुँचाने में कठिनाई हो सकती है (Soni & Patel, 2020)[15]। दूसरी चुनौती; खाद्य सुरक्षा में पोषण की गुणवत्ता सुनिश्चित

करने के साथ साथ खाद्यान्न की उपलब्धता ही पर्याप्त करने की भी है; खाद्य सुरक्षा में यह भी आवश्यक है कि खाद्य पदार्थों में आवश्यक पोषक तत्व मौजूद हों, ताकि लोग संतुलित आहार प्राप्त कर सकें। कुपोषण, विशेषकर बच्चों व गर्भवती महिलाओं में गंभीर समस्या है। योजना में इसे दूर करने के लिए प्रभावी कदम उठाने की आवश्यकता है। तीसरी चुनौती, योजनाओं का दीर्घकालिक प्रभाव सुनिश्चित करना। मौजूदा परिस्थिति में यह योजना मुख्यतः तात्कालिक राहत पर निर्भर करती है; दीर्घकालिक खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए स्थायी समाधानों की आवश्यकता है (Verma, 2020)[16]। योजना को केवल प्राप्त खाद्य सामग्री की भौतिक आवश्यकता की दृष्टि से ही न देखा जाए बल्कि सामाजिक-आर्थिक विकास के संदर्भ से भी विश्लेषित किया जाए। जलवायु परिवर्तन व प्राकृतिक आपदाओं से खाद्य आपूर्ति की श्रृंखला भी प्रभावित होती है। जिससे खाद्य सुरक्षा के लिए खतरा उत्पन्न होता है। अतः खाद्य योजना को सफलतापूर्वक लागू करने के लिए सरकार, गैर-सरकारी संगठनों और सामुदायिक संगठनों के बीच एक समन्वय आवश्यक है कि ताकि वितरण प्रणाली को अधिक प्रभावी व पारदर्शी बन सके। इसके अलावा, योजनाओं की प्रभावशीलता का मूल्यांकन नियमित रूप से किया जाना चाहिए, जिससे समय पर आवश्यक सुधार किए जा सकें।

निष्कर्ष

प्रधानमंत्री गरीब कल्याण अन्न योजना भारतीय सामाजिक सुरक्षा तंत्र का एक प्रमुख स्तंभ बनकर उभरी है जो देश की खाद्य सुरक्षा को सुनिश्चित करने के लिए अद्वितीय भूमिका निभा रही है। प्राचीन चिंतक कौटिल्य ने राज्य की भूमिका को योगक्षमा एवं जनता के कल्याणकारी प्रबंधक के रूप में परिभाषित किया था, जो वर्तमान में आवश्यक है कि योजना के कार्यान्वयन के माध्यम से साकार होता है। महात्मा गांधी और विनोबा भावे जैसे चिंतकों ने समानता और न्याय की अवधारणा पर जोर दिया था। जिसे खाद्य सुरक्षा योजना के माध्यम से महामारी के दौरान वंचित समुदायों तक खाद्यन्न सुनिश्चित करके कार्यान्वित किया है। अमृत्य सेन और ज्याँ द्रेज जैसे समकालीन विद्वानों ने सामाजिक सुरक्षा तंत्र की पारदर्शिता व समानता के महत्व पर बल दिया है। यह खाद्य सुरक्षा योजना के सफल कार्यान्वयन में परिलक्षित होती है।

References

1. Gandhi, M. (1947). Harijan. Navajivan Publishing House.
2. Dreze, J., & Khera, R. (2020). Food security interventions in times of crisis: Lessons from COVID-19. Indian Journal of Human Development, 14(1), 10-20.
3. Ministry of Consumer Affairs, Food & Public Distribution. (2023). Annual report 2022–23: Food security and public distribution. Government of India.
4. Dreze, J., & Sen, A. (1991). Hunger and public action. Oxford University Press.
5. Dayananda, S. (1883). Satyarth Prakash. Arya Samaj Publications.
6. Tagore, R. (1917). Nationalism. Macmillan publications.
7. Ministry of Consumer Affairs. (2013). National Food Security Act, 2013. Government of India.
8. Ambedkar, B. R. (1949). The Constitution of India. Government of India.

9. Dreze, J., & Khera, R. (2013). Rural poverty and public distribution system in India. Economic and Political Weekly, 48(45-46), 25-30.
10. Nilakeni, N. (2014). Rebooting India: Realizing a billion aspirations. Penguin Books.
11. Sharma, A. (2021). Analysis of India's food security measures during the COVID-19 pandemic. Indian Policy Review, 22(1), 66-75.
12. Mohan, G., & Kumar, P. (2020). Agricultural reforms and food security in India: The need for market liberalization. Indian Journal of Agricultural Economics, 75(3), 211-222.
13. Ministry of Finance. (2020). PMGKAY: Prime Minister's Garib Kalyan Anna Yojana during COVID-19. Government of India.
14. Panda, P., & Saha, S. (2020). COVID-19 and its impact on food security in India. Journal of Rural Development, 39(2), 35-45.
15. Soni, M., & Patel, P. (2020). Impact of "One Nation, One Ration Card" on migrant workers. International Journal of Public Policy, 9(1), 50-60.
16. Verma, S. (2020). Technology and food security: The role of digital solutions in Indian policy. Indian Journal of Public Administration, 66(4), 452-463.

लुके कुमारी, अस्सिटेंट प्रोफेसर
भारती कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय

विजय दीक्षित, शोधार्थी
एस डी (पी.जी) कॉलेज, गाजियाबाद

स्वतंत्रता संग्राम के महानायक महात्मा गाँधी की आत्मकथा 'सत्य का प्रयोग' से प्रेरित फिल्मों का सफ़र

रूबी पाण्डेय एवं बीर पाल सिंह यादव

शोध सार:

प्रस्तुत शोधपत्र के माध्यम से भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के महानायक महात्मा गाँधी के सत्य का प्रयोग से प्रेरित फिल्मों का विस्तृत विवेचन किया गया है। इस शोध पत्र के माध्यम से भारत में कला, साहित्य, सिनेमा और समाज के आपसी संबंध को दर्शाने का प्रयास किया गया है। विशेष रूप से भारतीय सिनेमा जो सामाजिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक परिवेश में विकसित हुआ है, उस प्रक्रिया को समझने का प्रयास इस शोध पत्र में किया गया है। गाँधी जी की जीवन और आत्मकथा पर आधारित फिल्मों में उनके महत्त्व की विवेचना की गयी है। दर्शक फिल्मों के माध्यम से न केवल किसी ऐतिहासिक व्यक्ति की जिंदगी से परिचित होते हैं अपितु इससे उन्हें प्रेरणा भी मिलती है। शोधपत्र में महात्मा गाँधी जी पर आधारित फिल्मों में उनकी विचारधारा, उनके सत्य, अहिंसा के सिद्धांतों का महत्त्व को उनके जीवन के संघर्षों का विशेष रूप से उल्लेख करके उन्हें शोधार्थियों तक पहुँचाने का एक प्रयास किया गया है। गाँधी जी के विचार आज भी प्रासंगिक हैं और उनकी जीवनी पर आधारित फिल्में उन विचारों को नयी पीढ़ी तक पहुँचाने का एक महत्वपूर्ण माध्यम है।

मुख्य शब्द: महात्मा गाँधी, सत्य का प्रयोग, सिनेमा, स्वतंत्रता संग्राम, आत्मकथा

हमारे देश भारत में कला की उत्पत्ति और विकास का इतिहास बहुत ही समृद्ध है। कला एक ऐसा विस्तृत शब्द है जो विभिन्न प्रकार की रचनात्मकता और उत्कृष्टता को समाहित करती है। इसके साथ ही यह विभिन्न रूपों में भी प्रकट की जाती है, जैसे- नृत्य, संगीत, शिल्प, सिनेमा, साहित्य, और अभिनय आदि। इस तरह कला व्यक्ति की भावनाओं, विचारों और अनुभवों को व्यक्त करने का एक महत्वपूर्ण माध्यम है। कला अपनी रचना के माध्यम से सामाजिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक प्रतिक्रियाओं का प्रतिनिधित्व भी करती है। यह मानव सृजन की प्रमुख अभिव्यक्ति होती है, जो विभिन्न रूपों में प्रकट होने की क्षमता रखती हैं। यदि कला की परिभाषा की बात करें तो पाश्चात्य और भारतीय आलोचकों ने अपनी-अपनी राय दी है।

पाश्चात्य आलोचक प्लेटो के अनुसार "कला सत्य की अनुकृति है।"[1]

पाश्चात्य आलोचक अरस्तू ने "कला को प्रकृति का अनुकरण माना है।"[2]

रवींद्रनाथ टैगोर के अनुसार, "कला में मनुष्य अपनी अभिव्यक्ति करता है।"[3]

हिंदी साहित्य के प्रसिद्ध लेखक मैथलीशरण गुप्त के अनुसार; "अभिव्यक्ति की कुशल शक्ति ही तो कला है जो अपूर्ण कला की पूर्ति करती है।"[4]

कला की सत्यम, शिवं, सुंदरम जैसी सदृश्यता का उपयोग बड़ी ही खूबसूरती से सिनेमा में एक छायाकार द्वारा भी किया जाता है। बात हिंदी सिनेमा के विकास यात्रा की करें तो इसकी एक लंबी और विविधतापूर्ण प्रक्रिया रही है जो भारतीय समाज, संस्कृति, और तकनीकी प्रगति के साथ-साथ बदलती रही है। इस क्रम में हम आगे देखते हैं कि डॉ.दीनानाथ साहनी के अनुसार "भारत में सिनेमा का श्रीगणेश ल्यूमियर बंधुओं ने दिसंबर 1895 ई० में पेरिस में किए गए विश्व में पहले सिनेमा प्रदर्शन के सात माह के पश्चात् 7 जुलाई 1896 को मुंबई के वाटसन होटल में किया

। उन्होंने Arrival of the train, Ladies and soldiers आदि फ्लिकर्स को प्रदर्शित किया।"[5] भारतीय सिनेमा के इतिहास पर गौर करने वाले विद्वान कहते हैं कि समाज का संपन्न और प्रबुद्ध वर्ग जो अभी तक शाम को थियेटर में जाकर नाटक देखा करता था, वह अब नाटकों को छोड़कर पूरी तरह फिल्मों की ओर बढ़ गया। आगे चलकर भारतीय हिंदी सिनेमा के विकास की एक समृद्ध परंपरा का उद्भव हुआ। निर्दोष त्यागी ने अपनी पुस्तक 'हिंदी फिल्मों का संक्षिप्त इतिहास' में लिखा है कि, "भारत में पहली फीचर फिल्म सन 1912 ई० में पुंडलिक बनी। यह फिल्म आर. जी. तोर्णे और एन. जी. चित्रे का सम्मिलित प्रयास था। फिल्म पुंडलिक के अतिरिक्त भारत की पहली फीचर फिल्म होने का गौरव धुंडीराज गोविन्द फाल्के की राजा हरिश्चंद्र वर्ष 1913 को प्राप्त है। इस फिल्म में सिनेमा की प्रारंभिक प्रवृत्ति देखने को मिलती है। इस तरह आगे चलकर दादासाहब ने अपने 19 साल के करियर में कुल 15 फिल्में और 27 लघु फिल्मे बनाई। मोहिनी भास्मासुर (1913), सत्यवान सावित्री (1914), बुद्धदेव (1923), बालाजी निम्बारकर (1926), भक्त प्रहलाद (1926), भक्त सुदामा, नल दमयंती (1927), परशुराम (1928), मीराबाई (1929) गंगावतरण (1937) आदि है।"[6]

इस तरह भारत में मूक फिल्मों का सिलसिला धुंडीराज गोविन्द फालके से शुरू होकर वर्ष1931 तक चलता रहा। भारत में पहली सावाक या बोलती फिल्म आर्देशिर ईरानी द्वारा आलमआरा (1931) में बनाई गयी थी। इस फिल्म की विशेषता है कि ईरानी ने अपनी फिल्म की भाषा हिंदी चुनी थी और आगे चलकर यह फिल्म तमिल और तेलुगू भाषा में भी रूपांतरित की गयी। आलमआरा फिल्म बनाने के पूर्व ही ईरानी द्वारा कई फिल्में बनायी जा चुकी थी जैसे- वर्ष 1922 वीर अभिमन्यु, वर्ष 1924 वीर दुर्गाधर, वर्ष 1924 पाप नहीं, 1924 बॉम्बे नी सेठानी / शैतान का आह्वान, 1924 शाहजहां, 1925 नरसिंह डाकू, 1925 नवलशा हिरजी आदि।

सिनेमा की इस विकास यात्रा के साथ-साथ आधुनिक भारत के इतिहास में राष्ट्रीय-आंदोलन अपने पूरे उफान पर था, देश की तत्कालीन स्थिति के साथ-साथ सिनेमा भी देश समाज की आवश्यकताओं के अनुरूप धार्मिक व पौराणिक फिल्मों के माध्यम से अपनी राष्ट्रीयता का परिचय देने में पीछे नहीं था। । धीरे-धीरे बोलचाल के साथ-साथ हिंदी सिनेमा गीत, संगीत, ध्वनि, अभिनय की नवीन कला आदि के आविष्कार को लेकर गंभीर होता गया। परिमामस्वरूप सिनेमा के क्षेत्रों में नवीन संभावनाओं के द्वार खुलने लगे। आगे चलकर ऐसी कई हस्तियों ने सिनेमा जगत में कदम रखा और अपनी कौशल, क्षमता और योगदान से समाज को नई चेतना प्रदान की। हिंदी सिनेमा ने भारतीय समाज के सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक आदि पहलुओं पर विचार करके एक नए दौर की शुरुआत की है। साथ ही, हिंदी सिनेमा ने समाज में व्याप्त कुरीतियां जैसे- भ्रष्टाचार, अन्धविश्वास और शोषणपरक नीतियाँ तथा हासियें पर स्थित वर्ग (स्त्री, आदिवासी और दलित,आदि) का यथार्थ अंकन कर पर्दे पर लाने की दिशा में बहुत काम किए गए। हिंदी सिनेमा ने भारतीय समाज के सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक आदि पहलुओं पर विचार करके एक नए युग की शुरुआत की है। साथ ही, समाज में व्याप्त बुराइयों जैसे भ्रष्टाचार, अंधविश्वास और शोषणकारी नीतियों तथा हाशिए पर पड़े वर्गों (महिलाएं, आदिवासी और दलित आदि) को यथार्त रूप से चित्रित कर उन्हें पर्दे पर लाने की दिशा में भी हिंदी सिनेमा ने बहुत काम किए हैं। इस तरह हिंदी सिनेमा में कई ऐसी फ़िल्में बनीं जो तत्कालीन समाज का आईना हैं, इनमें मुख्यतः उस समय विशेष के किरदारों और व्यक्तित्वों ने अहम भूमिका निभाई। भारत के इतिहास को जानने और समझाने के लिए हिंदी सिनेमा के निर्माताओं ने सिनेमा के प्रारंभिक दौर में भी अक्सर किसी व्यक्ति-विशेष की जीवनी और आत्मकथात्मक पर फ़िल्में बनाई हैं। इन जीवनीपरक फिल्मों

के द्वारा व्यक्ति-विशेष अपने युग के साथ अपनी विशिष्ट भूमिका के कारण आज भी जीवंत है। हिंदी सिनेमा भारतीय ऐतिहासिक चरित्रों के माध्यम से उनकी वीरता, उदारता, योग्यता और बलिदान की कहानियों को शुरू से ही दर्शाता रहा है। यथा; सोहराब मोदी के निर्देशन में बनी फिल्म 'सिकंदर (1941)', सोहराब मोदी द्वारा निर्देशित फिल्म 'झाँसी की रानी (1953)', सोहराब मोदी के निर्देशन में 'मिर्ज़ा गालिब (1954)' बनी। हिन्दी भाषा की फिल्म, बाबूभाई मिस्त्री द्वारा निर्देशित फिल्म 'सम्राट चंद्रगुप्त' (1958), रफीक सरहदी के निर्देशन में बनी फिल्म चंगेज खान (1958), 1967 में शेख मुख्तार द्वारा निर्मित और मोहम्मद सादिक द्वारा निर्देशित बॉलीवुड *फिल्म* 'नूरजहाँ', देवेन्द्र गोयल के द्वारा निर्देशित फिल्म 'रजिया सुल्तान (1961)', केदार कपूर द्वारा निर्देशित फिल्म 'सिकंदर-ए-आज़म (1965)', 1963 में बनी मुगल बादशाह शाहजहाँ की ऐतिहासिक कथा पर आधारित फिल्म 'ताज महल (1963)', 1979 में प्रेमजी निर्मित गुलज़ार निर्देशित फिल्म 'मीरा', 'सम्राट पृथ्वीराज चौहान', 'छत्रपति शिवाजी' आदि।

वर्तमान में भी सिनेमा एक लोकप्रिय माध्यम है, इसमें 19वीं सदी से लेकर आज तक कई तरह के फिल्मकार सक्रिय हैं। सिनेमा को साहित्य की तरह कला मानने वाले फिल्मकार भी हैं तो इनमें ऐसे भी फिल्मकार हैं, जिनके लिए फिल्म बनाना एक पैसे कमाने का महज जरिया है, परंतु यह कहना अन्यायपूर्ण होगा कि सिनेमा केवल व्यावसायिकता का ही आधार है। वर्तमान दौर में सिनेमा अपने समय विशेष के हर पहलू को ध्यान में रखकर बनाई जा रही हैं। जैसे-कश्मीर फाइल्स, द केरला स्टोरी, आर्टिकल-370, मिशन मजनू, द ताशकंत फाइल आदि। कहने का तात्पर्य यह है कि जब कोई फिल्म निर्माता किसी फिल्म का निर्माण करता है तो वह उसके यथार्थ के साथ उनमें रचनात्मक एवं कल्पनात्मक पहलुओं पर भी विचार करता है। लेकिन फिल्म देखने के बाद फिल्म बनने के पीछे का शोध, संघर्ष दिखाई पड़ता है। सत्य घटनाओं को आँखों से प्रत्यक्ष देखने पर विषय-वस्तु की समझ में वृद्धि होती हैं। इस आधार पर हम कह सकते हैं कि सिनेमा की उपयोगिता पर भी विचार करना जरुरी हो जाता है। इस क्रम में समाज में घटित सत्य घटनाओं के अतिरिक्त फिल्म निर्देशक कई बार अच्छी कहानी की तलाश में फिल्मकार विशिष्ट व्यक्तियों की जीवनियों या आत्मकथा की तरफ भी जाते हैं। फिल्म बनाने की प्रक्रिया में साहित्य के एक प्रमुख विधा जीवनी और आत्मकथा के माध्यम से फिल्म को पेश किया जाता है। बाद में फिल्म के प्रदर्शित होने के पूर्व व पश्चात् फिल्म निर्माता इसके परिणामों पर चर्चा करना आवश्यक समझते हैं।

सरदार 1993, बैंडिट क्वीन 1994, द लेजेंट ऑफ़ भगत सिंह 2002, सरदबोस : द फॉरगोटन हीरो 2004, मंगल पांडे : द राइजिंग 2005, पान सिंह तोमर 2012, भाग मिल्खा भाग 2013, मैरी कॉम 2014, मांझी द माउन्टेन मैं 2015, दंगल 2016, अजहर 2016, एम. एस. धोनी : द अनटोल्ड स्टोरी 2016, मंटो 2018, संजू 2018, पीएम नरेंद्र मोदी 2019, द एक्सीडेंटल प्राइम मिनिस्टर 2019, वो जो था एक मसीहा मौलाना आजाद 2019,मणिकर्णिका : द क्वीन ऑफ़ झासी 2019, छपाक 2020, गुंजन सक्सेना : द कारगिल गर्ल 2020, सरदार उधम सिंह 2021, साइना 2021, सुपर-30 2019, गंगूबाई काठियावाडी 2022, शाबाश मिठू 2022, पृथवीराज, सैम बहादुर, 12th फेल 2023, गडकरी 2023, मैं अटल हूँ 2023, स्वतंत्रता वी सावरकर 2024, अमर सिंह चमकीला 2024 आदि।

जैसा की हम सभी जानते हैं कि भारत, ऋषियों, मुनियों, संतो और महात्माओं का देश हैं। इन महान लोगों ने अपने-अपने त्याग और बलिदान से पूरे विश्व में अपनी अलग छवि स्थापित की है। इसी तरह भारत को कठिन और विकट परिस्थितियों से उबारने और गुलामी की बेड़ियों से मुक्त कराने में महात्मा गांधी का विशेष योगदान है। इन्होंने सत्य एवं अहिंसा के बल पर भारत को ब्रिटिश शासन से मुक्ति दिलाई। मनोज प्रकाशन संपादकीय मंडल द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'महात्मा गाँधी : अहिंसा की हिंसा पर विजय' में गांधी जी के जीवन परिचय बताते हुए लिखते हैं कि,

“महात्मा गाँधी का पूरा नाम मोहनदास करमचंद गाँधी था। इनका जन्म 2 अक्टूबर 1869 को गुजरात के पोरबंदर नामक स्थान में हुआ था। इनकी माता का नाम पुतलीबाई और पिता का नाम करमचंद गाँधी था। गांधीजी की प्रारंभिक शिक्षा गाँव में ही सम्पन्न हुई। इन्होंने राजकोट से हाई स्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण की। इसके पश्चात् विलायत से बैरिस्ट्री की परीक्षा पास की। वर्ष 1920 में इन्होंने असहयोग आंदोलन प्रारंभ किया। जिसमें भारत के प्रत्येक नागरिक ने प्रत्यक्ष रूप से अपना समर्थन दिया। वर्ष 1929 में इन्होंने रावी नदी के किनारे कांग्रेस के अधिवेशन में पूर्ण स्वतंत्रता की घोषणा कर दी। वर्ष 1930 में इन्होंने नमक क़ानून के विरुद्ध दांडी यात्रा प्रारंभ की। वर्ष 1942 में गांधीजी ने भारत छोड़ो आंदोलन चलाकर और अपने अकथ प्रयासों से ब्रिटिश शासक देश को स्वतंत्र कराने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की हैं।”[7]

गाँधी जी पर आधारित फिल्में उनके द्वारा लिखी पुस्तकों के मानकों पर खरी उतरती हैं या नहीं, इस बात में संदेह है। हां, हम यह कह सकते हैं कि उनके द्वारा लिखी आत्मकथा ‘सत्य का प्रयोग’ एवं अन्य पुस्तकों को पढ़कर और उन सभी को मिलाकर, उसकी एक अच्छी पटकथा और संवाद के द्वारा फिल्म निर्देशक अपनी कला का प्रदर्शन करते हैं। हालाँकि, एक फिल्म निर्माता और निर्देशन सदैव जीवनीपरक या आत्मकथात्मकपरक फिल्म बनाने में यह ध्यान रखते हैं कि इसमें ज्यादा नाटकीयता व कल्पनाशीलता का प्रयोग न किया जाए, जबकि कई बार जीवनीपरक फिल्म को रोचक बनाने के लिए प्रायः फिल्मों में संगीत और नायक के प्रेम संबंधों को आदर्श रूप में प्रस्तुत करते हैं। इसी तरह गांधीजी पर आधारित फिल्म प्रायः इनकी पुस्तक में लिखी घटनाओं को केंद्र में रखकर ही बनायी गयी है, ताकि फिल्म अंत तक बांधे रहे। जैसा कि हम जानते हैं साहित्य की तरह सिनेमा को भी प्राण शक्ति समाज से ही मिलती है। इसलिए सिनेमा पर विचार करते हुए समाज के साथ उसके संबंधों पर विचार करना आवश्यक हो जाता है। महावीर प्रसाद द्विवेदी कहते हैं कि, “साहित्य समाज का दर्पण होता है।”[8] इस परिप्रेक्ष्य में यदि हम यह कहें कि आज के समय में सिनेमा समाज का आईना है तो किसी भी तरह की अतिश्योक्ति नहीं होगी, क्योंकि आज हम समाज में घटित होने वाली प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष घटनाओं पर आधारित फ़िल्में देख और समझ रहे हैं। जो समाज से प्रभावित होती हैं । महात्मा गांधी ने अपनी आत्मकथा ‘सत्य के प्रयोग’ में अपने बचपन से लेकर साल 1921 तक की घटनाओं को लिखा है। यह पुस्तक कई अध्यायों में लिखी गई क्योंकि गांधीजी हर हफ्ते इस पुस्तक में थोड़ी-थोड़ी बातें लिखा करते थे, जोकि अखबार नवजीवन में वर्ष 1925 से 1929 के दौरान प्रकाशित होती थी। अपनी आत्मकथा सत्य के प्रयोग को गांधीजी ने गुजराती में लिखा था, जिसे 1940 में महादेव देसाई ने हिंदी भाषा में अनुवाद किया।

इसी क्रम में हिंदी के अनूठे गद्यकार अमृतलाल नागर के जीवन की घटनाओं को उनकी आत्मकथा 'टुकड़े-टुकड़े दास्तान' में कहानी के रूप में प्रस्तुत किया गया है। गांधी जी का जीवन सत्य और अहिंसा के सिद्धांतों पर आधारित था और इस पुस्तक में उन्होंने इन सिद्धांतों को अपनाने और समझने की प्रक्रिया का वर्णन किया है। यह आत्मकथा केवल उनके व्यक्तिगत जीवन का इतिहास नहीं है, बल्कि यह उनके विचारों, सिद्धांतों और कार्यों की व्यापक समझ प्रदान करती है। सत्य के साथ गांधीजी के प्रयोग न केवल उनके व्यक्तिगत जीवन में, बल्कि व्यापक सामाजिक और राजनीतिक परिवेश में भी परिवर्तनकारी साबित हुए। गांधीजी के जीवन और विचारों को गहराई से समझने साथ यह भी जानना है कि उनके द्वारा किए गए “सत्य के प्रयोग” आज के समय में कितने प्रासंगिक हैं और उनसे हमें क्या सीख मिल सकती है। आत्मकथा में अपने बचपन के भटकाव और गलतियों के बारे में लिखते हुए

गाँधी जी ने स्पष्टवादिता और निष्पक्षता का जो मानक स्थापित किया है वह पूरी पुस्तक में ही दिखाई पड़ता है। गांधी जी भारत लौटने पर अंग्रेजी राज के अन्याय से बहुत उद्वेलित हुए और उन्होंने जनमानस को संगठित कर स्वराज्य स्थापित करने को अपने जीवन का ध्येय बना लिया। महात्मा गांधी द्वारा लिखी गई आत्मकथा 'सत्य का प्रयोग' उनके द्वारा अपने जीवन में किए गए प्रयोग का क्रियान्वयन है। यह पुस्तक महात्मा गांधी के जीवन, उनके सत्याग्रही आंदोलन, और उनके दैनिक जीवन की घटनाओं का विवरण प्रस्तुत करती है। इस पुस्तक में, गांधीजी ने अपने जीवन के विभिन्न पहलुओं पर अपने विचार और अनुभवों को साझा किया है। उन्होंने अपनी संघर्षों, सत्याग्रही आंदोलनों और अपनी आत्मा की खोज के बारे में स्पष्टता से व्यक्त किया है। इस पुस्तक के माध्यम में, गांधीजी ने अपने पाठकों को सत्य व अहिंसा के महत्व को समझाने का प्रयास किया है|'[9]

नाथूराम गोडसे द्वारा महात्मा गांधी की हत्या की तैयारी की कहानी को लेकर **'नाइन आवर्स टू रामा'** नामक फिल्म 1963 ई. में मार्क रॉबसन द्वारा निर्देशित की गयी। यह फिल्म नेल्सन गिडिंग द्वारा लिखी गई थी। मुख्य भूमिकाओं में मुख्य रूप से श्वेत अभिनेताओं के साथ इंग्लैंड और भारत में फिल्माई गई थी। यह फिल्म 1962 में प्रकाशित 'स्टेनली वोल्पर्ट' के इसी नाम के उपन्यास पर आधारित है। फिल्म, नाथूराम गोडसे (होर्स्ट बुचोलज़) के जीवन के नौ घंटों पर आधारित काल्पनिक कथा है जिसमें दिखाया गया है कि गोडसे ने महात्मा गाँधी की हत्या की योजना कैसे बनाई? कैसे वह हिंदू कार्यकर्ता बना? जिसने (गलत तरीके से) मुसलमानों द्वारा हजारों हिंदुओं की हत्या के लिए गांधी को दोषी ठहराया| इसका खुलासा फ्लैशबैक की एक श्रृंखला में हुआ है। अंग्रेजी भाषा की इस फिल्म ने भारत में तूफान ला दिया था। तथ्यों के साथ तेज और ढीला खिलवाड़ करने के कारण इसकी रिलीज पर प्रतिबंध लगा दिया गया। स्क्रूल डॉट इन नामक वेबसाइट पर प्राप्त एक लेख में लिखा है कि, "रविंदर सिंह ने 2016 में अपने निबंध में लिखा था कि इतिहास थोड़ा और बहुत अधिक कल्पना का एक मादक मिश्रण, यह फिल्म रोमांस से भरी एक थ्रिलर है जिसे मेलोड्रामैटिक मोड में प्रस्तुत किया गया है।"[10] यह फिल्म गांधीजी के विचारों से असहमत नाथूराम गोडसे के इर्द-गिर्द घुमाने वाली कथा पर आधारित है, जिसका गांधीजी की आत्मकथा 'सत्य का प्रयोग' से कोई संबंध नहीं है। पूरी फिल्म में गांधी के जीवन या उनसे संबंधित घटनाओं से एक या दो ही घटनाओं का जिक्र है। गांधीजी की आत्मकथा *'सत्य के प्रयोग'* सत्य की खोज, नैतिकता व अहिंसा पर आधारित है। यह एक व्यक्ति की आंतरिक यात्रा और आत्म-साक्षात्कार का वर्णन करती है। जबकि *'नाइन आवर्स टू रामा'* में नाथूराम गोडसे के जीवन के अंतिम घंटों का चित्रण है, जो गांधीजी की हत्या से पहले उनके विचारों और मानसिक स्थिति को दर्शाता है। हालांकि फिल्म में सत्य की खोज नहीं बल्कि एक अलग विचारधारा और कट्टरता का चित्रण है, जो गांधीजी की अहिंसा व सत्य के विपरीत है। संक्षेप में, दोनों में कुछ विषयवस्तु में समानता हो सकती है। गांधीजी की आत्मकथा अहिंसा, सत्य और आत्म-अन्वेषण पर केंद्रित है, जबकि *'नाइन आवर्स टू रामा'* एक चरमपंथी दृष्टिकोण और गांधीजी की हत्या के संदर्भ में बनाई गई फिल्म है।

गांधीजी की आत्मकथा 'सत्य के प्रयोग' पर अधिकांशतः आधारित फिल्म की बात करें तो मुझे ऐसा लगता है कि सन 1968 में आई फिल्म 'महात्मा : गांधी का जीवन : वर्ष 1869-1948' है। महात्मा गाँधी के जीवन पर आधारित यह फिल्म भारत सरकार के फिल्म प्रभाग के सहयोग से गांधी राष्ट्रीय स्मारक निधि द्वारा बनायी गयी है। इस फिल्म के निर्देशक और पटकथा लेखक

विट्ठलभाई झावेरी है। इस फिल्म में झावेरी संवाद में कमेंट्री भी प्रदान करते हैं। 33 रील और 14 अध्याय की यह फिल्म ब्लैक एंड व्हाइट में 330 मिनट की है। अंग्रेजी भाषी फिल्म 'महात्मा: गांधी का जीवन (1869-1948)' का एक हिंदी संस्करण भी है, जो 2 घंटे और 20 मिनट तक चलता है। इसके अतिरिक्त एक जर्मन संस्करण 1 घंटे और 44 मिनट तक चलता है|'11

हम कह सकते हैं कि फ़िल्म **'महात्मा: गांधी का जीवन:** वर्ष1869-1948**'** महात्मा गांधी की आत्मकथा **'सत्य के प्रयोग'** के बीच एक गहरा संबंध है, क्योंकि दोनों ही गांधीजी के जीवन, उनके सिद्धांतों और उनके संघर्षों का वर्णन करते हैं। फिल्म की सामग्री और घटनाओं का काफी हिस्सा गांधीजी की आत्मकथा, उनके जीवनी से लिया गया है, जो इस बात को दर्शाता है कि फिल्म काफी हद तक आत्मकथा पर आधारित है या उससे प्रेरणा ली गई है। जहाँ एक ओर आत्मकथा 'सत्य के प्रयोग' पाठकों को गांधीजी की सोच, उनके मूल्यों और उनके जीवन के अनुभवों से प्रेरित करती है, वहीं 'महात्मा: गांधी का जीवन: 1869-1948' फिल्म भी दर्शकों को गांधीजी के जीवन से प्रेरणा लेने के लिए प्रेरित करती है। उनके जीवन की शिक्षाओं को दृश्य रूप में प्रस्तुत करती हैं । दोनों में गांधीजी के व्यक्तिगत संघर्ष संदेह और उनके आत्म-साक्षात्कार की प्रक्रिया का उल्लेख मिलता है। आत्मकथा में आत्म-साक्षात्कार सत्य के प्रयोग के रूप में दर्शाया गया है जबकि फिल्म में इसे गांधीजी के जीवन की घटनाओं के माध्यम से दिखाया गया है। संक्षेप में; फिल्म **'महात्मा: गांधी का जीवन** वर्ष 1869-1948**'** तथा आत्मकथा **'सत्य के प्रयोग'** दोनों ही गांधीजी के जीवन और उनके सिद्धांतों का विवरण देती हैं। आत्मकथा गांधीजी के जीवन को उनके अपने शब्दों में प्रस्तुत करती है, जबकि फिल्म उनके जीवन की घटनाओं को दृश्य रूप में दिखाती है। दोनों ही गांधीजी के विचारों व संघर्षों को समझने के लिए महत्वपूर्ण हैं।

भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के एक प्रमुख नेता महात्मा गांधीजी के जीवन पर आधारित फिल्म **'गांधी'** 1982 में भारत और यूनाइटेड किंगडम के सह-निर्माण में बनी थी। इस फिल्म के निर्देशक और निर्माता रिचर्ड एटनबरो तथा पटकथा लेखक जॉन ब्रिली हैं। गांधी पर आधारित इस फिल्म में ब्रिटिश अभिनेता 'बेन किंग्सले' ने मुख्य भूमिका निभाई है। फिल्म की शुरुआत 1948 में नाथूराम गोडसे (हर्ष नायर) द्वारा गांधी की हत्या से होती है। इसके बाद, तत्कालीन राजनीतिक नेताओं और उनके अंतिम संस्कार में शामिल होने वाले अविभाजित भारत द्वारा गांधी की अंतिम विदाई का दृश्य दिखाया गया है, जबकि गाँधी जी ने अपनी आत्मकथा सत्य के प्रयोग में अपने जीवन में घटित वर्ष 1921 तक की यात्रा का जिक्र किया है। इसके बाद फिल्म अपनी पटरी पर आते हुए वर्ष 1893 में गांधीजी के जीवन में घटित घटनाओं से शुरू होती है, जब वह दक्षिण अफ्रीका में एक युवा वकील थे और उ न्हें प्रथम श्रेणी खंड (जहां भारतीयों को अनुमति नहीं है) में होने के कारण ट्रेन से बाहर फेंक दिया गया था। हालांकि उनके पास प्रथम श्रेणी का टिकट था। उन्होंने दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों के साथ हो रहे व्यवहार के खिलाफ विरोध अभियान शुरू किया। इस घटना के पश्चात् उनका काम एक अमेरिकी रिपोर्टर वॉकर का ध्यान आकर्षित करता है। वह उसे अखबार में छाप देता है। ठीक इसी घटना का विवरण गाँधी जी ने सत्य के प्रयोग नामक अपनी पुस्तक में 'प्रिटोरिया जाते हुए' अनुक्रम में बड़ी ही मार्मिक रूप से लिखते हैं, "मैंने अपने धर्म का विचार किया, या तो मुझे अपने अधिकारों के लिए लड़ना चाहिए या लौट जाना चाहिए, नहीं तो जो अपमान हो रहे उन्हें सहकर प्रोटोरिया पहुँचना चाहिए और मुक़दमा खत्म करके देश लौट जाना चाहिए।"[12] ठीक इसी अनुरूप गांधी फिल्म में भी गांधीजी के अंतर्मन के संवाद को फिल्म निर्माता ऐसे दर्शाते हैं मानो स्वयं गांधीजी इसे अभिनय कर रहे हैं। इसके पश्चात् फिल्म में भारतीय मील मजदूरों द्वारा साउथ अफ्रीका में हड़ताल करने हेतु उन्हें सामूहिक कारावास अंग्रेजों द्वारा दिया जाता

हैं। इन्हें समझाने और छुड़ाने के लिए गांधी और जनरल जान स्मट्स (एथोल फ़ुगार्ड) एक समझौते पर पहुँचे। इस घटना का वर्णन गाँधी जी ने अपनी आत्मकथा 'तीन पौण्ड का कर' नामक अनुक्रम में किया हैं, जो फिल्म के संवाद, दृश्य एवं भावनाओं को पुस्तक के अनुरूप ही तादात्म कराती है। फिल्म में दिखाए गए सभागार में गांधी जी द्वारा दिया गया भाषण पुस्तक में लिखी विवरण से ज्ञात होता है जैसे- "इस कर के विरुद्ध जोरों की लड़ाई छिड़ी। यदि नेटल इंडियन कांग्रेस की ओर से कोई आवाज ही न उठाई जाती तो शायद वाइसराय 25 पौण्ड भी मंजूर कर लेते। 25 पौण्ड के बदले 3 पौण्ड होना भी कांग्रेस के आंदोलन का ही प्रताप हो, यह पूरी तरह संभव है, पर इस कल्पना में मेरी भूल हो सकती हैं।"[13]

सन 1996 ई. में ***'द मेकिंग ऑफ द महात्मा'*** श्याम बेनेगल द्वारा निर्देशित एक जीवनीपरक फिल्म है, जो महात्मा गांधी के जीवन के महत्वपूर्ण चरण पर केंद्रित है जब उन्होंने दक्षिण अफ्रीका में अपने सामाजिक और राजनीतिक जीवन की नींव रखी। यह फिल्म *फैज़लाबाद* के इतिहासकार *फैज़ल महमूद* द्वारा लिखित पुस्तक *'द अप्रेंटिसशिप ऑफ़ ए महात्मा'* पर आधारित है| गांधीजी के 1893 से 1914 तक के दक्षिण अफ्रीकी अनुभवों पर प्रकाश डालती है। इस अवधि के दौरान गांधीजी ने अन्याय और नस्लवाद के खिलाफ लड़ाई लड़ी और सत्य और अहिंसा के सिद्धांतों को अपनाया, जो बाद में उनके जीवन के मार्गदर्शक सिद्धांत बने। यह फिल्म अंग्रेजी और हिंदी दोनों भाषा में उपलब्ध यह एक महत्वपूर्ण फिल्म है क्योंकि यह गांधीजी के विचारों के महत्वपूर्ण विकास को लोकप्रिय रूप में प्रस्तुत करती है। फिल्म महात्मा गाँधी के दक्षिण अफ्रीका में व्यतीत किये 21 वर्षों का वर्णन करती है। अर्थात फिल्म 1890 के दशक में गांधीजी के दक्षिण अफ्रीका जाने से लेकर किशोरावस्था के अंत में उनकी वापसी तक के जीवन का वर्णन करती है। फिल्म मुख्य रूप से 1893 से 1915 तक के दक्षिण अफ्रीका पर आधारित है। फिल्म में दिखाया गया है कि कैसे गांधीजी को दक्षिण अफ्रीका में अध्ययन के दौरान नस्लवाद का सामना करते हैं। श्याम बेनेगल ने अपनी फिल्म में दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों के साथ हो रहे अन्याय का विरोध करने और उन्हें न्याय दिलाने के गांधी के प्रयासों के बारे में एक सम्मोहक कहानी प्रस्तुत की है। इस फिल्म की शुरुआत गांधी द्वारा नवंबर-दिसंबर 1892 में भारत के राजकोट में प्राप्त एक पत्र पढ़ने से होती है। इस पत्र में गांधी जी से एक भारतीय मुक़दमा के लिए पुनः साउथ अफ्रीका लौटने का आग्रह किया था। है। जैसे-जैसे फिल्म आगे बढ़ती है हम देखते हैं कि यह गांधीजी की आत्मकथा 'सत्य का प्रयोग' में उल्लिखित अधिकतर घटनाओं का ईमानदारी से अनुसरण करती है। जैसा की गांधीजी ने स्वयं इस पुस्तक में लिखा है कि, "इस पुस्तक में मेरे 1920 तक के दक्षिण अफ्रीका की जीवन-यात्रा है। सन 1920 के बाद उनका जीवन इतना सार्वजनिक हो गया है कि शायद ही कोई ऐसी चीज़ हो, जिसे जनता जानती न हो। फिर सन 1921 से मैं कांग्रेस के नेताओं के साथ इतना अधिक ओतप्रोत रहा हूँ कि किसी प्रसंग का वर्णन नेताओं के संबंध की चर्चा किये बिना मैं यथार्थ रूप में कर ही नहीं सकता।"14 इस तरह हम देखते हैं कि फिल्म उनकी आत्मकथा के अनुरूप इनके साउथ अफ्रीका में व्यतीत अहम् पलों का झांकी है।आत्मकथा के अनुक्रम 'सभ्य अंग्रेजी पोशाक' और 'लज्जाशील-मेरी चाल-ढाल' को ध्यान में रखतें हुए श्याम बेनेगल ने गांधीजी की भूमिका में रजीत कपूर को उसी रूप में ढाला है। जिसका पूरा अनुसरण अभिनेता रजीत कपूर ईमानदारी से करते हैं। जब फिल्म अपनी गति से आगे बढ़ती है तो हम देखते हैं कि गांधीजी लंदन में एक प्रशिक्षित 24 वर्षीय युवा बैरिस्टर हैं, जब वह अकेले दक्षिण अफ्रीका पहुंचे तब उन्होंने पश्चिमी कपड़े पहने और स्वयं को एक वकील के रूप में सोचा, परंतु जैसे ही वह कोर्ट में पहुंचते हैं उन्हें विभिन्न प्रकार के भेदभाव का सामना करना पड़ता है। इस घटना में सबसे पहले उन्हें उनके भारतीय प्रतीक पगड़ी को उतारने से शुरू हुई, जिसे हम फिल्म में देखते हैं।श्याम बेनेगल

ने आत्मकथा में 'सभ्य अंग्रेजी पोशाक' और 'मेरी शालीनता' के क्रम को ध्यान में रखते हुए गांधी जी की भूमिका में रजित कपूर को लिया है। अभिनेता रजित कपूर उसी किरदार का ईमानदारी से पालन करते हैं। जैसे-जैसे फिल्म अपनी गति से आगे बढ़ती है, हम देखते हैं कि गांधी जी लंदन में प्रशिक्षित एक 24 वर्षीय युवा बैरिस्टर हैं, जब वे अकेले दक्षिण अफ्रीका पहुंचते हैं, तो वे पश्चिमी कपड़े पहनते हैं और खुद को वकील मानते हैं, लेकिन जैसे ही वे अदालत में पहुंचते हैं, उन्हें कई तरह के भेदभाव का सामना करना पड़ता है। यह घटना सबसे पहले उनके द्वारा अपनी भारतीय प्रतीक पगड़ी उतारने से शुरू हुई, जिसे हम फिल्म में देखते हैं।

ठीक इस घटना का वर्णन इनकी आत्मकथा 'सत्य का प्रयोग' के 'अनुभवों की बागानी' में चित्रित किया गया कि कैसे ब्रिटिश सरकार ने उन्हें कोर्ट में अपनी पगड़ी को उतरने के लिए कहा, जिसका उन्होंने खुलकर विरोध किया। वे अपनी आत्मकथा में लिखते हैं कि, "मैंने पगड़ी के किस्से को लेकर अपने और पगड़ी के बचाव में समाचार पत्रों के नाम पत्र लिखा। समाचार-पत्रों में मेरी पगड़ी की खूब चर्चा हुई। इस तरह, अनायास ही मैंने तीन-चार दिनों में दक्षिण अफ्रीका में प्रसिद्ध पा ली। किसी ने मेरा पक्ष लिया तो कुछ ने मेरी तीखी आलोचना की। मेरी पगड़ी तो लगभग अंत तक बनी रही।"[15] इस तरह उन्होंने दक्षिण अफ्रीका में अपने अहिंसात्मक प्रतिरोध की शुरुआत करते हुए सत्य को दृढ़ता से रखकर अपने सिद्धांतो को विकसित किया। फिल्म आगे बढ़ते हुए आत्मकथा 'सत्य का प्रयोग' में लिखे घटना के अनुरूप 'प्रिटोरिया जाते हुए' प्रथम श्रेणी के डिब्बे में बैठने के कारण धक्का देकर ट्रेन से उतारने की मार्मिक घटना का वर्णन किया है। फिर गाँधी जी ने महारोग रंगभेद को मिटाने के लिए कठिन संघर्ष किए क्योंकि उस दौरान दक्षिण अफ्रीकी संस्कृति में भारतीयों को "रंगीन" और अन्य भारतीय श्रमिकों को "सैमी"कहा जाता था। सैमी का अर्थ 'कुली' शब्द से लिया जाता था जो एक अपमानजनक शब्द था। स्वयं गांधीजी को भी इस अपमान का घूंट पीना पड़ा। भारतीयों के साथ हो रहे भेदभाव देखकर गांधीजी बहुत व्यथित हुए। इन्होंने भारतीय श्रमिकों के साथ दुर्व्यवहार और अतिरिक्त कर जैसे भेदभाव के विरोध में दक्षिण अफ्रीका में ही रहने का निर्णय लिया। इसी क्रम में ईसाईयों से संपर्क, मुकदमें की तैयारी, नेटाल इंडियन कांग्रेस, तीन पौण्ड का कर, गूढ़ यूरोपियन संबंध, अंग्रेजों से परिचय, फिनिक्स की स्थापना, कस्तूरबा का साहस, सत्याग्रह की उत्पत्ति आदि घटनाओं का फिल्म में जो वर्णन है वह आत्मकथा में वर्णित घटनाओं से प्रभावित प्रतीत होता है। इस फिल्म को देखने के पश्चात् मार्मिक अनुभूति होती है जिसमें लंदन में शिक्षा प्राप्त एक वकील के कटु अनुभवों तथा उसके राजनीतिक प्रयासों में कई उतार-चढ़ाव को प्रस्तुत किया गया है। फिल्म में यह भी दिखाया गया है कि किस प्रकार वे अपने परिवार का त्याग करके आमजनमानस के नेता बन गए। उनके वैवाहिक जीवन में उत्पन्न संघर्षों को भी बहुत खूबसूरती से प्रस्तुत किया गया है। फिल्म के अंत में गांधीजी पुनः अपने देश लौटते समय कहते हैं कि, "मैं हमेशा एक दक्षिण-अफ्रीकी हिन्दुस्तानी ही रहूँगा। मैं ये सबक कैसे भूल सकता हूँ कि शांति का समाधान केवल भीषण संघर्ष में ही हो सकता है। यदि हम अपनी आत्मा से खोजें कि हम सब एक हैं। शांति और समन्वय ही हमारी इंसानियत की निशानी है।"[16]

संक्षेप में कहें तो फिल्म 'द मेकिंग ऑफ द महात्मा' एक युवा वकील से एक राष्ट्र के प्रतीक तक की गांधी की यात्रा की सम्मोहक कहानी है, जो महात्मा के बारे में नहीं बल्कि उनकी महानता की और उनके सफर की कहानी है। यह एक ऐसा सफर था जिसमें बलिदान की मांग थी। गांधीजी अपनी पूरी निष्ठा से अपने इस सफर में निरंतर संघर्षरत रहे। मुझे लगता है कि इसके अलावा ऐसी कोई फिल्म नहीं है जिसमें गांधी के शुरुआती कार्यों को इतने विस्तार से दिखाया गया हो। हममें से बहुत से लोग भारत लौटने से पहले महात्मा गांधी के प्रारंभिक जीवन के

बारे में नहीं जानते हैं। जहाँ उन्होंने अपने राजनीतिक विचारों, नैतिकता और राजनीति को विकसित किया। वहां उन्होंने विरोध प्रदर्शन किया और नागरिक अधिकारों के लिए लडाई की। इस तरह 'द मेकिंग ऑफ द महात्मा, फिल्म और 'सत्य के प्रयोग' आत्मकथा के बीच गहरा संबंध है। फिल्म गांधीजी के जीवन के उन पहलुओं को दृश्य रूप में प्रस्तुत करती है, जिन्हें उन्होंने अपनी आत्मकथा में शब्दों के माध्यम से व्यक्त किया है। फिल्म गांधीजी के जीवन के उस दौर को चित्रित करती है, जब उन्होंने सत्य और अहिंसा के सिद्धांतों को अपनाया और अपने प्रयोगों के माध्यम से महात्मा बनने की दिशा में कदम बढ़ाया। 'द मेकिंग ऑफ द महात्मा' फिल्म महात्मा गांधी की आत्मकथा 'सत्य के प्रयोग' से गहराई से प्रभावित है, क्योंकि यह फिल्म गांधीजी के जीवन के उस महत्वपूर्ण चरण को दर्शाती है, जब उन्होंने दक्षिण अफ्रीका में सत्य और अहिंसा के अपने सिद्धांतों को विकसित किया।

मैंने गांधी को नहीं मारा' (अनुवाद, आई डिड नॉट किल गांधी) 2005 की भारतीय हिंदी भाषा की ड्रामा फिल्म है जो जाह्नु बरुआ द्वारा निर्देशित और अनुपम खेर द्वारा निर्मित है। फिल्म में अनुपम खेर और उर्मिला मातोंडकर मुख्य भूमिकाओं में हैं। फिल्म एक सेवानिवृत्त हिंदी प्रोफेसर उत्तम चौधरी के पतन की कहानी बताती है,जब वह मानसिक पीड़ा का शिकार हो जाता है। प्रो. उत्तर चौधरी हिंदी विभाग के एक प्रसिद्ध और प्रतिष्ठित प्रोफेसर हैं। इन्होंने हिंदी के क्षेत्र में अपना बहुत नाम कमाया है, क्योंकि वे कई किताबें लिखते रहते हैं। जब वह एक व्यक्ति को अखबार में मोहनदास गांधी की तस्वीर पर लापरवाही से ऐशट्रे रखते हुए देखते हैं, तो उसकी बुढ़ापा बढ़ जाती है। एक रात उनकी बेटी त्रिशा (उर्मिला मातोंडकर अभिनीत) और बेटे करण को पता चलता है कि उनके (प्रो. उत्तम) कमरे में आग लगी हुई है, तृषा अपने घबराये पिता (प्रो. उत्तम) को एक डॉक्टर के पास ले जाती है जो कहता है, "कुछ नहीं किया जा सकता|" क्योंकि उनके पिता को लाइलाज बीमारी है। वैसे तो यह फिल्म गांधीजी की आत्मकथा 'सत्य के प्रयोग' से बिलकुल भिन्न है। उनके जीवन से संबंधित किसी भी घटना का जिक्र नही हुआ है। फिल्म देखने के पश्चात् प्रतीत होता है कि यह फिल्म जरूर गांधीवादी विचारधारा से प्रेरित है। यह अलग तरह की कहानी है जिसमें डीमेंसिया (ऐसी बीमारी जिसमें मनुष्य सच और कल्पना में अंतर करना भूल जाता है), मरीज उत्तम चौधरी की कहानी दिखाई गई है, जिन्हें बचपन की कुछ घटनाओं के कारण ये वहम हो जाता है कि उन्होंने गांधी जी की हत्या की है। उत्तम को लगता है कि जहां गांधी जी की असल में हत्या हुई थी वहां उन्होंने अपनी खिलौने वाली बंदूक से गांधीजी गांधी जी को मारा है। उत्तम की बीमारी से निपटने के लिए उनकी बेटी को खूब संघर्ष करना पड़ता है। उत्तम की बेटी उसकी बीमारी से निपटने के लिए काफी संघर्ष करती है। फिल्म में हम दो तरह की भावनाओं का अनुभव करते हैं। पहली वो जो मन को शांति देती है और दूसरी वो जो हमारी अंतरात्मा को झकझोरती है। फिल्म 'मैंने गांधी को नहीं मारा' किसी भी तरह से गांधी जी के जीवन से संबंधित नहीं है, लेकिन इसकी कहानी हमारे मन को बदलने की ताकत रखती है। फिल्म में एक बेहद मार्मिक संवाद है जिसमें काल्पनिक गांधीजी की भूमिका में प्रो. उत्तम कहते हैं, "अब मैं लोगों के दिलों में नहीं रहता, मैं हर जगह रहता हूं, राजनीतिक दलों के दफ्तरों में, सरकारी दफ्तरों में, अदालतों में...यहां तक कि देश की जनता ने मुझे नोटों पर छाप दिया है। मैं हर जगह हूं, लेकिन लोगों के दिलों में नहीं, क्योंकि आपकी आज की दुनिया में हर किसी को उसी से खतरा है जिसके दिल में गांधी है। भारत को मोहनदास करमचंद गांधी से खतरा है। मुझे राष्ट्रपिता बना दिया गया, लेकिन मुझे तस्वीरों और मूर्तियों में कैद करके रखा गया है।" साल में दो ही बार मिलने आते हैं, एक जिस दिन मैं पैदा हुआ था और दूसरा वो दिन जब नाथूराम गोडसे ने मुझे गोली मारी थी...। 2 अक्टूबर और 30 जनवरी, लेकिन गाँधी जी फिर बोले कोई बात नहीं उत्तम, मुझे भी इन लोगों से नहीं मिलना है चाहिए मुझे ऐसी आज़ादी और देशप्रेमी, जिसका देशप्रेम सिर्फ जंग के वक़्त जागे, ऐसे नेता जिनके लिए भारत केवल सरकार की कुर्सी है। देशवासियों को ऐसे नेता नहीं चाहिए जो अहिंसा की दुहाई देते हैं लेकिन उनके दिल में हिंसा है। क्या बना दिया तुमने इस देश को? ऐसे आज़ादी के लिए तो नहीं लड़ें थे हम।

डर लगता है मुझे तुम लोगों से, नहीं चाहिए मुझे यह भारत, क्या बना डाला इस देश का....(करुणात्मक स्वर के साथ)|”[17] ‘मैंने गांधी को नहीं मारा’ यह एक विचारोत्तेजक फिल्म है जो दर्शकों के मन में लंबे समय तक रहती है और समाज के मन की जटिलताओं पर गहरा प्रभाव छोड़ती है। भले ही यह संवाद गांधीजी की आत्मकथा से नहीं लिया गया है, लेकिन यदि वे आज जीवित होते तो शायद ऐसा ही लिखकरअपनी वेदना प्रकट करते, क्योंकि उन्होंने अपनी आत्मकथा में लिखा हैं कि, “सत्य को मैंने जिस रूप में और जिस मार्ग से देखा है, उसी तरह प्रकट करने का मैंने सतत प्रयत्न किया है और पाठकों के लिए उसका वर्णन करके चित्त में शांति का अनुभव किया है, क्योंकि मैंने आशा यह रखी है कि इससे पाठकों ने सत्य और अहिंसा के प्रति अधिक आस्था उत्पन्न होगी।”[18]

एक पिता और पति के रूप में गांधीजी कैसे थे? इस पर सदैव भारत में प्रश्न खड़े किए हैं। इसी विषय को केंद्र में रखकर ‘फ़िरोज अब्बास खान’ के निर्देशन में बनी फिल्म **‘गाँधी : माय फादर’** का प्रदर्शन 2007 में किया गया। 136 मिनट की इस हिंदी भाषी फिल्म में दर्शन जरीवाला, अक्षय खन्ना, भूमिका चावला, शेफाली शाद आदि ने अभिनय किया हैं। फिल्म तीन भाषाओं; हिंदी, अंग्रेजी और गुजराती में उपलब्ध है जो निश्चित रूप से गांधीजी के निजी जीवन के बारे में जानकारी देती है, जिसके बारे में बहुत कम लोग जानते हैं। फिल्म की कहानी महात्मा गांधी (दर्शन जरीवाला) और उनके बड़े बेटे हरिलाल गांधी (अक्षय खन्ना) के रिश्तों पर केंद्रित है। हरिलाल अपने पिता के महान व्यक्तित्व के साए में खुद की पहचान तलाशने का प्रयास करता है, लेकिन अपने पिता की उम्मीदों पर खरा नहीं उतर पाता। सत्य और अहिंसा के आदर्शों के प्रतीक, गांधी जी अपने बेटे के जीवन में अनुशासन और कर्तव्य के प्रति सख्त नजर आते हैं। हरिलाल को अपने जीवन में कई असफलताओं और संघर्षों का सामना करना पड़ता है, जिसमें उसकी शिक्षा, करियर और निजी जीवन शामिल आदि हैं। इन सबके बीच हरिलाल की असफलताएं और गांधी जी के साथ उसके तनावपूर्ण रिश्ते फिल्म की केंद्रीय धुरी बनते हैं। गांधी जी ने अपनी आत्मकथा 'सत्य के प्रयोग' में अपने बेटों के बारे में बहुत कम लिखा है।

फिल्म भारत के अहिंसक स्वतंत्रता आंदोलन के नेता महात्मा गांधी और उनके सबसे बड़े बेटे ‘हरिलाल गांधी’ के बीच जटिल संबंधों की पड़ताल करती है। गांधीजी ने अपनी पुस्तक में सिर्फ यह तो बताया हैं कि कस्तूरबा बाई से विवाह के पश्चात इन्हें पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई, परंतु उनके साथ अपने संबंध स्थापित करने में ये प्रायः असफल नजर आते हैं। इन्होंने अपनी आत्मकथा में ‘सांसारिक जीवन में प्रवेश’ और ‘भले-बुरे का मिश्रण’ जैसे कई अनुक्रम में अपने जीवन में हुई घटनाओं में अपने पुत्रों का फुटकल वर्णन शामिल करते हैं जिसमें हम गांधीजी के मन में अपने पुत्रों के प्रति चिंता तो देखते हैं किंतु गंभीरता नहीं दिखाई देती है। गाँधीजी स्वयं अपनी आत्मकथा ‘सत्य के प्रयोग’ में ‘बच्चों की शिक्षा’ नामक उपक्रम में लिखते हैं कि, “मेरे ये प्रयोग अपूर्ण थे। लड़कों को मैं स्वयं जितना समय देना चाहता था। उतना दे नहीं सका। इस कारण दूसरी अनिवार्य परिस्थितियों के कारण मैं अपनी इच्छा के अनुसार उन्हें अक्षर ज्ञान नहीं दे सका। इस विषय में मेरे सब लड़कों को न्यूनाधिक मात्रा में मुझसे शिकायत भी रही।”[19] इस तरह यह फिल्म गांधीजी के सबसे बड़े बेटे हरिलाल के जीवन को भी बखूबी चित्रित करती है। उनका चरित्र, उनके पिता के साथ उनके मतभेद, परिवार के लिए उनका प्यार, अपने पैरों पर खड़े होने की इच्छा, उनकी विफलता व अहंकार.. आदि बड़ी संवेदन के साथ चित्रित किया गया गया है, जिसमें अक्षय खन्ना पूरी तरह से हरिलाल की भूमिका को सही ठहराते हैं।

‘दो अलग-अलग व्यक्तित्व गांधीजी (अहिंसा के पुजारी) और हिटलर (हिंसा के पुजारी, जर्मनी का तानाशाह) के जीवन को संयुक्त रूप से दिखाने वाली फिल्म **‘गाँधी टू हिटलर’** का निर्देशन में राकेश रंजन कुमार द्वारा 2011 में प्रदर्शित हुई। यह फिल्म मुख्य रूप से दो ऐतिहासिक व्यक्तित्वों के टकराव को दर्शाती है, जो गांधी और हिटलर की विचारधाराओं के बीच अंतर को बताती है। 107 मिनट की इस हिंदी भाषी फिल्म ‘गाँधी टू हिटलर’ की पटकथा नलिन सिंह और राकेश रंजन कुमार द्वारा लिखी गयी है। इस फिल्म में हिटलर का किरदार रघुबीर यादव, नेहा धूपिया इवा ब्राउन के किरदार में और महात्मा गांधी की भूमिका अभिजीत दत्त नजर आते हैं। जिन्होंने न सिर्फ फिल्म में एक व्यक्ति-विशेष का किरदार निभाया है अपितु स्वयं जिया भी हैं। क्योंकि इस फिल्म के दृश्यों से साधारणीकरण की अवस्था स्वतः ही उत्पन्न हो जाती है। यह फिल्म हिटलर नीति, आज़ाद हिंद फ़ौज, दांडी यात्रा, असहयोग आंदोलन, भूख हड़ताल जैसे कई घटनाओं के इर्द-गिर्द घूमती, यह फिल्म ‘द्वितीय विश्व युद्ध’ के दौरान जर्मन विस्तार के लिए एडॉल्फ हिटलर की बढ़ती क्रूर महत्वाकांक्षा की प्रवृत्ति को उजागर करती है जो समय के साथ तेजी से हिंसक और अमानवीय होती जाती है। जबकि दूसरी तरफ हिटलर के ही समकालीन एक अन्य राष्ट्र भारत में अंग्रेजों के खिलाफ स्वतंत्रता की लड़ाई में संघर्ष कर रहा है। अपनी पूरी शक्ति के साथ अंग्रेजों को अपने देश से बाहर करने में लगा हुआ है। इस संघर्ष में महात्मा गांधी सदैव अपने देशवासियों से अहिंसा का रुख अपनाने की अपील करते रहते हैं, तो दूसरी तरफ जर्मनी में हिटलर हिंसा का रुख अपनाता हैं जिसका उसे बहुत ही दुखद परिणाम झेलने को मिलता हैं। इस घटना को फिल्म में बड़ी मार्मिकता दिखाया गया है कि हिटलर को उसके अंत समय में सर छुपाने की भी जगह नहीं मिल रही थी। अतः इन दोनों के विचारधाराओं में घोर विरोधाभास है। एक आम प्रतिद्वंद्वी के साथ भी विचारधाराओं में बिल्कुल विपरीत। इसी क्रम में गांधीजी ने एक दिन जर्मन तानाशाह को एक पत्र लिखने का फैसला किया... उन्हें उम्मीद थी कि उनका पत्र हिटलर को अपना रास्ता बदलने के लिए प्रेरित करेंगी और द्वितीय विश्व युद्ध से बचने में भी मदद करेगी। जिससे विश्व जैसी बड़ी आपदा से बचने के लिए गाँधी का पत्र राजी करेगा, परन्तु ऐसा कुछ नहीं हुआ। इसके बाद गांधी ने हिटलर को दूसरा पत्र तब लिखा जब हिटलर स्वयं अपने पतन के करीब था, और वह एक भूमिगत बंकर में कैद होकर चारों ओर से अपने ही लोगों के विश्वासघात से त्रस्त था। जिसका परिणाम उसे आत्महत्या से चुकाना पड़ता है।’[20]

संक्षेप में, यह गांधीजी जी की आत्मकथा ‘सत्य के प्रयोग’ में लिखी घटनाओं पर आधारित फिल्म नहीं है, क्योंकि फिल्म में शामिल सभी घटनाएँ 1920 के बाद की हैं। लेकिन गांधीजी द्वारा अपने जीवन में किए गए सत्य के प्रयोग की झलकियाँ अवश्य दिखाती हैं। इस प्रकार, हम गांधीजी और हिटलर की विचारधाराओं में विरोधाभास और हिटलर के क्रूर और विनाशकारी तरीकों के उल्लेखनीय परिणाम देखते हैं। यद्यपि महात्मा गांधी पर कई फिल्में बनी हैं, जिनमें अकादमी पुरस्कार विजेता फिल्म ‘गांधी’ प्रमुख हैं। ‘गांधी टू हिटलर’ पहली हिंदी फिल्म है जो सेल्युलाइड पर नाजी नेता की कहानी बताने का प्रयास करती है। यह हिटलर के पतन के बाद बर्लिन के एक बंकर में छिपे उसके अंतिम दिनों को दर्शाती है। हालांकि “गांधी टू हिटलर” और "सत्य के प्रयोग" के बीच कोई सीधा संबंध नहीं है, लेकिन फ़िल्म हिटलर के विपरीत गांधी के सिद्धांतों और आदर्शों को दर्शाती है। यह फिल्म अहिंसा, सत्य, और मानवीय मूल्यों के प्रति गांधीजी की प्रतिबद्धता को उजागर करती है, जो “सत्य के प्रयोग” के केंद्रीय विचार हैं। इस दृष्टि से, फिल्म गांधीजी की आत्मकथा से प्रेरित मानी जा सकती है।

‘सन् 2006 में बनी हिंदी भाषी फिल्म ‘**गांधीगिरी**’ का निर्देशन सनोज मिश्रा ने किया। इस फिल्म की कहानी ओमपुरी के इर्द गिर्द घुमती है जो मोरिसस में रहते हैं और भारत आकर वह गांधीगिरी सिखाना चाहते हैं। फिल्म में आधुनिक भारत के इतिहास का स्वतंत्रता संग्राम, 1942 के भारत छोड़ों आंदोलन में जब पूरा देश अंग्रेजों

के खिलाफ़ खडा हो गया था। उसी समय कई रियासती राजाओं ने इस स्वतंत्रता संग्राम में खुलकर गाँधीजी का साथ दिया। इन्हीं राजाओं में से एक थे शिवगढ़ रियासत के राजा श्री रायबहादुर के पिता राजा महेश्वर सिंह थे। महेश्वर सिंह एक समय पर अंग्रेजों के समर्थक थे परंतु बाद में गांधीजी से इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने भी अंग्रेजों का खुलेआम विरोध किया। उनकी बगावत ने अंग्रेजों को काफी आघात किया। इसके कारण अंग्रेजों ने इन्हें बेइज्जत करने के लिए बंधुआ मजदूर बनाकर मोरिसस भेज दिया। लेकिन गाँधीजी के विचार किसी देश की सीमा तक सीमित नहीं थे। महेश्वर सिंह ने मोरिसस में अपने साथ के मजदूरों को मानवाधिकार के प्रति जागरुक किया और उनका नेतृत्व करते हुए मोरिसस में अपनी एक नई पहचान बनाई। फिल्म की शुरुआत प्रवासी भारतीय दिवस के अवसर पर मंच से गांधीवादी विचारधारा पर राय बहादुर के भाषण से होती है, वे गांधीजी के सिद्धांतों में दृढ़ विश्वास रखते हैं। उनके पिता ने स्वतंत्रता संग्राम में सक्रिय भूमिका निभाई और उनके साथ घनिष्ठ रूप से जुड़े रहे। भारत आकर वे रायबरेली में रहते हैं और सत्य एवं अहिंसा से भटके लोगों को रास्ता दिखाते हैं। भारत में उसकी मुलाकात चार अलग-अलग लोगों से होती है जिन्होंने विभिन्न परिस्थितियों के कारण गलत रास्ता अपना लिया है। साहेब उन्हें गांधी के सिद्धांतों का महत्व समझाते हैं|'[21] आज भारतीय समाज जिस तरह से गांधी जी के मूल्यों को भूलता जा रहा है, उन्हें केंद्रीय बिंदु बनाकर उनके मूल्यों को जीवित रखने के लिए यह फिल्म प्रासंगिक है। यद्यपि फिल्म किसी भी तरह से गांधी जी की आत्मकथा 'सत्य के प्रयोग' से संबंध नहीं रखती है, क्योंकि इसमें गांधी जी के जीवन से संबंधित कोई भी घटनाएं नहीं हैं, तथापि इस फिल्म की पृष्ठभूमि आंशिक रूप से गांधी जी द्वारा शुरू किए गए भारत छोड़ो आंदोलन से जुड़ी हुई है।

महात्मा गांधी (मोहनदास करमचंद गाँधी) के सिद्धांत सत्य और अहिंसा से प्रेरित वर्ष 2018 में प्रदर्शित हिंदी भाषी फिल्म **'हमने गांधी को मार दिया'** का निर्माण व निर्देशन नईम ए. सिद्दीकी ने किया| इसमें महात्मा गांधी की हत्या के बाद भारत के सामाजिक और राजनीतिक परिदृश्य को एक नए दृष्टिकोण से प्रस्तुत किया गया है। फिल्म भारतीय समाज में व्याप्त विभाजन, हिंसा और घृणा की प्रवृत्ति को उजागर करती है। फिल्म की कहानी 30 जनवरी 1948 को महात्मा गांधी की हत्या के दिन पर आधारित है जो मुख्य दो पात्रों के इर्द-गिर्द घूमती है| एक गांधीवादी शिक्षक है और दूसरा सांप्रदायिक विचारधारा से प्रभावित व्यक्ति। एक ही कमरे में बंद होने के बाद दोनों के बीच संवाद और संघर्ष फिल्म की कहानी को आगे बढ़ाते हैं। फिल्म इस मानसिक-भावनात्मक संघर्ष को उजागर करती है जिसमें दोनों पात्र अपनी-अपनी विचारधाराओं का बचाव करते हुए एक-दूसरे को समझने की कोशिश करते हैं।

अशोक त्यागी द्वारा निर्देशित हिंदी भाषी फिल्म ड्रामा 'मैंने गाँधी को क्यों मारा' 2022 में प्रदर्शित हुआ| यह फिल्म नाथूराम गोडसे पर बनी है, जिसने वर्ष 1948 में राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की गोली मार कर हत्या की थी। यह फिल्म नाथूराम गोडसे के गांधीजी की हत्या के पीछे विचारों को उजागर कराती है। 45 मिनट की यह लघुफिल्म, कोर्ट के अंदर गोडसे द्वारा अपने मत प्रस्तुत करने की कथा है। फिल्म आने के बाद ओटीटी प्लेटफॉर्म या किसी अन्य ऑनलाइन सोशल मीडिया पर इसकी किसी भी सामग्री के प्रदर्शन या प्रकाशन पर रोक लगाने की मांग सुप्रीम कोर्ट से की गई थी। परंतु आज यह यू टूयूब नामक प्लेटफोर्म पर उपलब्ध है। याचिकाकर्ता ने कहा कि फिल्म 'मैंने गांधी को क्यों मारा' नाथूराम गोडसे द्वारा महात्मा गांधी की हत्या और अदालत के मुकदमे पर आधारित है. फिल्म महात्मा गांधी की छवि को धूमिल करने का प्रयास करती है और साथ ही साथ नाथूराम गोडसे का महिमामंडन करती है।"[24] फिल्म गोडसे के दृष्टिकोण से गांधीजी की विचारधारा की आलोचना करती है। इसमें गोडसे का मानना

है कि गांधीजी के सिद्धांतों ने हिंदू समाज के हितों को नुकसान पहुँचाया व सांप्रदायिक तनाव को बढ़ावा दिया है। फिल्म गांधीजी के धार्मिक समरसता के सिद्धांतों पर उठाए गए सवालों को प्रस्तुत करती है। परिणामस्वरूप उत्पन्न हुई समस्याओं की चर्चा करती है। जबकि गांधीजी ने धार्मिक व सांप्रदायिक एकता को महत्वपूर्ण माना। उनके सिद्धांतों में सभी धर्मों के प्रति समान सम्मान व सहिष्णुता थी| फिल्म को देखने के स्पष्ट हुआ कि यह गांधीजी की आत्मकथा से संबंधित नहीं हैं। क्योंकि फिल्म में उनके जीवन वृतांत का चित्रण नहीं हैं। इसमें गांधीजी की हत्या के पीछे गोडसे का उद्देश्य पता चलता है जो गांधीवादी विचारों के विपरीत था। अतः फिल्म "मैंने गांधी को क्यों मारा" गांधीजी की आत्मकथा "सत्य के प्रयोग" से प्रत्यक्ष रूप से प्रेरित नहीं है, लेकिन इसमें गांधीजी के विचारों व सिद्धांतों की आलोचना है, जो गांधीजी के जीवन, उनके सिद्धांतों की जटिलताओं को दर्शाती है। फिल्म गोडसे के दृष्टिकोण से गांधीजी की हत्या की परिस्थितियों व इसके पीछे के तर्कों को समझाने का प्रयास करती है, जो गांधीजी की विचारधारा के विभिन्न पहलुओं को उजागर करती है।

गांधीजी के जीवन, उनके विचारों पर आधारित आज भी फिल्मों का निर्माण किया जा रहा है, जैसे-हे राम, लगे रहो मुन्ना भाई, महात्मा (तेलुगु भाषी) आदि। जिसका उद्देश्य उनके विचारों व सिद्धांतों का प्रचार करना, इतिहास को जीवंत बनाना, सामाजिक- राजनीतिक मुद्दों की समझ बढ़ाना, प्रेरणा प्रदान करना, सांस्कृतिक व राष्ट्रीय पहचान को मजबूत करना और उनके जीवन की जानकारी प्रदान करना है। ये फिल्में गांधीजी के जीवन के विभिन्न पहलुओं को उजागर करके दर्शकों को शिक्षित व प्रेरित करने का प्रयास करती हैं।

संदर्भ-ग्रंथ सूची :

1. तिवारी ;110006-नयी दिल्ली,दरियागंज ,अंसारी रोड;राधाकृष्ण प्रकाशन ;पाश्चात्य काव्यशास्त्र ;रामपूजन, .140 .पृष्ठ सं ;1979 : संस्करण
2. तिवारी ;110006-नयी दिल्ली,दरियागंज ,अंसारी रोड;राधाकृष्ण प्रकाशन ;पाश्चात्य काव्यशास्त्र ;रामपूजन, ;1979 : संस्करणपृष्ठ सं.169.
3. मिश्र ;भागीरथ2014 .डॉ,काव्यशास्त्र-वाराणसी,चौक,विशालाक्षी भवन ;विश्वविद्यालय प्रकाशन ; .34-पृष्ठ सं.30 :संस्करण;221001
4. वहीं.34-पृष्ठ सं.30 ;
5. साहनी, डॉ ;2016 दीनानाथ .भारत में हिंदी सिनेमाराजेंद्र नग,प्रेमचंद्र मार्ग ;बिहार हिंदी ग्रंथ अकादमी ;र-पटना, .पृष्ठ सं.5:प्रथम संस्करण ;800016
6. त्यागी ;निर्दोष2022,हिंदी सिनेमा के -दिल्ली नई,दरियागंज ,मार्ग सुभाष नेताजी ;प्रकाशन सामयिक ;वर्ष 100 .सं.17 पृष्ठ :संस्करण ;110002
7. मनोज पब्लिकेशन एडिटोरियल बोर्ड द्वारा प्रकाशन ;110006 -नई दिल्ली,चांदनी चौक,कूचा आलम ; संस्करण .2019 :
8. https://www.hindikunj.com//03/2021sahitya-samaj-ka-darpan-in-hindi.html-Date .2024/07/15
9. गाँधीLDS ;सत्य के प्रयोग;मोहनदास करमचंद, प्रकाशन ,दरियागंज,भारत राम रोड;नई दिल्ली ;110002 - संस्करण .मूल ग्रन्थ ;2020 :

10. https://scroll.in/reel//866864nine-hours-to-rama-the-story-behind-the-film-image-that-many-believe-depicts-gandhis-assassination.2024/06/16-Date
11. https://www.spiritualityandpractice.com/films/reviews/view/5012?id=5012Date-.2024/06/16
12. गाँधी LDS ;सत्य के प्रयोग;मोहनदास करमचंद,प्रकाशन ,दरियागंज,भारत राम रोड;नई दिल्ली ;110002 -संस्करण .पृष्ठ सं.113 ;2020 :
13. वहीं.पृष्ठ सं.157 ;
14. वहीं.पृष्ठ सं.479 ;
15. वहीं; पृष्ठ सं.109.
16. फिल्म ' :***द मेकिंग ऑफ द महात्मा.संवाद*** '
17. फिल्म ' :**मैंने गांधी को नहीं मारा संवाद** '
18. गाँधी LDS ;सत्य के प्रयोग;मोहनदास करमचंद,प्रकाशन ,दरियागंज,भारत राम रोड;नई दिल्ली ;110002 -संस्करण .पृष्ठ सं.477 ;2020 :
19. वहीं.पृष्ठ सं.193 ;
20. https://www.india.com/hindi-news/entertainment-hindi/best-bollywood-dialogues-of-gandhi-based-movies- .2024/05/05-date/2509075
21. https://www.patrika.com/bollywood-news/movies-that-displays-gandhigiri-to-aware-people-6435684date- .2024/05/05
22. फिल्म :गांधीगिरी.संवाद ;
23. https://mayapuri.com/hi/reviews/hey-ram-hamne-gandhi-ko-maar-diya-movie-review .2024/05/05-date
24. https://www.tv9hindi.com/india/supreme-court-directs-petitioner-to-move-high-court-with-his-plea-movie-why-i-killed-gandhi-.1035598html.2024/05/05-Date

रूबी पाण्डेय

शोधार्थी, हिंदी विभाग, हरियाणा केंद्रीय विश्वविद्यालय, महेंद्रगढ़- हरियाणा

(ईमेल: rubipandeycuh@gmail.com

बीर पाल सिंह यादव

आचार्य और विभागाध्यक्ष, हिंदी विभाग, हरियाणा केंद्रीय विश्वविद्यालय,

महेंद्रगढ़- हरियाणा (ईमेल: bpshv20@gmail.com)

भारतीय संस्कृतियों में विविधता को समझने के लिए सहयोगात्मक पद्धति का उपयोग

डॉ. (श्रीमती) पूनम मागू

विशेष रूप से आशाजनक छात्र-केंद्रित रणनीति सहयोगात्मक शिक्षण है। सहयोगात्मक शिक्षण में छात्र अवधारणाओं पर चर्चा करने या व्यावहारिक समाधान खोजने के लिए छोटे समूहों में एक साथ काम करते हैं।

शोध सार: आज कक्षा में प्रभावी ढंग से शिक्षण के उपयोग के लिए कई रणनीतियाँ उपलब्ध हैं। विशेष रूप से मेधावी छात्र-केंद्रित रणनीति एक सहयोगात्मक शिक्षण है। सहयोगात्मक शिक्षा में छात्र छोटे समूहों में मिलकर अवधारणाओं पर चर्चा करते हैं अथवा कार्यशील समाधान खोजते हैं। यह उन विषयों के लिए लाभकारी है जो आलोचनात्मक सोच तथा व्यावहारिक बदलाव को प्रोत्साहित करते हैं। दिल्ली विश्वविद्यालय द्वारा आरंभ किए गए मूल्यवर्धन पाठ्यक्रम-'संस्कृति और संचार' में इसका उपयोग किया गया। यह शोध विभिन्न भारतीय उप-संस्कृतियों के बीच समानताएं सिखाने के लिए सहयोगात्मक शिक्षा के उपयोग की जांच करता है। अध्ययन ने पाया कि इस विधि ने छात्रों में विषय की समझ को महत्वपूर्ण रूप से बढ़ाया। कई सूचीबद्ध समानताएं करने में वे स्वयं सक्षम हुए हैं। अपने स्वयं के प्रयासों के आधार पर निष्कर्ष पर पहुँचने में उनके व्यवहार पर सकारात्मक प्रभाव की संभावना में वृद्धी हुई। कुल मिलाकर यह तकनीक एक अत्यधिक प्रभावी शैक्षिक तकनीक प्रतीत होती है।

मुख्य शब्द: सहयोगात्मक शिक्षण, संस्कृति और संचार, शिक्षण-सीखने की रणनीतियाँ, सहकर्मी निर्देश, आलोचनात्मक सोच

भारतीय संस्कृतियों में विविधता

भारत अनेक संस्कृतियों वाला देश है जिसकी अपनी अनूठी विशेषताएं हैं। जिस तरह अलग-अलग रंग मिलकर एक खूबसूरत इंद्रधनुष बनाते हैं, उसी तरह अलग-अलग संस्कृतियों से मिलकर 'भारत' बना है। यह एक निर्विवाद सत्य है, लेकिन यह भी एक तथ्य है कि विभिन्न संस्कृतियों की उपस्थिति गलतफहमियों और अंततः असहमति को जन्म दे सकती है। इसे रोकने के लिए जरूरी है कि एक-दूसरे की संस्कृति के प्रति सम्मान पैदा करने की भावना विकसित की जाय। शायद यह एक कारण था कि दिल्ली विश्वविद्यालय द्वारा स्नातक छात्रों को पढ़ाए जाने वाले मूल्य संवर्धन पाठ्यक्रम के रूप में' 'संस्कृति और संचार' नामक विषय पाठ्यक्रम का शीर्षक बनाया गया। पाठ्यक्रम को स्पष्ट उद्देश्यों और पाठ्यक्रम के परिणामों के साथ डिज़ाइन किया गया, लेकिन किसी भी अन्य पाठ्यक्रम की तरह यह शिक्षक पर निर्भर था कि वह किस विधि का उपयोग करेगा। यह केवल ज्ञान के स्थानांतरण का मामला नहीं अपितु छात्रों की समझ भी विकसित करनी थी। ज्ञान के माध्यम से समझ और फिर अन्य संस्कृतियों की सराहना को लक्षित करना था। इस लक्ष्य को ध्यान में रखते हुए छात्रों को पढ़ाने के लिए सहयोगात्मक शिक्षा का उपयोग करने का निर्णय लिया गया। यह पत्र संस्कृति और संचार को पढ़ाने के लिए सहयोगात्मक शिक्षण के उपयोग की पड़ताल करता है और छात्रों की समझ के संदर्भ में गुणात्मक परिणामों का विश्लेषण करता है।

सहयोगात्मक शिक्षण एक ऐसी विधि है जिसमें छात्र अवधारणाओं पर चर्चा करने या व्यावहारिक समाधान खोजने के लिए छोटे समूहों में मिलकर एक साथ चर्चा करते हैं या कार्यशील समाधान खोजते हैं। डिलेनबॉर्ग (1999)[1], ने "सहयोगात्मक शिक्षण" की व्यापक परिभाषा दी है, "एक ऐसी स्थिति जिसमें दो या दो से अधिक लोग एक साथ मिलकर कुछ सीखते हैं या सीखने का प्रयास करते हैं" (पृष्ठ 1)। लाल और लाल (2012)[2]

के अनुसार, "सहयोगात्मक शिक्षण एक शैक्षिक दृष्टिकोण है जिसमें छात्र; किसी समस्या को हल करने, किसी कार्य को पूरा करने या किसी उत्पाद को बनाने के लिए समूहों में एक साथ मिलकर काम करते हैं" (पृष्ठ 491)। यह किसी भी शिक्षक-केंद्रित दृष्टिकोण से भिन्न है क्योंकि इसमें छात्र स्वयं जानकारी और निर्देश का स्रोत होते हैं। बावर और रिचर्ड्स (2006)[3], के अनुसार, "सहयोगात्मक शिक्षा में शिक्षक अक्सर एक सुविधाकार की भूमिका निभाता है बजाय इसके कि वह ज्ञान या नियंत्रण का प्राथमिक स्रोत हो" (पृ.79)। जब छात्र एक-दूसरे को सिखाते हैं या एक मुद्दे पर चर्चा करते हैं, तो गलतफहमियों और भ्रांतियों की संभावना कम होती है। इसमें शिक्षा सकारात्मक व्यवहार परिवर्तन लाने में अधिक प्रभावी होती है।

कॉर्नेल विश्वविद्यालय के शिक्षण नवाचार केंद्र ने सहयोगात्मक शिक्षण के निम्नलिखित लाभ सूचीबद्ध किए हैं।

1. उच्च स्तरीय सोच, मौखिक संचार, आत्म-प्रबंधन और नेतृत्व कौशल का विकास।
2. छात्र-संकाय संपर्क को प्रोत्साहन।
3. छात्रों में प्रतिधारण, आत्म-सम्मान और जिम्मेदारी में वृद्धि।
4. विविध दृष्टिकोणों की जानकारी और समझ में वृद्धि।
5. वास्तविक जीवन की सामाजिक तथा रोजगार स्थितियों के लिए तैयारी। (कॉर्नेल विश्वविद्यालय शिक्षण नवाचार केंद्र, बिना तारीख के)[4]

भारतीय कक्षाओं में भी सहयोगात्मक शिक्षण का प्रयोग बड़ी सफलता के साथ किया गया है। आनंदगणेशन (2020)[5], ने यह पता लगाने के लिए एक अध्ययन किया कि क्या ग्यारहवीं कक्षा के छात्रों द्वारा सहयोगात्मक शिक्षण दृष्टिकोण के माध्यम से रसायन विज्ञान अवधारणाओं को सीखना संभव और बेहतर है? निष्कर्ष निकाला कि यह वास्तव में प्रभावी था। राजशेखर (2019)[6], ने भी निष्कर्ष निकाला कि सहयोगात्मक तरीकों से सीखने से वर्तनी कौशल में सुधार होता है (पृष्ठ 181)। साक्षी (2019)[7], ने भी पाया कि सहयोगात्मक शिक्षण पद्धति पारंपरिक शिक्षण विधियों की तुलना में न केवल छात्रों के अंग्रेजी व्याकरण को बेहतर बनाने में अधिक प्रभावी थी, बल्कि सामाजिक क्षमता में सुधार और शिक्षा से संबंधित तनाव को कम करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

सहयोगात्मक शिक्षा के माध्यम से संस्कृति और संचार सिखाना

यद्यपि सहयोगात्मक शिक्षण का उपयोग किसी भी विषय के लिए किया जा सकता है, लेकिन शोध से पता चला है कि यह उन विषयों के शिक्षण में ज्यादा योगदान है जिन्हें व्यवहार परिवर्तन लाने के लिए पढ़ाया जाता है। 'संस्कृति और संचार' एक ऐसा ही विषय है 'जिसके कुछ अपेक्षित सीखने के परिणाम हैं कि छात्र" प्राचीन भारतीय ज्ञान और आधुनिक जीवन के लिए मौलिक नैतिक मूल्यों की प्रासंगिकता को समझेंगे, अतीत और वर्तमान के बीच संवाद करेंगे और सार्थक जीवन के लिए सर्वोत्तम सिद्धांतों को अपनाने में सक्षम होंगे, नैतिक रूप से मज़बूत समाज की कल्पना करेंगे और उसके लिए काम करेंगे। इस तरह राष्ट्र को सशक्त बनाएंगे। (दिल्ली विश्वविद्यालय, 2022)[8]। इस विषय का एक और अपेक्षित परिणाम है कि यह "विविध पृष्ठभूमि के छात्रों को बहुसांस्कृतिक वातावरण के साथ एकीकृत करने तथा समावेशी समुदाय की दिशा में काम करने के लिए जीवन कौशल और आत्मविश्वास से लैस करेगा।" (दिल्ली विश्वविद्यालय, 2022)[8]। एक और अपेक्षित परिणाम जो स्पष्ट रूप से इंगित करता है कि शिक्षा का तरीका सहयोगात्मक शिक्षण होना चाहिए, वह यह कि "छात्रों को महानगरों में आने वाली चुनौतियों का समाधान करने के लिए टीम वर्क और समूह गतिविधियों में शामिल होने के लिए प्रोत्साहित किया जाएगा" (दिल्ली विश्वविद्यालय, 2022)[8]। चूंकि परिणाम छात्रों के व्यवहार में सकारात्मक बदलाव की आवश्यकता पर जोर देते हैं और टीम कार्य समूह गतिविधियों पर भी जोर देते हैंय़ इसलिए यह आवश्यक लगता

है कि सहयोगात्मक शिक्षण जैसी पद्धति का इस्तेमाल किया जाना चाहिए। यह समझना भी महत्वपूर्ण है कि संस्कृति जैसा विषय वास्तव में ज्ञान आधारित नहीं है।

ग्रेजुएट स्कूल ऑफ एजुकेशन एंड ह्यूमन डेवलपमेंट (2017)[9] ने कक्षा में छात्र सहयोग को बढ़ाने के लिए दस रणनीतियाँ सूचीबद्ध की हैं, जिनमें से एक रणनीति है कि समूह के आकार को चार या पाँच तक सीमित करना है। एक बड़े समूह में; सभी छात्र संवाद करने में सक्षम नहीं होते हैं और एक छोटे समूह में, विविध विचारों की संभावना कम हो जाती है। इसलिए, इकतीस छात्रों की कक्षा को चार-चार छात्रों के समूहों में विभाजित किया गया था। इस प्रकार, सात समूहों में चार छात्र थे और एक समूह में तीन छात्र थे। एक अन्य रणनीति छात्रों को एक-दूसरे को सुनना और "संवेदनशील रूप से असहमत होना और दूसरों के योगदान को प्रोत्साहित करना" सिखाना है (ग्रेजुएट स्कूल ऑफ एजुकेशन एंड ह्यूमन डेवलपमेंट, 2017)[9]। तदनुसार, छात्रों को एक-दूसरे को सुने, विनम्र रहें, मुद्दों पर चर्चा करने और दूसरे व्यक्ति के दृष्टिकोण को समझने की कोशिश करने के लिए कहा गया। समूहों को मुद्दों पर विस्तार से चर्चा करने और फिर उन्हें अपने निष्कर्षों को चित्रों, नोट्स आदि के माध्यम से रचनात्मक तरीके से प्रस्तुत करने के लिए पर्याप्त समय दिया गया। छात्रों को कई विषय दिए गए। वर्तमान शोधपत्र में एक विषय के निष्कर्षों पर चर्चा की गई। विषय था; 'विभिन्न भारतीय संस्कृतियों के बीच समानताएं पहचानना।'

छात्रों ने विषय पर चर्चा की और नोट्स भी बनाए। उन्होंने समानताओं की एक सूची बनाई और उपयुक्त चित्र एकत्र किए। उन्होंने जो समानताएँ सूचीबद्ध कीं, वे सहयोगात्मक शिक्षा की प्रभावशीलता पर प्रकाश डालती हैं। प्रस्तावित सुझाव थेः

1. सभी संस्कृतियों में जन्म, विवाह, प्रसव, मृत्यु आदि पर मनाए जाने वाले अनुष्ठान होते हैं।
2. सभी संस्कृतियों में जीवन के महत्वपूर्ण चरणों जैसे; बच्चे के जन्म, विवाह आदि से जुड़े गीत और नृत्य होते हैं।
3. प्रत्येक संस्कृति में अलग-अलग धार्मिक पद्धतियां होती हैं, लेकिन सभी में भक्त और शक्ति के बीच एक 'मध्यस्थ' होती है जो भक्त की पूजा में मदद करता है। अधिकांश संस्कृतियों में सूर्य, चंद्रमा, ग्रह, नदियों जैसी शक्तियों की किसी न किसी तरह से पूजा की जाती है।
4. सभी संस्कृतियों के लोग जो भोजन खाते हैं, उसमें मुख्य रूप से कार्बोहाइड्रेट होता है-जैसे चावल, गेहूँ, बाजरा आदि। इसके साथ दालें, सब्जियाँ, मांस (जहाँ मांसाहारी भोजन होता है) भी होता है। विशेष अवसरों पर तले हुए खाद्य पदार्थ और मिठाइयाँ बनाई जाती हैं।
5. अधिकांश संस्कृतियों में महिलाओं को अधिक सम्मान नहीं दिया जाता और भारतीय उपमहाद्वीप में सभी संस्कृतियों में एक स्पष्ट पुरुष पक्षपाती दृष्टिकोण है।
6. दक्षिण की कुछ संस्कृतियों को छोड़कर, मासिक धर्म का विषय, अधिकांश संस्कृतियों में एक वर्जित विषय माना जाता है।
7. एक दिलचस्प अवलोकन यह थी कि लगभग सभी संस्कृतियों में अधिकांश अपमानजनक शब्द या गालियाँ महिलाओं के नाम पर रखी जाती हैं।

इस प्रकार, छात्र समानताओं की पहचान करने में सफल रहे, जो कई शोधों के परिणामों से भी प्रमाणित होती हैं। आनंद (बिना तारीख के)[10], ने 'भारतीय संस्कृति की पंद्रह मौलिक विशेषताओं' पर अपने लेख में कहा है कि "सामाजिक समारोह, धार्मिक अनुष्ठान, त्योहार और जीवन के सभी तरीके पूरे देश में समान हैं। परिवार की पवित्रता, जातियों के नियम, उपनयन, नामकरण, शव का दाह संस्कार, रसोई की स्वच्छता आदि जैसे संस्कार सभी समुदायों और संप्रदायों में समान हैं....कर्म, पुनर्जन्म, स्वर्ग और नरक, मोक्ष, निर्वाण, आत्मा की अमरता, एकेश्वरवाद आदि की धार्मिक अवधारणाएं पूरे देश में सार्वभौमिक रूप से स्वीकार हैं।" स्पीयर एट अल। (2024)[11], यह भी रिपोर्ट करते हैं कि "दालें और अनाज भारतीय आहार के प्रमुख घटक हैं।" वही लेख परिवार में पुरुषों को प्राप्त उच्च स्थिति और महिलाओं की उपेक्षा के बारे में भी बाताता है। मासिक धर्म के संबंध में कई अध्ययनों में मासिक धर्म चक्र के दिनों में महिलाओं पर लगाए गए प्रतिबंधों की जानकारी दी गई है। बोरकर एट अल. (2022)[12], जहां तक अपशब्दों का सवाल है भौमिक (2022)[13] ने द गार्जियन में लिखा है, "भाषा पुरुषों के लिए महिलाओं को कमजोर करने का एक सामान्य तरीका है, लेकिन भारतीय जैसे पितृसत्तात्मक समाजों में यह अधिक होता है। यदि दुर्व्यवहार सत्ता के समीकरण के बारे में हैं, तो यह स्वाभाविक है कि एक दुनिया में जहाँ-संयुक्त राष्ट्र के आंकड़ों के अनुसार- लिंग समानता अभी भी 130 साल दूर है, वे इसका फायदा उठाएंगे।"

निष्कर्ष

दिलचस्प बात यह है कि कोई भी अध्ययन या लेख ऐसा नहीं मिला जो अधिकांश संस्कृतियों के धर्मों में 'मध्यस्थ' की उपस्थिति की बात करता हो। लेकिन इससे यह पता चलता है कि छात्र आलोचनात्मक सोच में संलग्न थे। सभी परिणाम इस तथ्य की ओर इशारा करते हैं कि छात्र स्वयं उत्तर देने में सक्षम हैं। अपने स्वयं के प्रयासों के आधार पर किसी निष्कर्ष पर पहुंचने की ऐसी प्रक्रिया से उनके व्यवहार पर सकारात्मक प्रभाव पड़ने की संभावना है। वह समझ सके कि अपने मतभेदों के बावजूद वे समान चुनौतियों का सामना कर रहे हैं।

संदर्भ सूची:

1. डिलेनबर्ग, पी. (1999); 'आप सहयोगात्मक शिक्षण से क्या समझते हैं?' इन पी. डिलेनबर्ग (संपादक), सहयोगात्मक शिक्षण: संज्ञानात्मक और गणनात्मक दृष्टिकोण (पृष्ठ 1-19). ऑक्सफोर्ड: एल्सेवियर. https://telearn.hal.science/hal-00190240/document
2. लाल, एम., और लाल, एम. (2012); 'सहयोगात्मक शिक्षण: यह क्या है?' प्रोसीडिया - सोशल एंड बिहेवियरल साइंसेस, 31, 491-495. https://doi.org/10.1016/j.sbspro.2011.12.092
3. बॉवेर, एम., और रिचर्ड्स, डी. (2006); 'सहयोगात्मक शिक्षण: छात्रों और शिक्षकों के लिए कुछ संभावनाएँ और सीमाएँ।' इन 23वीं वार्षिक सम्मेलन की कार्यवाही: ऑस्ट्रेलेशियन सोसाइटी फॉर कंप्यूटर्स इन लर्निंग इन टर्शियरी एजुकेशन: व्होज़ लर्निंग (पृष्ठ 79-89). https://citeseerx.ist.psu.edu/document?repid=rep1&type=pdf&doi=ba6892126f1a1023c9279444100c3c5103ac1ebe
4. कॉर्नेल विश्वविद्यालय सेंटर फॉर टीचिंग इनोवेशन. (बिना तारीख के). 'सहयोगात्मक शिक्षण.' https://teaching.cornell.edu/teaching-resources/active-collaborative-learning/collaborative-learning

5. आनंदगणेशन, पी. (2020); XI कक्षा के छात्रों द्वारा रसायन विज्ञान के अवधारणाओं का सहयोगात्मक अध्ययन [डॉक्टोरल शोध प्रबंध, पेरियार विश्वविद्यालय] शोधनगंगा. https://shodhganga.inflibnet.ac.in/bitstream/10603/336882/11/80recommendation.pdf
6. राजसेकर, टी. (2019); 'सहयोगात्मक शिक्षण के माध्यम से बोलने के कौशल में सुधार' [डॉक्टोरल शोध प्रबंध, भारथियार विश्वविद्यालय]. शोधनगंगा. https://shodhganga.inflibnet.ac.in/handle/10603/293240
7. साक्षी. (2019); 'सहयोगात्मक शिक्षण का प्रभाव: छात्रों की शैक्षणिक उपलब्धि, शैक्षणिक तनाव और सामाजिक क्षमता' [डॉक्टोरल शोध प्रबंध, महार्षि दयानंद विश्वविद्यालय] शोधनगंगा.https://shodhganga.inflibnet.ac.in: 8443/ jspui/handle/ 10603/326420
8. दिल्ली विश्वविद्यालय। (2022); 'संस्कृति और संचार' [पाठ्यक्रम, मूल्य वर्धन पाठ्यक्रम] https://www.du.ac.in/uploads/new-web/26102022_VAC.pdf
9. ग्रेजुएट स्कूल ऑफ एजुकेशन एंड ह्यूमन डेवलपमेंट. (2017, 8 सितंबर); 'कक्षा में छात्र सहयोग को बढ़ाने के 10 रणनीतियाँ.' https://gsehd.gwu.edu/articles/10-strategies-build-student-collaboration-classroom
10. आनंद. (बिना तारीख के); 'भारतीय संस्कृति की 15 मौलिक विशेषताएँ.' Your Article Library. https: //www.yourarticlelibrary.com/culture/15-fundamental-characteristics-of-indian-culture/47129
11. स्पीयर, टी. पी., डिक्सिट, के. आर., थापर, रोमिला, श्वार्ट्ज़बर्ग, जोसेफ ई., सुब्रहमण्यं, संजय, रायकर, सनत पई, वोल्पर्ट, स्टेनली ए., आलम, मुज़फ्फर, कालकिंस, फिलिप बी., ऑलचिन, फ्रैंक रेमंड, चंपकलक्ष्मी, आर., और श्रीवास्तव, ए. एल. (2024, 23 अगस्त); 'भारत.' एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका. https://www.britannica.com/place/India
12. बोरकर, एस. के., बोर्कर, ए., शेख, एम. के., मेंढे, एच., अंबद, आर., और जोशी, ए. (2022, 13 अक्टूबर); 'आदिवासी क्षेत्र के किशोरियों में मासिक धर्म स्वच्छता प्रथाओं का अध्ययन.' Cureus, 14(10), e30247. https://doi.org/10.7759/cureus.30247. PMID: 36381734; PMCID: PMC9652700

डॉ. (श्रीमती) पूनम मागू
सहायक प्रोफेसर, इंस्टीट्यूट ऑफ होम इकोनॉमिक्स
दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
Ph. 7678251143,
Email: poonam.magu@ihe.du.ac.in

नरेंद्र कोहली की रामकथा में आधुनिकताबोध

तरुण किशोर नौटियाल

शोध सार:

भारतीय सांस्कृतिक परंपरा में महाकाव्यात्मक ग्रंथ रामायण के मूल्यों का योगदान अतुलनीय है। कोहली जी की रामकथा आधुनिक चिंतन और मनन वाले पाठक के लिए आधुनिकताबोध का वितान तैयार करती है। पारंपरिक कथाओं और घटनाओं की तार्किक और वैज्ञानिक व्याख्या 'अभ्युदय' उपन्यास की अनूठी विशेषता है। अपने मौलिक सृजन-कौशल से रामकथा की मूल भावना का सम्मान करते हुए कोहली जी ने आधुनिक दृष्टि से इसकी मनोग्राही व्याख्या की है। ऐसे समय में कोहली जी की रामकथा में अभिव्यक्त आधुनिकताबोध इसे नित नवीन शाश्वत आधार प्रदान कर रही है।

मुख्य-शब्द: आधुनिकताबोध, मौलिकता, वैज्ञानिकता, सांस्कृतिक परंपरा, सामाजिक सशक्तीकरण, वैज्ञानिक दृष्टिकोण, तर्कवाद, श्री राम का भव्य चरित्र इत्यादि।

हिंदी साहित्य में भी आधुनिक गद्य-साहित्य में महान उपन्यासकार नरेंद्र कोहली ने अपने 'अभ्युदय ' उपन्यास केआधार पर रामकथा लेखन की परंपरा को समृद्ध किया है। ऐतिहासिक दृष्टि से पौराणिक मिथक के रूप में स्थापित 'रामकथाको भारतवर्ष का जीवंत इतिहास मानने वाले विरले रचनाकारों में कोहली जी का ' स्थान है। कोहली जी ने रामायण को वैज्ञानिक, तार्किक और रचनात्मक दृष्टिकोण से लिखकर उसे आधुनिक चेतना के मानकों की दृष्टि से नये रूप में प्रस्तुत किया है। यह कोहली जी द्वारा रामकथा में आधुनिकता बोध की समुचित विश्लेषण का ही प्रभाव है कि तथाकथित आधुनिकता की आड़ में पृष्ठभूमि में छिप गई थीं, वे एक बार फिर सामाजिक जीवन के विमर्श के केन्द्र में आकर दर्पण का काम कर रही हैं।

'अभ्युदय' उपन्यास में विभिन्न पात्रों के माध्यम से कोहली जी अपने समाज की समस्याओं के समाधान की व्यापक संभावनाएं प्रदान करते हैं। विवेच्य रचनाकार ने अपनी लेखनी के बल पर इन मिथकीय कथाओं को तार्किक आधार प्रदान कर आधुनिकताबोध की अनोखी गूंज प्रतिध्वनित की है। प्रसिद्ध साहित्यकार कमल किशोर गोयनका कहते हैं कि **"मेरे लिए तथा मेरे समय के समाज के लिए रामायण तथा महाभारत की कथाओं तथा पात्रों के व्यापक संसार के धर्म-अधर्म, सत्य-असत्य, न्याय-अन्याय तथा मानवीयता-अमानवीयता आदि के शाश्वत प्रश्नों एवं जिज्ञासाओं के उत्तर पाने का मार्ग सुलभ कराया।"**[1]

सन् 1970 के दशक में नरेंद्र कोहली जी ने अपने 'अभ्युदय' उपन्यास में रामकथा की जो निरुपम व्याख्या की है, वह इनकी आध्यात्मिक दृष्टि से प्रामाणिकता को पुष्ट करती है। आधुनिक वैज्ञानिक समाज के पाठकों की अपेक्षा को पूर्ण करती यह कथा आध्यात्मिक जिज्ञासुओं के प्रश्नों का समाधान प्रस्तुत करते हुए आधुनिकताबोध का अनोखा वितान तैयार करती है। एक प्रसिद्ध आलोचक अनिल जोशी जी लिखते हैं कि **नरेंद्र कोहली के " तार्किक मन ने रामकथा के प्रचलित आध्यात्मिक निहितार्थों को समझते हुए भी आधुनिक भारतीय मन के तर्कवाद और बुद्धिवाद तथा साइंटिफिक टेंपर के प्रति आग्रह को देखते हुए रामकथा को चमत्कारों से मुक्त किया।"**[2] रामकथा की विविध घटनाओं और प्रसंगों को परंपरागत दृष्टिकोण से इतर एक सृजनात्मक बौद्धिक दृष्टिकोण प्रदान करना कोहली जी की रामकथा में एक अभिनव प्रयोग रहा है।

नरेंद्र कोहली की रामकथा की शुरुआत विश्वामित्र द्वारा राम और लक्ष्मण को अपने सिद्धाश्रम ले जाने से होती है। अपने यज्ञ की सुरक्षा के साथ साथ गुरु विश्वामित्र संपूर्ण-ऋषि-समाज तथा आम प्रजाजनों के जीवन के सुख-दुःख को शासन तक पहुँचाना चाहते थे। उस समय राक्षसीचिंतन से ग्रसित- कुछ लोगों ने संगठित रूप से ऋषि-मुनियों और आम प्रजाजनों को पीड़ित कर उनका जीवन यातनापूर्ण बना दिया था। शासनप्रशासन- प्रजा की यातना और पीड़ा के प्रति उदासीन था। विश्वामित्र ने दो राजकुमारों को साथ लेकर उन्हें प्रजा की कठिनाई को समझाने हेतु राजधर्म का अवसर उपलब्ध कराया। नरेंद्र कोहली की रामकथा में गुरु विश्वामित्र राम से कहते हैं; **"आदर्श व्यवस्था स्वयं नागरिक तक पहुंचकर उसका कष्ट पूछती है।"**[3] नागरिक और शासन के संबंधों को लेकर यह दृष्टिकोण आधुनिक लोकतंत्र की शासन-व्यवस्था के लिए कुशल मार्ग-दर्शन का कार्य कर सकता है और लोक कल्याणकारी राज्य को जमीनी धरातल पर स्थापित करने का सामर्थ्य रखता है।

नरेंद्र कोहली जी की रामकथा के तथा वह राम' पर विश्वामित्र के इस उपदेश का गहरा प्रभाव पड़ता है' अपनेसाहसनेतृत्व , क्षमता नथा लोक-कल्याण चिंतन के द्वारा संपूर्ण प्रजा एवं ऋषि-समाज को अभय प्रदान करते हैं। ताड़कासुबाहु जैसे राक्षसों का वध कर-ते हैं। सन् 1970 के दशक में बिहार के एक गाँव से सत्ता तथा संपत्ति से संपन्न लोगों ने निर्धन केवट कन्याओं के साथ दुष्कर्म करने तथा उनकी रक्षा को आए उनके परिजनों को जीवित जला देने के समाचार आए थे। दुराचारियों के आतंक का प्रभाव इतना हावी था कि इस घटना पर पुलिस व स्वास्थ्य प्रशासन ने कार्यवाही करने का साहस भी नहीं किया। **समाज में व्याप्त यह आतंक कोहली जी के सर्जक मन के लिए राक्षसी आतंक का आधार बना तथा वे पीड़ित परिवार रामकथा के गहन केवट के परिवार में बदले।'**[4] इसी प्रकार इंद्र के द्वारा सताई हुई तथा समाज द्वारा बहिष्कृत पाषाणवत् अहिल्या को राजनीतिक मान्यता प्रदान कर नरेंद्र कोहली के राम एक नवीन स्त्रीविमर्श- की शुरुआत करते हैं। विवेच्य रचनाकार ने आधुनिकता की कसौटियों के अनुकूल प्रश्न उठाया है कि अहिल्या के विरुद्ध दुराचार भी हुआ और उसी को पाषाण के समान अलगथलग - जीवनयापन भी करना पड़ा। यदि किसी पुरुष के साथ गुंडों के द्वारा बदसलूकी की जाती तो क्या वह भी दूषित माना जाता ?इन प्रश्नों को उठाकर कोहली जी ने पितृसत्तात्मक भारतीय समाज की जड़ता को झकझोर देने का सार्थक कार्य किया है। प्रसिद्ध आलोचक और साहित्यकार यशपाल उद्धृत करते हैं **"अहिल्या' के चरित्र को अपनी सोच के अनुसार आधुनिक नजरिए से देखना, सोचना और लिखना, फिर भी पाठकों में उसकी लोकप्रियता बनाये रखना एक नूतन प्रयोग ही माना जाएगा।"**[5] अहिल्या के माध्यम से उठाया गया यह समकालीन विषय आधुनिकताबोध की दृष्टि से अभ्युदय उपन्यास की विचारभूमि पर भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति की व्याख्या करने में समर्थ है।

सन् चुनकर बौद्धिक नेतृत्व की हत्या में कोहली-में पाकिस्तान द्वारा बांग्लादेश में चुन 1971 जी को रावण के नेतृत्व में राक्षसों द्वारा ऋषियों की हत्या दिखाई देती है।'[6] कोहली जी ने आधुनिक संदर्भों को पुष्ट करते हुए अपने ग्रंथों को प्रामाणिकता प्रदान की है। आम आदमी को सामाजिक न्याय उपलब्ध कराने का जो सपना भारतीय संविधान देखता है उसे कोहली जी रामकथा में वनवासी राम की कार्यप्रणाली में परिलक्षित किया जा सकता है। समाज के वंचित वर्गों को समाज की मुख्यधारा में शामिल करने की दृष्टि से नरेंद्र कोहली के राम, महात्मा गांधी के रचनात्मक कार्यों के ज्यादा नजदीक प्रतीत होते हैं, जो आधुनिक समाज के प्रतिमानों की दृष्टि से समावेशी समाज का स्रोत है।

नरेंद्र कोहली जी ने अपनी रामकथा में न केवल आधुनिक समाज की समस्याओं को पूरी गंभीरता से उठाया है अपितु बल्कि अपने राम के माध्यम से समुचित समाधान भी प्रस्तुत'किए हैं। ये सभी समाधान भारतीय समाज में नई चेतना का संचार और नवनिर्माण कर सकते हैं। भारत जिस आधुनिक एवं विकसित भारत का सपना देखा जा रहा हैउसके लिए भी , आवश्यक मार्ग दर्शन प्राप्त किया जा सकता है। एक आलोचक लिखते है कि **"उन्होंने मिथक कथाओं का आधुनिकीकरण किया था। उनके राम तुलसी के अवतार न होकर समाज को सुधारने वाले, उसे एकजुट करने वाले, अन्याय के विरुद्ध न्याय के लिए लड़ने वाले और मानवोचित कर्म करने वाले नायक हैं। एकदम नवजागरण के नए नायक, नए पुनर्जागरण पुरुष की तरह"[7]। इस तरह** नरेंद्र कोहली जी की रामकथा आधुनिकताबोध से प्रभावित विचारों से युक्त एक प्रगतिशील, न्यायाधारित तथा सौहार्दपूर्ण मानवीय समाज की स्थापना के लिए प्रतिबद्ध रही है।

नरेंद्र कोहली जी ने रामकथा में विविध प्रसंगों की प्रसंगों की कथाऔं का आधुनिकीकरण किया, जिनमें इनके सभी पात्र एक सहज मानव के रूप में दिखते हैं। स्वयं राम जिन्हें सम्पूर्ण भारतीय वांड्मय और भारतीय समाज अवतार के रूप में प्रतिष्ठित करता है। नरेंद्र कोहली की रामकथा में उनका चमत्कारपूर्ण जीवन सहज मानवीय परिस्थितियों के अधीन है। मानव से ईश्वर बन जाने के पीछे उनका उत्कृष्ट व्यक्तित्व; जिसमें साहस ,न्याय ,सहिष्णुता , ,प्रेम, रणकौशलसुदृढ़ नेतृत्व क्षमता इत्यादि गुण थे। यह तथ्य राम' के चरित्र का मानवीयकरण कर'ता है जिससे 'अभ्युदयमें आधुनिक ' विचारधारा पुष्ट होती है। 'कोहली जी के न होने का अर्थ' पुस्तक में एक आलोचक कहते हैं- **"आपने रामकथा, जिसे अनेक इतिहासकार मात्र पौराणिक आख्यान या मिथ ही मानते हैं, यथाशक्ति, यथार्थवादी, तर्कसंगत व्याख्या देने का प्रयत्न किया है।"[8]** यह कोहली जी की उपलब्धि है कि रामकथा का यह स्वरूप निरंतर वैज्ञानिक बुद्धि के पाठकों को एक आनंददायी बौद्धिक रस उपलब्ध करा रहा है।

राम के अतिरिक्त रामायण के कई पात्रों के संबंध में चमत्कार व देवत्वपूर्ण कथाओं को आधुनिक तार्किक दृष्टि से स्पष्ट करना कोहली जी की रामकथा की सर्वश्रेष्ट विशेषता है। पंचवटी में खर-दूषण तथा त्रिशिरा जैसे विकट राक्षसों के साथ उनके चौदह सहस्र सैनिकों को अकेले राम ने पराजित किया। कोहली जी ने इस चमत्कार को अपनी रचनाधर्मिता से यथार्थ में बदल दिया। उन्होंने इसे सुनियोजित व्यूह रचना माना तथा पंचवटी के भौगोलिक क्षेत्र में राम के सहयोगियों ने छिपकर राम के सहयोग को दर्शाया है। यह वैज्ञानिक जान पड़ता है। इसी तरह हनुमान जी उड़कर सागर पार पहुँचना अतिशयोक्तिपूर्ण है। इसकी व्याख्या करते हुए 'अभ्युदय' में रचनाकार का मानना है कि हनुमान असाधारण तैराक, सामर्थ्यवान तथा विवेकशील प्राणी थे। सागर से कम गहरा हिस्सा जो लंका के सर्वाधिक निकट था ,में तैरते हुए वे लंका पहुँचते हैं। वहाँ सीता की खोज की तथा सुरक्षित वापस लौट आए। अशोक वाटिका उजाड़ने के बाद उन्हें बंदी जब बनाया और उनकी पूँछ पर आग लगाने का उन्हें दंड दिया गया। कोहली जी ने संपूर्ण वानर द अन्य पिछड़ी आदिम जातियों)गिद्ध, भालू आदि को मनुष्य ही माना है न कि पशु। ('मेरे राम'मेरी रामकथा : नामक पुस्तक में कोहली जी ने वन्य नर के रूप में वानरों के होने की बात कही है। चूंकि हनुमान' मनुष्य थे अतः ' लंका वासियों ने उनकी कृत्रिम पूँछ बनायी जिसका खामियाजा लंका को ही भुगतना पड़ा।

इसी प्रकार अगस्त्य' के संबंध में दो मिथक कथाएँ प्रचलित'हैं। एक तो उन्होंने विध्यांचल पर्वत की ऊँचाई नहीं बढ़ने दी; जिससे उनका नाम भी अगस्त्य पड़ा और दूसरा वे समुद्र पी गए। **इन दोनों मिथकों को कोहली जी की रामकथा ने जिस प्रकार सांकेतिक सिद्ध किया है वह विवेच्य रचनाकार की रामकथा में आधुनिक**

विचारों की समग्र दृष्टि की विवेचना करती है। दरअसल राक्षसी चिंतन वाले संगठित लोगों ने विध्यांचल के उत्तर की आर्य जातियों तथा दक्षिण की आर्येतर जातियों में मतभेद पैदा किया। इससे दोनों के मध्य विचारों की वैमनस्यता से विध्यांचल ऊँचा होता है। जिसे ऋषि अगस्त्य ने आर्य-आर्येतर जातियों के मध्य विवादों को समाप्त किया। भारत की विविधता में एकता के संरक्षण की दृष्टि से यह प्रेरणा का काम कर सकता है। इसी प्रकार अगस्त्य के समुद्र पीने का मतलब वास्तव में समुद्र पीना नहीं है अपितु उन्होंने आम लोगों की समुद्र यात्रा को सुलभ व आसान बनाया। समुद्री यात्रा में सक्षम होने के बाद ही लंका के राक्षसों को मारना संभव हो सका, जो लगातार मानवता को परेशान कर रहे थे और पूरे आर्यावर्त के लोगों का शोषित व असुरक्षित कर रहे थे। **इस प्रकार रामकथा के हर प्रसंग में कोहली जी ने अपनी वैज्ञानिक चिंतन पद्धति द्वारा आधुनिक समाज के लिए रामकथा का मनोहारी वर्णन प्रस्तुत किया है। आधुनिक चेतना से उपयुक्त विचारों और छवियों ने इस कहानी को एक उपयोगी आधार प्रदान किया है। जिससे आगामी सदियों तक इसकी प्रासंगिकता को स्थायित्व प्रदान किया जा सकता है।** प्रो. रमा, 'नरेंद्र कोहली की अनुपस्थिति के अर्थ' में लिखती हैं कि **"उनका साहित्य पौराणिक कोख से जन्म लेकर भी आधुनिकता का पक्षधर है। मानव-जीवन की मूल समस्याओं व उपलब्धियों के लिए संघर्ष करते उनके पात्र ईश्वरीय विधान से अधिक मानवीय नियति से संचालित होते हैं।"**[8] कोहली की रामकथा के सभी पात्र अपनी अलौकिक सीमाओं से उतरकर एक सरल और सुन्दर मानवीय चरित्र की छवि बनकर हिन्दी साहित्य के पाठक के हृदय में अपनी लौकिक छाप छोड़ते हैं।

आज जब संपूर्ण विश्व पटल पर श्रीराम का भव्य चरित्र भारतीय गौरवशाली परंपरा को आत्मसात कर रहा है। उस समय कोहली जी की रामकथा आधुनिक चेतना की दृष्टिकोण से उसे नित नवीन शाश्वत आधार प्रदान करने का सामर्थ्य रखती है। 'राम रामेति मनोरमे' की संकल्प शक्ति से आबद्ध हमारा राष्ट्र आज नरेंद्र कोहली की आधुनिक दृष्टि का ऋणी है। जिसने प्रत्येक भारतीय की आत्मा में रामतत्त्व को स्थापित किया है। उनके राम एक अवतारी पुरुष न होकर मर्यादा पुरुषोत्तम भी हैं, जिसने अपना संपूर्ण जीवन राष्ट्र के लिए समर्पित किया है।

संदर्भ-ग्रंथ सूची

1. जनमजेय प्रेम;संपादक:नरेंद्र कोहली के न होने का अर्थ,वाणी प्रकाशन; पृष्ठ सं.20,2022
2. जनमजेय प्रेम;संपादक:नरेंद्र कोहली के न होने का अर्थ,वाणी प्रकाशन; पृष्ठ सं.38,2022
3. कोहली,नरेंद्र; अभ्युदय(भाग1),डायमंड पॉकेट बुक्स; नई दिल्ली;प्रकाशन पृष्ठ सं.51,2023,
4. कोहली,नरेंद्र; मेरे राम:मेरी राम कथा:वाणी प्रकाशन,नई दिल्ली: प्रकाशन पृष्ठ सं.11,2022:
5. जनमजेय प्रेम; संपादक: नरेंद्र कोहली के न होने का अर्थ, वाणी-प्रकाशन; पृष्ठ सं.213,2022
6. कोहली,नरेंद्र; मेरे राम:मेरी राम कथा:वाणी प्रकाशन,नई दिल्ली: प्रकाशन पृष्ठ सं10,2022
7. जनमजेय,प्रेम;संपादक:नरेंद्र कोहली के न होने का अर्थ,वाणी प्रकाशन; पृष्ठ सं.33, 2022;
8. जनमजेय प्रेम;संपादक:नरेंद्र कोहली के न होने का अर्थ,वाणी प्रकाशन; पृष्ठ सं.123, 2022
9. जनमजेय प्रेम;संपादक:नरेंद्र कोहली के न होने का अर्थ,वाणी प्रकाशन; पृष्ठ सं. 86, 2022;

तरुण किशोर नौटियाल
शोधार्थी: हिन्दी विभाग, हेमवती नंदन बहुगुणा
गढ़वाल केन्द्रीय विश्वविद्यालय
ईमेल- tarunkishornautiyal1@gmail.com
मोबाईल संख्या: 8126232711

मैतै समुदाय की अंतिम संस्कार परंपरा: सांस्कृतिक, ऐतिहासिक और पुरातात्विक दृष्टिकोण से एक अध्ययन

हजारिमायुम बिस्मार्क शर्मा
सलाम पुष्प देवी एवं इरोम लकीचंद मीतै

सारांश:

मैतै अंतिम संस्कार परंपरा गहरी सांस्कृतिक, ऐतिहासिक और आध्यात्मिक मान्यताओं से जुड़ी हुई है, जिसमें आत्मा के स्थानांतरण और परलोक जीवन पर बल दिया गया है। उनके अंतिम संस्कार की विधियाँ धार्मिक दर्शन और सामाजिक रीति-रिवाजों से प्रभावित विविध प्रथाओं का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। इन प्रथाओं का विकास आध्यात्मिक और सामाजिक संदर्भों के आधार पर अमानवीय, दाह संस्कार, जल दफन, और खुले स्थान में शव निपटान से हुआ। सेक्ता माउंड और अन्द्रो खुमन जैसे पुरातात्विक स्थलों से प्राप्त साक्ष्य प्राथमिक और माध्यमिक दफन प्रथाओं पर प्रकाश डालते हैं। इनमें जटिल मिट्टी के बर्तनों के डिज़ाइन, दफन परतें, और महत्वपूर्ण सामान शामिल हैं, जो जीवन और मृत्यु की गहरी समझ का संकेत देते हैं । सेक्ता टीला के स्तरीकृत दफन परतों, मिट्टी के बर्तनों, और कपाल विशेषताओं ने संभावित व्यापार संपर्क और सांस्कृतिक आदान-प्रदान को दर्शाया है। वहीं, अन्द्रो खुमन की खोजों में चीनी मिट्टी कलशों के उपयोग से भांड मृदा अंतिम संस्कार (Pot internment) प्रथाओं की अनूठी झलक मिली। हालाँकि हिंदू प्रभावों के कारण इनमें समय के साथ परिवर्तन हुआ, फिर भी ये परंपराएँ मैतै आध्यात्मिक विश्वासों, जैसे लाइरमलेन या आत्मा की स्वर्ग यात्रा, को संरक्षित करती हैं। यह अध्ययन मैतै दफन परंपराओं के मिश्रण और मणिपुर की सांस्कृतिक गतिशीलता को रेखांकित करता है, जो उनकी सांस्कृतिक धरोहर को संरक्षित करने के प्रति मैतै समुदाय की प्रतिबद्धता को दर्शाता है। यह मणिपुर की प्राचीन परंपराओं और जटिल सांस्कृतिक विकास के बारे में महत्वपूर्ण अंतर्दृष्टि प्रदान करता है।

मुख्य शब्द: मैतै अंतिम संस्कार परंपरा, आत्मा का स्थानांतरण, सेक्ता टीला, अन्द्रो खुमन, सांस्कृतिक विरासत।

परिचय:

मणिपुर, भारत के पूर्वोत्तर क्षेत्र में स्थित एक राज्य है, जो अपनी विशिष्ट भौगोलिक विशेषताओं और सांस्कृतिक विविधता के लिए जाना जाता है। यहाँ के कई जातीय समुदायों में मैतै समुदाय प्रमुख है, जो मुख्यतः मणिपुर की घाटी में निवास करता है और हिंदू धर्म व मैतै धर्म के मिश्रण का पालन करता है।

इस अध्ययन का उद्देश्य मणिपुर के लोगों की प्रारंभिक दफन प्रथाओं का पता लगाना है, जिससे मैतै समुदाय की वर्तमान अंतिम संस्कार परंपराओं को बेहतर ढंग से समझा जा सके।

साहित्य समीक्षा:

1. माइबम ब्रोजेश्वरी: उनकी पुस्तक में विभिन्न प्रकार के मिट्टी के बर्तनों और कलशों का उल्लेख है, जो धार्मिक और दफन प्रथाओं में उपयोग किए जाते थे।

2. एस. सुजाता: उनकी डॉक्टरेट थीसिस में कलश दफन स्थलों और माध्यमिक दफन रीति-रिवाजों से संबंधित पुरातात्विक साक्ष्यों का गहन विश्लेषण किया गया है।
3. अर्नोल्ड गेनेप वैन: उनकी पुस्तक में जन्म से मृत्यु तक के जीवन चक्र अनुष्ठानों और उनके सांस्कृतिक महत्व का उल्लेख है।
4. भारतीय पुरातत्व समीक्षा: 1991 में ए.के. शर्मा के निर्देशन में हुए उत्खनन का प्राथमिक लेखा-जोखा प्रस्तुत करती है।
5. एस.एन. पररट: उनकी पुस्तक "द रिलिजन ऑफ मणिपुर" हिंदू और मैतै परंपराओं के समामेलन पर केंद्रित है।
6. सिंह ओ. कुमार (1997): 1994 की खुदाई पर आधारित रिपोर्ट, जिसमें सेक्ता माउंड के नए और अद्यतन पुरातात्विक साक्ष्य दिए गए हैं।
7. मुसुकसना डॉ. राजकुमारी: उनके लेख में मैतै समाज की धार्मिक रीति-रिवाजों और दफन प्रथाओं के ऐतिहासिक परिवर्तन का अध्ययन किया गया है।

लक्ष्य:

यह अध्ययन मैतै दफन परंपरा को पुरातात्विक दृष्टिकोण से समझने, मणिपुर की सांस्कृतिक और पारंपरिक गतिशीलता को जानने, और राज्य की प्राचीन दफन प्रथाओं की समग्र समझ विकसित करने पर केंद्रित है।

दार्शनिक पृष्ठभूमि

मैतै समाज की सांस्कृतिक गहराइयों में आत्मा के स्थानांतरण और मरणोपरांत जीवन में विश्वास निहित है। यह विश्वास जन्म से लेकर मृत्यु तक के जीवन के प्रमुख पड़ावों को चिह्नित करने वाले पवित्र संस्कारों में प्रकट होता है। अर्नोल्ड वान गेनेप, प्रसिद्ध नृविज्ञानी और लोककथाकार, इन संस्कारों को सामाजिक संरचना के भीतर किसी व्यक्ति की स्थिति में महत्वपूर्ण बदलाव को चिह्नित करने वाली औपचारिक प्रक्रियाएँ मानते हैं।[i] वान गेनेप ने इन्हें तीन चरणों में विभाजित किया है: अलगाव संस्कार, संक्रमण संस्कार, और समावेशन संस्कार। यह भी ध्यान देने योग्य है कि सभी संस्कृतियाँ इन तीन उपश्रेणियों को समान महत्व नहीं देतीं। [ii]

इन संस्कारों में जन्म, विवाह, और मृत्यु जैसी जीवन घटनाएँ शामिल होती हैं।[iii] मृत्यु जीवन के अंतिम संकट और आत्मा के विदा होने का प्रतीक है।[iv] मैतै धर्म के अनुसार, मृत्यु केवल जीवन का अंत नहीं है, बल्कि आत्मा का एक नए शरीर में संक्रमण और स्वर्ग में पूर्वजों के साथ मिलन का प्रतीक है। मरणोपरांत जीवन और पुनर्जन्म के प्रति इस विश्वास ने कई धार्मिक और सांस्कृतिक अनुष्ठानों को जन्म दिया है, जिनका उद्देश्य आत्मा की सहज यात्रा सुनिश्चित करना और अप्राकृतिक मृत्यु को रोकना है। [v]

मृत्यु के बाद आत्मा की यात्रा

वर्तमान मैतै समाज में मरणोपरांत जीवन को लेकर पारंपरिक मान्यताएँ विद्यमान हैं।ऐसा माना जाता है कि आत्मा इम्फाल के उत्तर में स्थित जल निकाय खोंहामपात में अपने पैर धोतें है और फिर मखोइनुंगोंग पहाड़ियों की ओर बढ़ता है। वहाँ से आत्मा नंबुल धारा को पार करती है, जिसे वे थोंङाक पहाड़ी तक पहुंचने के लिए पार करते हैं। थोंङाक पहाड़ी पर देवी थोंङाक लारेम्बी को समर्पित एक मंदिर है, जिन्हें मृतकों के क्षेत्र के प्रवेश द्वार का रक्षक

माना जाता है। मंदिर के पास दो तुम्बा (gourd vessel) रखी जाती हैं—एक वयस्कों और दूसरी बच्चों के लिए। ऐसा माना जाता है कि इन तुम्बाओं में रखा पानी आत्मा को तरोताजा करता है। पहले इस मंदिर की देखभाल माइबा (पारंपरिक पुजारी) द्वारा की जाती थी, जो सुनिश्चित करते थे कि मृतक की प्यास बुझाने के लिए तुम्बा हमेशा भरी रहें। हिंदू प्रभाव के बावजूद, मणिपुरी अंतिम संस्कार प्रथाओं में पारंपरिक मान्यताएँ आज भी महत्वपूर्ण बनी हुई हैं। यह धागा जलाने या नाव जलाने जैसे अंतिम संस्कार के रीति-रिवाजों में प्रकट होता है, जिसका उद्देश्य आत्मा की यात्रा को सुगम बनाना है। [vi]

पाँच तत्व और आत्मा

मैतै दर्शन के अनुसार, शरीर पाँच तत्वों से निर्मित है: मै (अग्नि), इसिंग (जल), नुंगसित (वायु), लैपाक (पृथ्वी), और अतिया (आकाश)। इन तत्वों के साथ आत्मा,शरीर को संचालित करती है। जब आत्मा शरीर से अलग हो जाती है, इसे "थवाई नोंगकाबा" (स्वर्ग में आरोहण) कहा जाता है। स्वर्ग में आत्मा का मिलन,दिव्यता के साथ आत्मा के एक होने का प्रतीक है। जैसे-जैसे शरीर थकावट के कारण निष्क्रिय हो जाता है, आत्मा इसे त्याग देती है। शरीर, जो पाँच तत्वों से बना है, अंततः पृथ्वी में विलीन हो जाता है। इस प्रकार, मृत्यु के बाद शरीर के सभी तत्व पृथ्वी के साथ पुनः जुड़ जाते हैं। [vii]

अंतिम संस्कार की विधियाँ

मैतै परंपरा में मृत्यु के तरीके के आधार पर चार प्रकार की दफन विधियों का उल्लेख ऐतिहासिक अभिलेखों में मिलता है। ये विधियाँ न केवल उनकी धार्मिक मान्यताओं को दर्शाती हैं, बल्कि पूर्वजों के साथ उनके गहरे आध्यात्मिक संबंधों को भी प्रकट करती हैं।

1**. ताबूत दफन द्वारा अंतिम संस्कार (लैपाककी पोतलोई)**

पुरातात्विक साक्ष्य बताते हैं कि मणिपुर में अंतिम संस्कार दो चरणों में किया जाता था।

- **प्रारंभिक चरण:** शव और मूल्यवान वस्तुओं को एक ताबूत में रखा जाता और दफनाया जाता।
- **माध्यमिक चरण:** एक वर्ष बाद पुजारी कब्र को खोलकर सड़े हुए शरीर के अवशेषों को निकालते। खोपड़ी और हड्डियों को धोकर, फूलों से सजाकर, और धातु या वस्त्रों से लपेटकर औपचारिक अनुष्ठानों के साथ पुनः दफनाया जाता था।

माध्यमिक दफन की यह परंपरा सामाजिक स्थिति के अनुसार अनुष्ठानिक रूप से संपन्न होती थी।

साहित्यिक प्रमाण:

चैथारोल कुम्बाबा में 1684 में महाराजा पाइखोम्बा के शासनकाल में माध्यमिक दफन का उल्लेख मिलता है। राजा थवानथाबा की पुत्री के ताबूत के माध्यमिक दफन ने इस प्रक्रिया के महत्व को दर्शाया।
दफन प्रथाओं की शुरुआत टोंकोंबा के शासनकाल से मानी जाती है।

2**. जल प्रवाह (एशिंगी पोतलोई)**

यह विधि मृत्यु निपटान की प्रमुख विधियों में से एक थी। शवों को सड़ने के लिए जल निकायों में रखा जाता, फिर हड्डियों को धोकर एक पात्र में सुरक्षित रखा जाता और दफनाया जाता। हिंदू प्रभाव के बाद, यह प्रथा जल समाधि (दाह संस्कार की राख का जल में विसर्जन) में परिवर्तित हो गई। [viii]

3. खुली जगह में वायु निष्पादन (नुंगसितकी पोतलोई)

आत्महत्याओं या कुछ विशेष परिस्थितियों में मृतकों को खुले स्थानों में सड़ने या सफाई के लिए छोड़ दिया जाता था। "मैनू पेम्चा" जैसी किंवदंतियां बताती हैं कि आत्मघाती पीड़ितों के अवशेष वर्जित स्थानों (जैसे, मंगरक कानबी) में छोड़े जाते थे। कभी-कभी हवा और पानी दोनों का उपयोग एक साथ किया जाता था। यह प्रथा सबसे प्राचीन मानी जाती है। [ix]

4. दाह संस्कार (मैगी पोतलोई)

दाह संस्कार की परंपरा मैतै समाज में नाओफंगबा के समय से शुरू हुई मानी जाती है।

चैथारोल कुंम्हाबा में दर्ज है कि 1724 ई. में राजा गरीबनिवाज ने अपने पूर्वजों की हड्डियों को दफन स्थलों से निकालकर दाह संस्कार किया और उनकी राख को निंगथी नदी में विसर्जित किया। यह घटना मैतै पांडुलिपियों (पोइरीटन खुंथोक और निंगथौरोल लम्बुबा) में भी उल्लेखित है। [x]

दफन विधियों का ऐतिहासिक महत्व

प्राथमिक दफन: शव को एक पात्र में रखा जाता था।

द्वितीय दफन: हड्डियों को सजाकर किसी भांड में रखा जाता था।

सेक्ता जैसे स्थलों पर पुरातात्विक खुदाई से इन विधियों की पुष्टि होती है।

हालांकि मैतै परंपरा केवल चार दफन विधियों को मान्यता देती है, एस. सुजाता देवी की अप्रकाशित डॉक्टरेट थीसिस में विभिन्न वैश्विक मृत्यु निपटान प्रथाओं को वर्गीकृत किया गया है:

- प्राथमिक दफन

i. शवविसर्जन (Excarnation)

ii. दफन (Burial)

iii. दाह-संस्कार (Cremation)

iv. प्रतीकात्मक (Symbolic)

- द्वितीयक दफन

i. दाह-संस्कार के बाद कलश दफन (Post cremation Urn Burial)

ii. दफन के बाद कलश दफन (Post Burial Urn Burial)

अंतिम संस्कार और शरीर के निपटान की विधियाँ समय और क्षेत्रों के साथ अलग-अलग होती हैं, जो धार्मिक और दार्शनिक मान्यताओं से प्रभावित होती हैं। [xi]

मणिपुर के सेक्ता की ऐतिहासिक शमशान स्थल:

सेक्ता टीला या **कै**, मणिपुर के इम्फाल जिले के सेक्ता गाँव में स्थित एक संरक्षित स्थल है। यह इम्फाल से लगभग 18 किलोमीटर उत्तर-पूर्व में, इरिल नदी के बाएं किनारे पर स्थित है।

1991 में, 23 मार्च से 12 अप्रैल तक, इस क्षेत्र की खुदाई एएसआई प्रागैतिहासिक शाखा के अधीक्षक पुरातत्वविद् ए. के. शर्मा के निर्देशन में की गई थी, जिसमें मणिपुर राज्य पुरातत्व विभाग ने सहयोग दिया। उत्खनन क्षेत्र का आकार 10x10 मीटर था और इसे चार चतुर्थांशों में विभाजित किया गया था।

तीसरे और चौथे चतुर्थांश को 3 मीटर की गहराई तक खोदा गया, लेकिन पानी के रिसाव और ठहराव के कारण इन्हें भर दिया गया ताकि दफन बर्तनों और उनकी सामग्री को नुकसान न हो। खुदाई के दौरान, सात विभिन्न कालखंडों की दफन परतें मिलीं। इनमें से कुछ परतें अब संग्रहालय में प्रदर्शित हैं।

प्रमुख खोजें:

खुदाई के दौरान बड़ी संख्या में द्वितीयक पॉट कब्रें पाई गईं। प्रत्येक व्यक्ति के लिए छह अलग-अलग बर्तन पाए गए, जिनमें से अधिकांश लाल और काले रंग के थे।

सबसे बड़े पात्र में मानव अवशेष, जैसे दांत, खोपड़ी के टुकड़े, और लंबी हड्डियां थीं।

चढ़ावा में मोती, अंगूठियां, झुमके, चूड़ियां, कांसे या पीतल के टिंकलेट और लोहे के औजार मिले।

एक उल्लेखनीय खोज तांबे के मुखौटे के साथ मानव खोपड़ी की थी।

विसंगतियाँ और पुनः जाँच:

ए. के. शर्मा ने दफन परतों को कालखंडों से जोड़ा, लेकिन उन्होंने अपने मानदंड स्पष्ट नहीं किए। उन्होंने दावा किया कि सबसे निचली परतों में पहिये से बने मिट्टी के बर्तन पाए गए, जो बाद की परतों में अनुपस्थित थे। इस दावे पर सवाल उठाया गया, क्योंकि उनकी रिपोर्ट में मिट्टी के बर्तनों का कोई चित्र या विस्तृत विश्लेषण नहीं था।

1994 में पुनः खुदाई:

ओ. कुमार सिंह ने 1994 में स्तरीकरण की पुनः जाँच की। उन्होंने 2.25 मीटर की गहराई में आठ दफन परतों का पता लगाया। नई खोजों में हेरिंगबोन, शेवरॉन, हीरा, और रिब्ड डिज़ाइनों वाले मिट्टी के बर्तन शामिल थे। [xii]

हड्डियों और खोपड़ी के टुकड़ों से माध्यमिक दफन प्रथाओं का संकेत मिलता है, लेकिन जलने के प्रमाण नहीं मिले।

खोपड़ी उत्तर, दक्षिण और पश्चिम की ओर मुख करके पाई गईं।

बर्तन आकार में भिन्न थे; बड़े जार न्यूनतम खुदाई के साथ दफनाए गए थे।

कुछ कब्रों में मोती, चूड़ियां, अंगूठियां, और लोहे के भाले और चाकू जैसी वस्तुएँ भी थीं।

इसके अलावा, कपाल की आकृति विज्ञान संबंधी विशेषताओं की जाँच से विभिन्न शारीरिक लक्षणों का पता चला, जैसे प्रमुख दाढ़ की हड्डियाँ, अल्पविकसित सुपरऑर्बिटल कटक, चौड़ी और संकीर्ण कक्षीय गुहाएँ, गोल और नुकीली ठोड़ी, मध्यम ऊँचाई वाले चौड़े या संकीर्ण माथे, घटता हुआ माथा, और विभिन्न प्रकार के सिर और नाक के आकार।

सेक्ता टीला एक महत्वपूर्ण पुरातात्विक स्थल है, जिसमें स्तरीकृत दफन परतें और विविध डिज़ाइन वाले मिट्टी के बर्तन पाए गए हैं। ये खोज जटिल दफन प्रथाओं और सांस्कृतिक प्रभावों का संकेत देती हैं। विशेष रूप से, ऊपरी परतों में चमकीले बर्तन और चीनी मिट्टी के बर्तनों के टुकड़े सांस्कृतिक बदलाव की ओर इशारा करते हैं। इन बर्तनों में से एक पर बौद्ध पगोडा शैली की पेंटिंग, बौद्ध समुदायों के साथ संपर्क का स्पष्ट संकेत देती है। [xiii]

सभी कब्रों में कांच के मोतियों की उपस्थिति, दक्षिण-पूर्व एशिया या भारत के अन्य क्षेत्रों के साथ सेक्ता के व्यापारिक संबंधों का सुझाव देती है। ये खोजें समय के साथ इस क्षेत्र के बदलते और विकसित होते सांस्कृतिक परिदृश्य पर प्रकाश डालती हैं। [xiv]

सेक्ता टीला अपने आप में इस क्षेत्र के समृद्ध और जटिल इतिहास का प्रमाण है। यह प्राचीन मणिपुरी संस्कृति और उनके दफन रीति-रिवाजों की एक अनोखी झलक प्रदान करता है। यह स्थल अतीत की गहरी समझ के लिए एक खिड़की की तरह कार्य करता है, जो इस भूले हुए युग के रहस्यों को उजागर करने में सहायक है।

आकृति सेक्ता की खुदाई स्थल के चार खंड जो वर्तमान में संग्रहालय में :प्रदर्शित हैं

स्रोतसेक्ता जीवित संग्रहालय :

अन्द्रो खुमन

अन्द्रो खुमन, मणिपुर की एक ऐतिहासिक और सांस्कृतिक दृष्टि से समृद्ध बस्ती, इम्फाल से लगभग 30 किलोमीटर दूर इम्फाल पूर्वी जिले के अंतर्गत स्थित है। यह स्थान चकपा समुदाय (अनुसूचित जाति) का घर है, जो दक्षिणी नोंगमैजिंग पहाड़ी श्रृंखला की तलहटी में निवास करता है। यह समुदाय मणिपुर के स्वायत्त निवासियों में गिना जाता है।

13 से 18 सितंबर, 2003 तक, राज्य पुरातत्व विभाग के सहयोग से, डॉ. एल. कुंजेश्वरी देवी के नेतृत्व में अन्द्रो खुमन में एक पुरातात्विक उत्खनन किया गया। इस उत्खनन ने "पॉट इंटर्नमेंट सिस्टम" नामक एक अनोखी दफन प्रथा का खुलासा किया। इस प्रणाली में जलती हुई हड्डियों और लकड़ी के कोयले को एक लंबे पात्र में रखना शामिल था, जिसे अक्सर चीनी मिट्टी के पैर वाले या बिना पैर वाले कटोरे में रखा जाता था। इस दफन व्यवस्था में एक उल्लेखनीय विशेषता चौथे बड़े बर्तन का उल्टा और खंडित रूप में पाया जाना था, जो पूरी दफन संरचना को घेरता था।

दफन स्थलों से बरामद वस्तुओं में लंबी गर्दन वाले पीने के बर्तन, लोहे के औजार (जैसे दरांती, दाव, कुदाल, तीर के सिर, और चाकू), और कुछ मोती शामिल थे। ये खोजें उस समय की भौतिक संस्कृति की झलक प्रदान करती हैं। यह स्थल 18वीं शताब्दी के अंत और 19वीं शताब्दी ईस्वी की शुरुआत का माना जाता है। इन खोजों ने अंतिम संस्कार की प्रथाओं और उस समय के सामाजिक-सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य के बारे में अमूल्य जानकारी प्रदान की है।

कौट्रुक

कौट्रुक स्थल मणिपुर में दफन प्रथाओं की एक और आकर्षक झलक प्रस्तुत करता है, जिसमें विशेष रूप से "पॉट इंटर्नमेंट सिस्टम" पर ध्यान केंद्रित किया गया है। इस प्रणाली में तीन प्रमुख कलशों की एक विशिष्ट व्यवस्था होती है। सबसे भीतरी कलश में हड्डी और लकड़ी के कोयले के टुकड़े रखे जाते हैं। इन कलशों में सिक्के, तांबे की प्लेटें, और चूड़ियां जैसी मूल्यवान वस्तुएं भी पाई जाती हैं, जो मृतक की संपत्ति और उस समय के सांस्कृतिक आदान-प्रदान का संकेत देती हैं। प्रत्येक कलश को एक कटोरे से ढका जाता है, जिसमें जटिल डिजाइन होते हैं।

कौट्रुक में पुरातात्विक उत्खनन ने चार अलग-अलग दफन परतों का खुलासा किया, जो इस स्थल के लंबे समय तक उपयोग और इसके सांस्कृतिक महत्व को दर्शाता है। सहायक पुरातत्वविद् एस. रूपबोन सिंह और डॉ. एल. कुंजेश्वरी देवी ने इन परतों का गहन अध्ययन किया। देवी का सुझाव है कि यह स्थल संभवतः प्रभावशाली कबीले के नेताओं से जुड़ा हो सकता है, जिससे इन दफन प्रथाओं में एक सामाजिक और राजनीतिक आयाम जुड़ता है।

सबसे भीतरी कलश में जली हुई हड्डियाँ और विभिन्न कब्र वस्तुएं, जैसे आभूषण और उपकरण रखे जाते थे। इनकी जटिल व्यवस्था उस समय के जीवन और आध्यात्मिक मान्यताओं के बारे में मूल्यवान जानकारी प्रदान

करती है। इस प्रणाली में बाहरी कलश पर एक छोटा छेद भी देखा गया, जो पुनर्जन्म, नमी के पारित होने, या किसी विशिष्ट सांस्कृतिक प्रतीकात्मकता से संबंधित हो सकता है। ये स्थल मणिपुर के दफन रीति-रिवाजों और सामाजिक-सांस्कृतिक संरचना की गहरी समझ प्रदान करते हैं, जो इसे ऐतिहासिक अध्ययन के लिए एक अमूल्य स्रोत बनाते हैं। [xv]

निष्कर्ष

सेक्ता, अन्द्रो खुमन, और कौट्रुक में पाई जाने वाली दफन प्रथाएँ समानता और भिन्नता दोनों को प्रकट करती हैं, जो मणिपुर के जटिल सांस्कृतिक विकास को दर्शाती हैं। इन स्थलों पर मिट्टी के बर्तनों का उपयोग एक महत्वपूर्ण विशेषता है, लेकिन उनके स्वरूप और कार्यों में अंतर है।

सेक्ता में माध्यमिक दफन पद्धति अपनाई जाती है, जिसमें कई बर्तनों का उपयोग होता है। इनमें काले बर्तन मानव हड्डियों को रखने के लिए प्रमुख होते हैं। दूसरी ओर, अन्द्रो खुमन और कौट्रुक में प्राथमिक दफन पद्धति अपनाई जाती है, जहाँ अंतिम संस्कार के अवशेषों को रखने के लिए कलशों का उपयोग किया जाता है। इन विविधताओं के बावजूद, इन स्थलों पर बर्तनों का उपयोग मृतकों के लिए पवित्र पात्रों के रूप में एक साझा सांस्कृतिक विश्वास को दर्शाता है।

कब्र के सामान इन स्थलों की सांस्कृतिक मान्यताओं को उजागर करते हैं। मोती, आभूषण, और लोहे के औजार जैसी वस्तुएँ मृत्यु के बाद के जीवन के लिए मृतकों को तैयार करने में विश्वास का प्रतीक हैं। सेक्ता और कौट्रुक जैसे स्थलों में पाए जाने वाले बौद्ध रूपांकनों और कांच के मोतियों वाले चमकीले चीनी मिट्टी के बर्तन व्यापारिक प्रभाव, संभवतः दक्षिण-पूर्व एशिया से, को दर्शाते हैं। कौट्रुक में सिक्के, तांबे की प्लेटें, और चूड़ियाँ धन और सामाजिक स्थिति के महत्व का संकेत देती हैं। वहीं, अन्द्रो खुमन में लोहे के औजार और गहनों का उपयोग एक व्यावहारिक दृष्टिकोण को दर्शाता है, जो क्षेत्रीय विविधताओं का प्रतीक है। सांस्कृतिक और कालगत विविधताएँ भी इन स्थलों की विशेषता हैं। सेक्ता, सात दफन परतों के साथ, विभिन्न ऐतिहासिक कालों और बाहरी प्रभावों, जैसे बौद्ध धर्म, का प्रभाव दिखाता है। अन्द्रो खुमन 18वीं-19वीं शताब्दी की स्वदेशी दफन परंपराओं की निरंतरता को दर्शाता है। कौट्रुक, हालांकि इसकी सटीक तारीख स्पष्ट नहीं है, जटिल अनुष्ठानों और पदानुक्रमित समाज के संकेत देता है। ब्रह्मांडीय मान्यताएँ भी दफन प्रथाओं में प्रतिबिंबित होती हैं। सेक्ता में खोपड़ियों को विभिन्न दिशाओं में रखना और तांबे के मास्क का उपयोग, पैतृक पूजा या पुनर्जन्म से जुड़े गहरे विश्वास को दर्शाता है।

कौट्रुक में बाहरी कलश के नीचे एक छोटा छेद पुनर्जन्म या आत्मा की शुद्धि का प्रतीक हो सकता है। इन अनुष्ठानों से यह स्पष्ट होता है कि जीवन को मृत्यु से परे जारी माना गया था, और सामाजिक व सांस्कृतिक प्रभावों के अनुसार इन परंपराओं में समय के साथ बदलाव आया।

संक्षेप में, सेक्ता, अन्द्रो खुमन, और कौट्रुक की दफन प्रथाएँ मणिपुर की साझा सांस्कृतिक विरासत को उजागर करती हैं, जबकि क्षेत्रीय परंपराओं और बाहरी प्रभावों से प्रेरित विविधताओं को भी प्रकट करती हैं। द्वितीयक कलश दफन प्रथा का चलन हिंदू धर्म की दाह संस्कार प्रथाओं के आने तक जारी रहा। भले ही समय के साथ दफनाने की प्रथाएँ बदल गईं, इन प्राचीन रीति-रिवाजों के निशान आज भी मेइतेई समुदाय की वर्तमान परंपराओं में परिलक्षित होते हैं।

संदर्भ :

i. Naorem Naokhomba Singh. "Religion and Life Cycle Rituals among the Meiteis of Manipur." *Modern Research Studies*, vol. 2, no. 3, 2015, pp.603

ii. Arnold van Gennep. *The Rites of Passage*. Translated by Monika B. Vizedom and Gabrielle L. Caffee, The University of Chicago Press, 1960, pp.10-11.

iii. Naorem Naokhomba Singh, *Op.cit*, p.625

iv. Saroj Nalini Parratt. *The Religion of Manipur: Beliefs, Rituals, and Historical Development*. Firma KLM Private Limited, 1980.p. 84

v. Naorem Naokhomba Singh, *Op.cit*, p.605

vi. Saroj Nalini Parratt, *Op.cit*, pp.89-90.

vii. S. Jayalaxmi Devi, et al. "Mortuary Customs of The Meiteis of Manipur: A Historical Study." *History Research Journal*, 2019, p. 114.

viii. Gangmumei Kamei. *History of Manipur: Pre-Colonial Period*. Akansha Publishing House, 2015. p.75.

ix. Maibam Brojeshwori Devi. *Pottery in Manipur*. Nivedita Publications, 2015.pp.135-136.

x. R. K. Musuksana. *Op.cit*

xi. S. Sujata Devi,"Comparative study of late medieval URN-burial sites in Manipur." *Doctoral Thesis* (*Unpublished*). Baroda: MS University,2014.p.10.

xii. Okram Kumar Singh, A *Report on the 1994 Excavation of Sekta Manipur*. Imphal Superintendent of Archaeology, State Archaeology, Government of Manipur,1997, p.1.

xiii. Singh, op.cit, 1997.pp. 3-26.

xiv. S Sujata Devi, op.cit, p.20

xv. Ibid, p.21

हजारिमायुम बिस्मार्क शर्मा

शोधार्थी, इतिहास विभाग, धनमंजुरी विश्वविद्यालय,इम्फाल-795001

संबंधित ईमेलः bhazarimayum@gmail.com

सलाम पुष्प देवीशोधार्थी, हिन्दी विभाग, धनमंजुरी विश्वविद्यालय,इम्फाल-795001

इरोम लकीचंद मीतै

शोधार्थी, भूगोल विभाग, धनमंजीरी विश्वविद्यालय, इम्फाल-795001

संबंधित ईमेलः bhazarimayum@gmail.com

भारतीय ज्ञान परम्परा में पशुपालन एवं प्रशिक्षण: कौटिलीय अर्थशास्त्र के विशेष संदर्भ में

मोहित कुमार पाण्डेय[1], डॉ. आशीष कुमार[2], दीपज्योति देव[3]

सारांश: यह लेख भारतीय परंपरा में पशुपालन, विशेषतया कौटिल्य के योगदान का विस्तृत विश्लेषण प्रस्तुत करता है। इसमें हड़प्पा सभ्यता से लेकर कौटिल्य के काल तक पशुपालन का महत्व और विकास क्रमबद्ध रूप से दर्शाया गया है। कौटिलीय अर्थशास्त्र में घोड़ों और हाथियों के प्रजनन, प्रशिक्षण, स्वास्थ्य और उनके सैन्य एवं प्रशासनिक महत्व पर विशेष ध्यान दिया गया है। पशुओं के उपचार और उनके प्रति सम्मान पर भी जोर दिया गया है। यह अध्ययन प्राचीन पशुपालन पद्धतियों की आधुनिक प्रासंगिकता को उजागर करता है और पशु कल्याण के लिए एक व्यापक दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है।

मुख्य शब्द: भारतीय ज्ञान परंपरा, 'अर्थशास्त्र', अश्वशास्त्र, गजशास्त्र, पशु- पालन, पशु प्रशिक्षण, पशु प्रबंधन।

प्रस्तावना: भारत में पशुपालन का प्रारंभ हड़प्पा सभ्यता के समय से ही हो चुका था। मोहनजोदड़ो और हड़प्पा जैसी प्राचीन सभ्यताओं में गाय, भैंस, हाथी, बकरी और मुर्गी जैसे पशुओं के अवशेष मिले हैं। ये साक्ष्य दर्शाते हैं कि प्राचीन काल से ही मनुष्य और पशुओं के बीच गहरा संबंध रहा है[1]। वैदिक काल में इस संबंध में महत्त्वपूर्ण विकास हुआ, विशेषतः गायों के बढ़ते महत्त्व के साथ। गायें केवल आर्थिक संसाधन नहीं थीं, बल्कि सांस्कृतिक और धार्मिक परंपराओं का केंद्र भी थीं। ऋग्वेद में गाय को "कामधेनु" अर्थात् मानवता की "श्रेष्ठ संपत्ति" के रूप में वर्णित है, जो समृद्धि का प्रतीक है। इस काल के पशु-चिकित्सा ज्ञान में गोबर की खाद के कृषि में उपयोग का वर्णन मिलता है जो पहली बार लौह युग में प्रचलित हुआ[2]।पशुपालन तीन शाखाओं यथा;

गजायुर्वेद (गजशास्त्र), अश्वायुर्वेद (अश्वशास्त्र), और गवायुर्वेद (गोविज्ञान) में विकसित हुआ। गजशास्त्र और अश्वशास्त्र में हाथियों व घोड़ों की देखभाल, प्रशिक्षण और उपयोगिता को द्योतित हैं। मौर्य काल (३२२–१८५ ई.पू.) ने पशुपालन को संस्थागत रूप दिया, विशेषतः भैंसों के दुग्ध उत्पादन व घोड़ों-हाथियों के प्रबंधन पर जोर दिया। इन ग्रंथों में पशुओं के प्रति मानवीय व्यवहार पर जोर दिया गया है, जैसे जंगली हाथियों को पकड़ने के दौरान उनके तनाव को कम करने की विधि। हाथी-घोड़े न केवल सैन्य साधनों के रूप में बल्कि सामाजिक प्रतिष्ठा के प्रतीक के भी रहे हैं। इन ग्रंथों ने पशु-चिकित्सा के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।[3]

प्राचीन ग्रंथों में पशुविज्ञान

आहार व आवास से संबंधित नियम:

- हाथियों और अश्वों के लिए उनके आयु और कार्य के अनुसार विशेष आहार निर्धारित किया गया था। इसमें चावल, जौ, घृत, मांस, और ऋतु-अनुकूल घासों का समावेश था। कौटिल्य (२.३१) के अनुसार, आहार व पोषण वय तथा क्रिया आधारित था[5]।
- अस्तबलों का निर्माण वायु-संचार, मूत्र-मल की निकासी, और भिन्न-भिन्न पशु-श्रेणियों के लिए अलग-अलग कक्षों की व्यवस्था के साथ किया जाता था।
  - तालिका 1. स्वतंत्रता-पूर्व भारत में पशुपालन के प्रमुख पड़ाव

क्रम. स.	वर्ष	घटना
1.	9000 ई.पू.	भेड़ और बकरी का पालतूकरण।
2.	8000 ई.पू.	गाय-बैल का पालतूकरण।
3.	6000–4500 ई.पू.	कुत्ता और पक्षियों का पालतूकरण।
4.	4000 ई.पू.	भैंस का पालतूकरण।
4.	2000 ई.पू.	एशियाई हाथी का पालतूकरण।
5.	1500–1000 ई.पू.	कूबड़ वाले मवेशियों की प्रजनन प्रक्रिया का प्रारंभ।
6.	1000–900 ई.पू.	अथर्ववेद की रचना। इसमें पशुओं के रोग, औषधीय उपचार, और रोगों की चिकित्सा के बारे में जानकारी।
7.	300 ई.पू.	सम्राट अशोक ने विश्व के पहले ज्ञात पशु-चिकित्सालयों की स्थापना की।

अश्वाध्यक्षः पण्यागारिकं क्रयोपागतम् आहवलब्धम् आजातं साहाय्यागतकं पणस्थितं यावत्कालिकं वा अश्व-पर्यग्रं कुल-वयो-वर्ण-चिह्न-वर्ग-आगमैर्लेखयेत्॥[6]

ये नियम आधुनिक पशु-सुविधा और स्वच्छता के सिद्धांतों के अनुरूप हैं।

चिकित्सा उपचार: अश्वायुर्वेद और गज-आयुर्वेद जैसे पशु-चिकित्सा ग्रंथ हड्डियों के टूटने से लेकर परजीवी संक्रमण जैसे रोगों के उपचार का वर्णन करते हैं। आयुर्वेदिक सिद्धांतों पर आधारित इन उपचारों में संपूर्ण स्वास्थ्य का ध्यान रखा गया।[7] नीम और हल्दी जैसे जड़ी-बूटियों से बने उपचारों का उल्लेख किया गया है, जो घाव और संक्रमण में प्रभावी थे)।[8]

स्वच्छता परिपालन: पशु-शालाओं को सरसों के बीज और हींग जैसे पदार्थों से धूम्रित किया जाता था, जिससे रोगों की रोकथाम हो सके।[9] कृषि पाराशर और अग्नि पुराण जैसे ग्रंथ स्वच्छता मानकों पर जोर देते हैं।

पशु कल्याण और नैतिक ढांचे:

- नैतिक व्यवहार: गाय, अश्व जैसे पशु भारतीय संस्कृति के केंद्र में थे, जो समृद्धि व नैतिक व्यवहार: अर्थशास्त्र में पशु-क्रूरता के लिए दंड का प्रावधान है। राज्य-संरक्षित पशुओं, जैसे हाथी, अश्व, को हानि पहुँचाने पर आर्थिक दंड से लेकर गंभीर मामलों में मृत्युदंड का विधान था।[10]
- विधायी प्रावधान: चरागाहों का व्यवस्थित आवंटन किया जाता था और संसाधनों के दुरुपयोग या उपेक्षा पर दंड लगाया जाता था।[11]
- पशु-पालन, सांस्कृतिक दिव्यता का प्रतीक माने जाते थे। वैदिक तथा महाभारत जैसे ग्रंथों में इनका आर्थिक और सांस्कृतिक महत्त्व प्रतिपादित है।[12]

आर्थिक और सामाजिक योगदान:

- पशु-उत्पाद: दूध, घृत, चर्म और गोबर आदि पोषण, कृषि और व्यापार में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते थे। राज्य पशु-उत्पादों के व्यापार को नियमित करता था ताकि निष्पक्षता बनी रहे।[13]
- स्थायित्वपूर्ण विधियाँ: आयुर्वेदिक उपचार जैसे स्वदेशी उपाय उच्च लागत और औषधि प्रतिरोध जैसी समस्याओं को हल करने के लिए प्रभावी थे।[14]

सैन्य प्रशिक्षण और प्रबंधन: पशुओं का प्रशिक्षण मनोवैज्ञानिक और शारीरिक विधियों पर आधारित एक उन्नत प्रक्रिया थी।

- हाथियों को सात प्रकार के सैन्य अभियानों के लिए प्रशिक्षित किया जाता था, जैसे किलों पर आक्रमण (नागरायण) तथा अन्य हाथियों के साथ युद्ध (हस्तियुद्ध)। गज-आयुर्वेद में हाथियों की देखभाल और उपयोग पर विस्तृत रूप से चर्चा की गई है।[15]
- अश्वों को वृत्ताकार गति से दौड़ और कूदने जैसी तकनीकों के लिए कठोर प्रशिक्षण दिया जाता था। अश्वों के आहार में आयु तथा कार्यभार के अनुसार परिवर्तन किए जाते थे। अनुपयोगी घोड़ों को भी मानवीय देखभाल प्रदान की जाती थी, जो पशु कल्याण के समग्र दृष्टिकोण को दर्शाता है।[16] अश्व और गज प्रशिक्षण का विषय आगे विस्तार से वर्णित किया गया है।

पशु चिकित्सा और पारिस्थितिकी का समन्वय:

- पर्यावरण-अनुकूल विधियाँ: प्राचीन भारतीय ज्ञान प्रणालियाँ पारिस्थितिक संरक्षण व पशु-प्रबंधन के बीच संतुलन स्थापित करती थीं।[17]
- आवास निर्माण: पशु-शालाएँ पूर्वाभिमुख प्रवेश-द्वारों व तापमान विनियमन जैसे पर्यावरणीय विचारों के साथ बनाई जाती थीं।[18]

पशु-चिकित्सा की उन्नति और धरोहर: चरक संहिता और सुश्रुत संहिता जैसे प्राचीन ग्रंथों में पशु-स्वास्थ्य का उल्लेख मिलता है, जिसने पशु-चिकित्सा विज्ञान की नींव रखी। मौर्य काल में पशु-चिकित्सा की संस्थागत व्यवस्था की गई थी, जिसमें राज्य प्रायोजित अस्पताल और उपेक्षा के लिए दंडात्मक प्रावधान शामिल थे। यह पशु-संबंधी न्याय की नींव रखता है।[19]

मृगायुर्वेद पर आधारित मौलिक ग्रन्थ

प्राचीन भारत में पशुपालन के क्षेत्र को अनेक उत्कृष्ट ग्रंथों द्वारा समृद्ध किया गया है, जो प्रसिद्ध विद्वानों व विशेषज्ञों द्वारा रचित हैं ये ग्रंथ पशुओं, विशेषकर हाथियों और घोड़ों, के प्रबंधन और देखभाल के विज्ञान और कला पर विस्तृत दृष्टिकोण प्रदान करते हैं। नीचे कुछ प्रमुख ग्रंथों तथा उनके लेखकों का संक्षिप्त परिचय दिया गया है:

1. मातङ्गलीला: नीलकंठ द्वारा रचित यह ग्रंथ भारतीय हाथियों के विज्ञान पर आधारित है। इसमें हाथियों की शारीरिक संरचना, व्यवहार और प्रशिक्षण के संबंध में विस्तृत सूचना दी गई जो युद्ध, परिवहन तथा धार्मिक अनुष्ठानों में उनकी महत्त्वपूर्ण भूमिका को दर्शाता है।

2. शालिहोत्रसंहिता: 300 ईसा पूर्व में शालिहोत्र द्वारा रचित इस ग्रंथ को घोड़ों तथा हाथियों के पालन-पोषण पर आधारित प्राचीनतम ग्रंथ माना जाता है। शालिहोत्र, जिन्हें विश्व का प्रथम पशु चिकित्सक माना जाता है, ने घोड़ों व हाथियों के प्रशिक्षण, देखभाल तथा रोगों के उपचार की विधियों का सूक्ष्मता से वर्णन किया है।

3. गजलक्षण: बृहस्पति द्वारा रचित इस ग्रंथ में हाथियों की विशेषताओं, प्रबंधन व प्रशिक्षण पर केंद्रित है। तत्कालीन भारतीय समाज में विशेषतः सैन्य तथा राजनैतिक परिप्रेक्ष्य में हाथियों के महत्त्व को उजागर करता है।

4. अश्वशास्त्र: परंपरागत रूप से महाभारत में पांडव के भाई नकुल को समर्पित यह ग्रंथ, घोड़ों की देखभाल के विज्ञान को संबोधित करता है। इसमें घोड़ों के प्रजनन, प्रशिक्षण व उपचार के निर्देश दिए गए हैं जो परिवहन तथा युद्ध में उनकी महत्त्वपूर्ण भूमिका को रेखांकित करते हैं।

5. अश्ववैद्यक: जयदत्त सूरी द्वारा 1364 ई. में घोड़ों के उपचार पर लिखा गया यह ग्रंथ पद्य रूप में लिखा गया है। इसमें घोड़ों के रोगों के लिए विस्तृत चिकित्सा उपचार दिए गए हैं, जो मध्यकालीन भारत में पशु चिकित्सा विज्ञान की उन्नति को दर्शाते हैं।

6. हयलीलावती: मल्लिनाथ द्वारा लिखित इस ग्रंथ में घोड़ों के प्रबंधन-प्रशिक्षण, घोड़ों के व्यवहार व उनकी विशिष्ट देखभाल विधियों का विस्तार से वर्णन किया गया है।

7. पालकाप्यसंहिता अथवा हस्त्यायुर्वेद: पालकाप्य द्वारा रचित इस ग्रंथ में हाथियों की देखभाल का वर्णन है, इसे हस्त्यआयुर्वेद के नाम से भी जाना जाता है। इसमें हाथियों को पकड़ने, प्रशिक्षित करने तथा उनकी चिकित्सा का विस्तृत विवरण है, तथा प्राचीन भारतीय युद्ध और अनुष्ठानों में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका पर प्रकाश डाला गया है।

ये ग्रंथ सामूहिक रूप से ज्ञान का समृद्ध भंडार प्रस्तुत करते हैं, जो भारतीय ज्ञान परंपरा में पशुपालन की गहराई और परिष्कृतता को प्रकट करते हैं। ये प्राचीन पशु चिकित्सा प्रथाओं और उनकी सांस्कृतिक महत्ता को समझने के लिए आज भी अमूल्य स्रोत हैं।

स्रोत: https://sarmaya.in/objects/rare-books/manuscript-of-shalihotra-samhita-jodhpur/

गजशास्त्र एवं गजायुर्वेद

अर्थशास्त्र में वर्णन है कि प्राचीन भारत में हाथियों का सैन्य और आर्थिक दृष्टि से अत्यधिक महत्त्व था। गज-अध्यक्ष का कर्तव्य, गज-वनों की रक्षा करना, अस्तबलों की देखरेख करना तथा उचित प्रशिक्षण और स्वास्थ्य सेवा सुनिश्चित करना था।

गजानां वनं रक्षेत्। शालां च स्थापयेत्। प्रक्षालनं भेषजं पर्युपासनं च कालयुक्तं कारयेत्।।[20]

हाथियों को प्रशिक्षण व उपयोगिता के अनुसार वर्गीकृत किया गया, युद्ध तथा अन्य उद्देश्यों हेतु संरचित व्यवस्थाएँ थीं।

युद्धार्थं गज-प्रशिक्षणं चतुर्विधं विधानं च क्रियेत। दण्डनं, लग्नं, पर्युपासनं, चालनं च गजकर्म।[21]

गज-आयुर्वेद, पालकाप्य द्वारा रचित, हाथियों के देखभाल की व्यापक जानकारी प्रदान करता है। इसमें अतिसार, घाव और श्वसन संबंधी समस्याओं जैसी बीमारियों का उल्लेख है।[22]

कौटिलीय अर्थशास्त्र के अनुसार विश्लेषण

अश्वाधीक्षक के कर्तव्यः अश्वाधीक्षक को प्रत्येक घोड़े का विस्तृत विवरण रखना अनिवार्य था, जिसमें घोड़ों के; वंश (कुल), आयु(वयः), रंग (वर्ण), चिह्न(चिह्न), समूह या वर्ग (वर्ग), मूल स्थान (आगम) आदि सामिल हों।

अश्व के प्रकारः घोड़ों को निम्नलिखित श्रेणियों में विभाजित किया गया हैं:

1. पण्यागारिक: बिक्री हेतु विक्रय-गृहों में रखे गए घोड़े।
2. क्रयोपागत: हाल ही में क्रय किए गए घोड़े।
3. आहवलब्ध: युद्ध में पकड़े गए घोड़े।
4. आजात: स्थानीय प्रजाति के घोड़े।
5. साहाय्यागत: सहायक रूप से भेजे गए घोड़े।
6. पणस्थित: गिरवी रखे गए घोड़े।
7. यावत्कालिक: अस्थायी रूप से अस्तबल में रखे गए घोड़े।

अश्वाध्यक्षः पण्यागारिकं क्रयोपागतम् आहवलब्धम् आजातं साहाय्यागतकं पणस्थितं यावत्कालिकं वा अश्व-पर्यग्रं कुल-वयो-वर्ण-चिह्न-वर्ग-आगमैर्लेखयेत्।।[23]

इसके अतिरिक्त, अधीक्षक को उन घोड़ों के विषय में राजा को सूचित करना चाहिए जो अशुभ, विकलांग, या रोगग्रस्त हों। अप्रशस्त-न्यङ्ग-व्याधितांश्च वेदयेत्।[24]

अश्वशाला

घोड़ों के अस्तबल का निर्माण और रखरखाव: अधीक्षक यह सुनिश्चित करें कि अस्तबल पर्याप्त स्थान और उचित सुविधाओं के साथ निर्मित हों। प्रत्येक अस्तबल को:

- घोड़े की लंबाई और ऊँचाई का दुगुना होना चाहिए,
- चारों दिशाओं में चार दरवाजों से सुसज्जित होना चाहिए,
- ऐसा मध्य भाग होना चाहिए जहाँ घोड़े लोट सकें,
- वानर, मयूर, पृषत, नखुल, चकोर, शुक, और सारिका जैसे जानवरों से अलंकृत होना चाहिए।

अश्व-विभवेनऽयताम् अश्वायाम् अद्वि-गुण-विस्तारां चतुर्-द्वार-उपावर्तन-मध्यां सप्रग्रीवां प्रद्वार-आसन-फलक-युक्तानां वानर-मयूर-पृषत-नकुल-चकोर-शुक-सारिक-आकीर्णां शालां निवेशयेत्।[25]

प्रत्येक घोड़े के कक्ष को घोड़े की चौड़ाई या लंबाई का चार गुना बनाया जाए, जिसमें चिकनी लकड़ी का फर्श,

चारे के अलग कोष्ठक (खादनकोष्ठक), मूत्र व मल के निकास की व्यवस्था हो। दरवाजे उत्तर या पूर्व की ओर हों। निर्माण का स्थान भिन्न होने पर इसे बदला जा सकता है।

अश्वायां अचतुर्-अश्र-श्लक्ष्ण-फलक-आस्तारं सखादन-कोष्ठकं समूत्र-पुरीष-उत्सर्गं एक-एकशः प्रान्-मुखं उदन्-मुखं वा स्थानं निवेशयेत्। शाला-वशेन वा दिग्-विभागं कल्पयेत्।।[26]

अस्तबल में नर घोड़े, मादाएँ, व शिशुओं को अलग-अलग रखा जाना चाहिए- वडवावृषकिशोराणामेकान्तेषु।[27]

अश्व की देखभाल और भोजन:

1. प्रसव के बाद घोड़ी की देखभाल:
   - पहले तीन दिन: एक प्रस्थ घृत।
   - अगले दस रातें: एक प्रस्थ सत्तू और तेल, औषधि के साथ।
   - तत्पश्चात: पकाया हुआ अन्न, यवस व अन्य ऋतुकालीन आहार।

वडवायाः प्रजतायास्त्रिरात्रं घृतप्रस्थःपानम्। अत ऊर्ध्वं सक्तुप्रस्थः स्नेह-भैषज्य-प्रतिपानं दश-रात्रम्। ततः पुलाको यवसं आर्तवश्चऽहारः[28]

2. शिशु घोड़े:
   - छह महीने तक: सत्तू का एक कुडुंब, जिसमें चौथाई कुडुंब घृत और एक प्रस्थ दूध प्रतिदिन।
   - छह महीने बाद: प्रतिमास आहार में आधा वृद्धि के साथ एक प्रस्थ जौ जोड़ा जाए।
   - तीन वर्ष की आयु में: प्रतिदिन एक द्रोण जौ।
   - चार या पाँच वर्ष में: पूर्ण रूप से विकसित और सेवा के लिए उपयुक्त।

दशरात्रादूर्ध्वं किशोरस्य घृतचतुर्भागः सक्तुकुडुबः क्षीरप्रस्थश्चाहार आषण्मासात्। ततःपरं मासोत्तरम् अर्धवृद्धिर्यवप्रस्थ आत्रिवर्षात्। द्रोण आचतुर्वर्षात्। अत ऊर्ध्वं चतुर्वर्षः पञ्चवर्षो वा कर्मण्यः पूर्णप्रमाणः।।[29]

अश्व आहार के मानक:

उत्तम घोड़ों का आहार निम्नलिखित है:

- अन्न: चावल, जौ, या प्रियंगु के दो द्रोण, भिगोए हुए या पकाए हुए।
- दालें: पकाई हुई मूँग या माष।
- संग्राहक: एक प्रस्थ तेल, पाँच पल लवण, पचास पल मांस, एक आढक रस, या दो आढक दही।
- स्वादवर्धक: पाँच पल चीनी और एक प्रस्थ मद्य या दो प्रस्थ दूध।

द्रोणो धान्यस्य, स्नेहप्रस्थः, दश पलानि लवणस्य, पचाशत्पलमांसस्य, आढकं रसं वा द्वौ आढकौ दध्नः। पञ्च पलानि क्षारस्य, दश पलं तैलस्य। द्वि-भारा यवसस्य ।।[30]

अश्व के शारीरिक मानक:

उत्तम घोड़ों के माप हैं:

- मुख का माप: 32 अंगुल।

- लंबाई: मुख का पाँच गुना।
- जंघा: 20 अंगुल।
- ऊँचाई: जंघा का चार गुना।

मध्यम और निम्न कोटि के घोड़े क्रमशः इन मापों में 2 और 3 अंगुल कम होते हैं। उत्तम घोड़े का परिनाह 100 अंगुल होता है, जबकि मध्यम और निम्न कोटि के घोड़े पाँच भाग कम होते हैं।

द्वात्रिंशद्-अङ्गुलं मुखम् उत्तमाश्वस्य। पञ्चमुखान्यायामो विंशत्यङ्गुला जङ्घा। चतुर्जङ्घ उत्सेधः। त्र्यङ्गुल-अवरं मध्यम-अवरयोः। शताङ्गुलः परिणाहः। पञ्चभाग-अवरो मध्यम-अवरयोः ॥[31]

अश्व का उपयोग और निवृत्ति:

1. आयु, रोग, या युद्ध के कारण अक्षम हुए घोड़ों को प्रजनन के लिए उपयोग किया जाए, जिससे स्थानीय जनता को लाभ हो।

युद्ध-व्याधि-जरा-कर्म-क्षीणाः पिण्ड-गोचरिकाः स्युः। असमर-प्रयोग्याः पौर-जानपदानाम् अर्थेन वृषा वडवास्वायोज्याः ॥[32]

2. नस्ल:

- उत्तम: काम्बोज, सैन्धव, आरट्ट, और वनायु के घोड़े।
- मध्यम: बाह्लीक, पापेयक, सौवीरक, और तैतल।
- निम्न: शेष सभी नस्लें।

प्रयोग्यानां उत्तमाः काम्बोज-सैन्धव-आरट्ट-वनायुजाः । मध्यमा बाह्लीक-पापेयक-सौवीरक-तैतलाः । शेषाः प्रत्यवराः ॥[33]

3. सवारी: घोड़ों को विभिन्न सवारी तकनीकों के लिए प्रशिक्षित किया जाता है:
    - वृत्ताकार गति (वल्गन),
    - धीमी गति (नीचैर्गत),
    - कूदना (लंघन),
    - तीव्र दौड़ (धोरण),
    - संकेतों पर प्रतिक्रिया देना (नारोष्ट्र)।
4. दंडनीय अपराधों में घोड़ों की अनुचित देखभाल, अस्तबल में गंदगी संचय व चिकित्सा उपचार में लापरवाही शामिल है। यदि उपेक्षा के कारण गंभीर हानि होती है, तो दंड उपचार की लागत का दोगुना या घोड़े के पूर्ण मूल्य तक हो सकता है। घोड़ों को स्नान करवाना आवश्यक है।

हाथियों के प्रकार

मातंगलीला में हाथियों को तीन प्रमुख भेदों में विभाजित किया गया है:

1. भद्र: श्रेष्ठ, शुभ, अथवा उत्तम,

2. मन्द: धीमा अथवा दुर्बल,

3. मृग: वे हाथी जिनके माथे पर सफेद चिह्न होते हैं।

इसके अतिरिक्त, हाथियों के चौथे प्रकार सङ्कीर्ण (मिश्रित) का उल्लेख अन्यत्र किया गया है। ये वर्गीकरण संपूर्ण संस्कृत साहित्य में मान्य हैं, जिनमें कौटिलीय अर्थशास्त्र भी सम्मिलित है।

हस्त्यध्यक्ष के कर्तव्य

हस्त्यध्यक्ष का उत्तरदायित्व हाथी-वनों की रक्षा करना तथा हाथियों की देखभाल और प्रशिक्षण की व्यवस्था करना है। इसमें नर, मादा और शिशु हाथियों के लिए शालाओं का प्रबंधन, उनके उचित आहार और घास की सुनिश्चितता, प्रशिक्षण का निरीक्षण तथा उनके आभूषण और उपकरणों की परीक्षा सम्मिलित है। उसे हाथियों के चिकित्सकों, युद्ध प्रशिक्षकों, परिचारकों और चालकों के कार्यों की भी देखरेख करनी होती है।

हस्त्यध्यक्षो हस्ति-वन-रक्षां दम्य-कर्म-क्षान्तानां हस्ति-हस्तिनी-कलभानां शाला-स्थान-शय्या-कर्म-विधा-यवस-प्रमाणं कर्मस्वायोगं बन्धनोपकरणं सांग्रामिकम् अलंकारं चिकित्सक-अनीकस्थ-औपस्थायिक-वर्गं चानुतिष्ठेत् ॥[34]

जंगली हाथियों को पकड़ना

मातंगलीला के दसवें अध्याय में जंगली हाथियों को पकड़ने की पाँच विधियों का वर्णन किया गया है, जो उनकी वांछनीयता के अनुसार क्रमबद्ध हैं:

- पिंजरा जाल: जटिल बाड़े का उपयोग करके पूरे झुंड को पकड़ना।
- पालतू मादाओं का उपयोग: प्रशिक्षित मादाओं की सहायता से नर हाथियों को झुंड से अलग करना।
- फंदा दौड़: खुले स्थानों में हाथियों का पीछा करके शिकारी द्वारा चलित पालतू हाथियों से फंदों द्वारा पकड़ना।
- छिपे फंदे: छाल, टहनियों, भोजन के छिपे फंदों के उपयोग से हाथियों को उथले गड्ढों में फंसाना।
- गड्ढे के फंदे: गहरे गड्ढे खोदकर उन्हें भोजन से आच्छादित करना।

अंतिम दो विधियाँ, विशेष रूप से गड्ढे के फंदे, हानिकारक होने के कारण हतोत्साहित की जाती हैं।

हस्तिशालाओं का निर्माण

हस्थिशालाएँ विस्तृत होनी चाहिए, जिनका आकार हाथी की लंबाई और ऊँचाई का दो गुना हो। इन शालाओं में निम्नलिखित सुविधाएँ होनी चाहिए:

- मादा हाथियों के लिए पृथक कक्ष,
- सप्रग्रीवा (आगे निकला हुआ प्रवेश द्वार),
- कुमारी खूँटे,
- पूर्व या उत्तर की ओर मुख वाला द्वार।

खूँटों के सामने का स्थान वर्गाकार होना चाहिए, जो हाथी की लंबाई के बराबर हो, चिकने तख्तों से पक्का हो तथा जल निकासी की व्यवस्था हो। विश्राम स्थलों में हाथियों के टिकने के लिए उठा हुआ मंच होना चाहिए।

हस्त्यायाम-द्विगुण-उत्सेध-विष्कम्भ-आयामां हस्तिनी-स्थान-अधिकां सप्रग्रीवां कुमारी-संग्रहां प्रान्-मुखीं उदन्-मुखीं वा शालां निवेशयेत्। हस्त्यायाम-चतुर्-अश्र-श्लक्ष्ण-आलान-स्तम्भ-फलक-आस्तरकं समूत्र-पुरीष-उत्सर्गं स्थानं निवेशयेत् ॥[35]

हाथियों के जीवन के चरण

मातंगलीला के पाँचवें अध्याय में हाथियों के जीवन के चरणों का वर्णन किया गया है:

- १२ वर्ष तक के हाथी कार्य के लिए उपयोगी नहीं माने जाते।
- १२ से २४ वर्ष तक वे मध्यम मूल्य के होते हैं।
- २४ से ६० वर्ष तक वे अपने चरम उपयोगिता पर होते हैं।

इस अध्याय में प्रत्येक वर्ष से लेकर १० वर्ष तक और प्रत्येक दशक से लेकर १२० वर्ष तक के हाथियों के लक्षणों और नामों का विस्तृत विवरण दिया गया है।

हाथियों की दैनिक दिनचर्यः हाथियों की दैनिक दिनचर्या दिन के आठ भागों में विभाजित होती है:

- स्नान: पहला और सातवाँ भाग।
- आहार: स्नान के पश्चात।
- व्यायाम: पूर्वाह्न।
- जलपान: अपराह्न।
- नींद और विश्राम: रात्रि के दो भाग सोने के लिए और एक-तिहाई जाग्रत विश्राम के लिए।

प्रथम-सप्तम अष्टम-भागावह्नः स्नान-कालौ। तदनन्तरं विधायाः। पूर्वाह्ने व्यायाम-कालः। पश्चाह्नः प्रतिपान-कालः। रात्रिभागौ द्वौ स्वप्न-काला। त्रिभागः संवेशन-उत्थानिकः ॥[36]

हाथियों की देखभाल

मातंगलीला के ग्यारहवें अध्याय में यह बताया गया है कि हाथी स्वाभाविक रूप से स्वतंत्र प्राणी होते हैं और उन्हें बंदी अवस्था में विशेषकर प्रारंभिक काल में कठिनाई होती है। इस समय उनके स्वास्थ्य और सुख-शांति का विशेष ध्यान रखना आवश्यक है।

आहार और औषधि: उनके आहार में अन्न (कच्चा और पकाया हुआ चावल, गेहूँ, जौ), सब्जियाँ, वन का चारा, घी, गुड़, नमक, मसाले, मीठे पेय और कभी-कभी मद्य सम्मिलित होते हैं। औषधीय देखभाल में सामान्य रोगों जैसे कृमि और ज्वर (पाकल) का उपचार सम्मिलित है, जिसे मानव ज्वर के समान माना गया है। रोगों का कारण तीन दोषों के असंतुलन को बताया गया है।

ऋतु-आधारित देखभाल:

हाथियों की देखभाल ऋतु के अनुसार भिन्न-भिन्न होती है:

- शीत ऋतु: गर्म शालाएँ, कंबल, मसालेदार भोजन और मद्य।
- ग्रीष्म ऋतु: ठंडी शालाएँ, स्नान के लिए जल की पर्याप्त व्यवस्था और हल्का कार्यभार।

प्रशिक्षण और स्वभाव के आधार पर हाथियों का वर्गीकरण

हाथियों को प्रशिक्षण के आधार पर चार प्रकारों में वर्गीकृत किया गया है: -

1. दाम्य (प्रशिक्षण योग्य),
2. सन्नाह्य (युद्ध प्रशिक्षण प्राप्त),
3. औपवाह्य (सवारी हेतु प्रशिक्षित),
4. व्याल (दुष्ट)।

प्रशिक्षण योग्य हाथियों को आगे निम्न समूहों में विभाजित किया गया है: -

- स्कन्धगत: जिसकी पीठ पर सवार हुआ जा सकता है।
- स्तम्भगत: जो खूँटे से बँधा रहता है।
- वारिगत: जो जलाशयों में ले जाया जाता है।
- अपपातगत: जो गड्ढों में लेटा रहता है।
- यूथगत: जो झुंड के साथ रहता है।

युद्ध प्रशिक्षण में सात चरण सम्मिलित होते हैं: -

1. अभ्यास (उपस्थान),
2. मोड़ना (संवर्तन),
3. अग्रसर होना (संयान),
4. शत्रु पर आक्रमण (वधावध),
5. अन्य हाथियों से लड़ना (हस्तियुद्ध),
6. किले पर आक्रमण (नागरायण),
7. सामान्य युद्ध।

पकड़ने और वर्गीकरण के मानदंड

हाथियों को केवल ग्रीष्म ऋतु में ही पकड़ना चाहिए, और उनकी आदर्श आयु २० वर्ष होनी चाहिए-"ग्रीष्मे ग्रहणकालः, विंशतिवर्षो ग्राह्यः" [37] युवा हाथी (विक्को), मोहित हाथी (मुग्ध), दांत रहित हाथी, रोगग्रस्त हाथी, अपने बच्चों को दूध पिलाने वाली हाथी (धेनुका) और मादा हाथी (हस्तिनी) को नहीं पकड़ा जाना चाहिए- "विक्को मोढो मक्कणो व्याथितो गर्भिणी धेनुका हस्तिनी चाग्राह्याः"।[38]

हाथियों के शारीरिक मापदंडः हाथियों के शारीरिक मापदंड निम्नलिखित हैं:

- उत्तम वर्ग: 7 अरत्नि ऊँचाई, 9 अरत्नि लंबाई, 10 अरत्नि परिधि, और 40 वर्ष आयु।
- मध्यम वर्ग: 30 वर्ष आयु।

- निम्न वर्ग: 25 वर्ष आयु।

सप्त-अरत्नि उत्सेधो नव-आयामो दश परिणाहः प्रमाणतश्चत्वारिंशद्-वर्षो भवत्युत्तमः। त्रिंशद्-वर्षो मध्यमः। पञ्च-विंशति-वर्षोऽवरः॥[39]

आहार और दंड

हाथियों के स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए संतुलित आहार आवश्यक है, जिसमें चावल, घी, मांस, और घास शामिल हैं। उनकी सफाई और देखभाल के लिए विशेष ध्यान दिया जाता है। लापरवाही—जैसे भोजन की कमी, अनुचित बिछौने, या दुर्व्यवहार—दोषियों के वेतन से कटौती के रूप में दंडनीय है। लापरवाही के अपराधों में शामिल हैं:

हाथियों को स्वास्थ्य रखने हेतु संतुलित आहार यथा; चावल, घी, मांस और घास आदि शामिल हैं। उनकी सफाई व देखभाल के लिए विशेष ध्यान दिया जाता है। लापरवाही; भोजन की कमी, अनुचित बिछौने, या दुर्व्यवहार—दोषियों के वेतन से कटौती के रूप में दंडनीय है और लापरवाही के अपराधों में शामिल हैं:

- गंदगी का जमाव,
- शरीर के महत्त्वपूर्ण अंगों पर चोट पहुँचाना,
- बिना अनुमति के सवारी करना,
- हाथियों को कठिन रास्तों या घने जंगलों से ले जाना।
  ये उपाय हाथियों के नैतिक उपचार को सुनिश्चित करते हैं और प्राचीन व्यवस्थाओं में उनकी उपयोगिता बनाए रखते हैं।

निष्कर्ष

भारतीय ज्ञान परंपरा में पशुपालन अध्ययन, जैसा कि कौटिल्य के अर्थशास्त्र, गजशास्त्र तथा अश्वशास्त्र जैसे ग्रंथों में समझाया गया है। प्राचीन भारत में पशु-प्रबंधन की परिष्कृत समझ को प्रकट करता है। ये ग्रंथ पशुओं के प्रति गहरे सम्मान को दर्शाते हैं, जो सामाजिक-आर्थिक व सांस्कृतिक व्यवस्थाओं के अभिन्न अंग थे, जो उस समय की उन्नत पशु-चिकित्सा ज्ञान की एक झलक भी प्रदान करते हैं।

पशुओं का संरचित प्रशिक्षण, नैतिक व्यवहार तथा आयुर्वेदिक सिद्धांतों पर आधारित स्वास्थ्य देख-भाल जैसी प्रथाएँ मानवीय व टिकाऊ दृष्टिकोण को रेखांकित करती हैं। इसके अतिरिक्त, आहार व्यवस्था, आवास मानकों और उपेक्षा के लिए दंडात्मक उपायों पर जोर व पशु कल्याण के लिए एक व्यापक रूपरेखा को दर्शाता है। इन ग्रंथों की विरासत ने पशु-चिकित्सा विज्ञान की नींव रखी और आधुनिक पशु-प्रबंधन प्रथाओं के लिए अमूल्य अंतर्दृष्टि प्रदान की।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची ग्रन्थ: (पत्रांत टिप्पणी)

[1] Somvanshi, R. "Veterinary Medicine and Animal Keeping in Ancient India." *Asian Agri-History*, vol. 10, no. 2, 2006, p. 133.

[2] Ibid., p. 133.
[3] Ibid., p. 133.
[4] Chauhan, MS, Dheer Singh, Suneel Onteru, Vikas Vohra, Gunjan Bhandari, and Sanjit Maiti. "Animal Husbandry in Pre-Independent India." *Indian Agriculture after Independence*, edited by H. Pathak, JP Mishra, and T. Mohapatra, Indian Council of Agricultural Research, 2022, p. 42.
[5] Kumar, Aruna T., Rajbir Singh, and PS Panwar. "Ancient Indian Literature on Animal Housing and Health Corroborated by Modern Literature." *Asian Agri-History*, vol. 19, no. 4, 2015, p. 318.
[6] कौटिल्य, *अर्थशास्त्र,* ०२.३०.०१
[7] Chakraborty, Swarnendu. "History of Animal Keeping in Ancient India and Its Socio-Economic, Scientific Applicability in the 21st Century." *British Journal of Philosophy, Sociology and History*, vol. 3, no. 1, 2023, p. 6.
[8] Kumar et al., "Ancient Indian Literature," p. 321.
[9] Chakraborty, "History of Animal Keeping," p. 6; Kumar et al., "Ancient Indian Literature," p. 316.
[10] Ibid., p. 6; Chauhan, "Animal Husbandry," p. 45.
[11] Somavanshi, "Veterinary Medicine," p. 143-145.
[12] Ibid., p. 133, 137.
[13] Ibid., p. 142; Kumar et al., "Ancient Indian Literature," p. 318.
[14] Kumar et al., "Ancient Indian Literature," p. 323.
[15] Somavanshi, "Veterinary Medicine," p. 144.
[16] Chakraborty, "History of Animal Keeping," p. 6.
[17] Lobo, Ryan, and Meghna Uniyal. "Animal Rights Ideology vs Animal Welfare in the Indian Context." Bionotes, vol. 23, no. 4, 2021, p. 207–208.
[18] Kumar et al., "Ancient Indian Literature," p. 316.
[19] Chauhan et al., "Animal Husbandry," p. 45.
[20] कौटिल्य, २.३१.
[21] कौटिल्य, २.३२.
[22] Chakraborty, "History of Animal Keeping," p-6; Chauhan et al,"Animal Husbandry" p-44
[23] कौटिल्य, ०२.३०.०१.
[24] कौटिल्य, ०२.३०.०२.
[25] कौटिल्य, ०२.३०.०४.
[26] कौटिल्य, ०२.३०.०५-०६.
[27] कौटिल्य, ०२.३०.०७.
[28] कौटिल्य, ०२.३०.०८-१०.

[29] कौटिल्य, ०२.३०.११-१३.
[30] कौटिल्य, ०२.३०.
[31] कौटिल्य, ०२.३०.१४-१७.
[32] कौटिल्य, ०२.३०.२७-२८.
[33] कौटिल्य, ०२.३०.२९.
[34] कौटिल्य, ०२.३१.०१.
[35] कौटिल्य, ०२.३१.०२-०३.
[36] कौटिल्य, ०२.३१.०५-०७.
[37] कौटिल्य, ०२.३१.०८-०९.
[38] कौटिल्य, ०२.३१.१०.
[39] कौटिल्य, ०२.३१.११.

मोहित कुमार पाण्डेय
सहायक आचार्य, संस्कृत विभाग, हंसराज महाविद्यालय
डॉ. आशीष कुमार, सहायक आचार्य, संस्कृत संकाय
इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
दीपज्योति देव
शोधार्थी, संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय

समाज में मीडिया की भूमिका: लोकतंत्र के विकास में अवसर एवं चुनौतियाँ

डॉ. सुमन मौर्य

शोध-सार: भारतीय लोकतंत्र के विकास में मीडिया ने अति महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। मीडिया की सार्वभौमिक और सर्वस्वीकार्य भूमिका स्थापित करने के लिए आवश्यक है कि मीडिया एक सर्वमान्य आचार संहिता बनाए, जिससे स्वतंत्रता के दुरुपयोग की संभावना न रहे। मीडिया के सकारात्मक और रचनात्मक योगदान की पहचान के लिए आवश्यक है कि मीडिया अपनी गरिमा, अपने उद्देश्य, देश के प्रति अपने कर्तव्य एवं दायित्व तथा समाज के प्रति अपनी जवाबदेही को गंभीरता से समझे। इसलिए कि भारतीय लोकतंत्र में मीडिया एक आदर्श अभिव्यक्ति है। जिसके साथ भारत की सांस्कृतिक मर्यादा एवं गौरवशाली आस्था जुडी है। भारत जैसे विकासशील देश में समाचार पत्र प्रमुख रूप से लोगों में साक्षरता को बढ़ावा देने व जागरुक बनाए रखने तथा ग्रामीण क्षेत्रों को सूचना माध्यम से जोड़ने में निरंतर प्रयासरत है।

मुख्य शब्द:- मीडिया, लोकतंत्र, समानता, स्वतंत्रता, बंधुत्व, समावेशी विकास आदि।

मीडिया किसी भी समाज का दर्पण होता है। जिसमें समाज या राष्ट्र की सामाजिक, राजनीतिक आर्थिक, सांस्कृतिक गतिविधियां प्रतिबिंबित होती हैं। मीडिया में प्रिंट मीडिया और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया दोनों सम्मिलित है। भारतीय लोकतंत्र के विकास में मीडिया ने अति महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

भारत में पत्रकारिता की शुरुआत 18वीं सदी में हुई। 'बंगाल गजट (हिक्कीज गजट)' पहला मीडिया प्रकाशन था। भारत का पहला अख़बार कोलकाता जर्नल एडवरटाइजर था जिसका नाम 'हिक्कीज बंगाल गजट' था, जो 1780 में शुरू हुआ था।

सन् 1674 में भारत में पहली मुद्रण सामग्री मुंबई में स्थापित की गई। भारत में पत्रकारिता की शुरूआत 18वीं सदी में हुई थी। 'बंगाल गैजेट (हिकी गैजेट) पहला मीडिया प्रकाशन था। भारत का पहला समाचार पत्र कोलकाता जर्नल एडवर्टाइज जिसे 'हिक्कीज बंगाल गजट'कहा गया, जो सन् 1780 में शुरू हुआ था। हिंदी का प्रथम समाचार पत्र सुधावर्षण वर्ष 1854 में प्रकाशित हुआ।[1] वैश्विक परिप्रेक्ष्य में देखें तो चीन के बाद भारत में समाचार पत्रों की सर्वाधिक प्रसार संख्या है। यदि भारत के इतिहास का विश्लेषणात्मक अध्ययन करें तो पाएंगे कि स्वतंत्रता आंदोलन को गति प्रदान करने में समाचार पत्रों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। महान क्रांतिकारी और देशभक्त नेताओं के लिए एक शब्द जिन्होंने अंग्रेजों के उत्पीड़न, दमन और शोषण का खुलकर विरोध किया। वहीं दूसरी ओर प्रेस ने सामाजिक सुधार और पुनर्जागरण के माध्यम से सामाजिक कुरीतियों को खत्म करने में भी प्रमुख भूमिका निभाई है। संवाद कौमुदी, मराठा, केसरी, युगांतर, गदर, अमृत बाजार पत्रिका, न्यू इंडिया आदि ऐसे समाचार पत्र थे जिन्होंने न केवल भारत के स्वतंत्रता संग्राम में उल्लेखनीय योगदान दिया अपितु जीर्ण-शीर्ण रीति-रिवाजों पर भी कड़ा प्रहार किया।

आजादी से पहले की पत्रकारिता:

- पहला अखबार 'बंगाल गैजेट सन् 1780 में आरंभ हुआ था। अंग्रेजी का यह साप्ताहिक अखबार जेम्स ऑगस्टस हिकी ने शुरू किया था।
- भारतीय भाषा में छपने वाला पहला अख़बार 'संवाद कौमुदी' बंगाली भाषा का पहला दैनिक अख़बार था, जो वर्ष 1821 में प्रकाशित हुआ था। यह भी भारतीय भाषा में प्रकाशित होने वाला पहला अख़बार था जिसकी शुरुआत राजा राम मोहन राय ने की थी।
- बॉम्बे समाचार पत्र जो एशियाई सबसे पुराना समाचार पत्र है और अभी भी अस्तित्व में है, को बाबासा फरदुनजी ने सन् 1822 में आरंभ किया था।
- पहला उर्दू अखबार जाम-ए-जहांनुमा सन् 1822 में दिल्ली से शुरू हुआ।
- देश में पहला हिंदी समाचार पत्र 'मार्तण्ड' वर्ष 1826 में शुरू हुआ, इसे जुगल किशोर शुक्ल ने आरंभ किया था।
- बाला शास्त्री जाम्भेकर ने वर्ष 1832 में पहला मराठी समाचार पत्र 'दर्पण' शुरू किया तथा वर्ष 1840 में उन्होंने मासिक दिग्दर्शन प्रकाशित किया।
- जर्नल ऑफ कॉमर्स, द बॉम्बे टाइम्स एंड जर्नल ऑफ कॉमर्स की शुरुआत सन् 1838 में हुई। बाद में यह द टाइम्स ऑफ इंडिया बन गया।
- पहला उर्दू-हिंदी समाचार पत्र 'पयाम-ए-आज़ादी' वर्ष 1857 में शुरू हुआ था। भारत की आज़ादी के लिए आवाज़ उठाने वाला यह पहला उर्दू समाचार पत्र भी था।
- तिलक और गांधी जैसे नेताओं ने भी समाचार पत्र शुरू किए। वर्ष 1881 में बाल गंगाधर तिलक ने मराठी समाचार पत्र 'केसरी' का प्रकाशन आरंभ किया।
- सन् 1903 में गांधी जी ने दक्षिण अफ्रीका से कमज़ोर वर्गों के लिए 'इंडियन ओपिनियन' शुरू किया। वर्ष 1909 में पंडित मदन मोहन मालवीय ने 'द लीडर' नाम से अख़बार शुरू किया। सन् 1913 में गणेश शंकर विद्यार्थी ने क्रांतिकारियों के लिए कानपुर से 'प्रताप' अखबार शुरू किया।
- प्रिन्ट मीडिया के साथ इलेक्ट्रॉनिक मीडिया की भी शुरूआत हुई।
- इंडियन ब्रॉडकास्टिंग कंपनी ने वर्ष 1927 में पहला रेडियो समाचार प्रसारित किया। भारत में आकाशवाणी ने वर्ष 1956 से समाचार सेवाएं आरंभ की।[2]

- दूरदर्शन पर पहला समाचार 1965 में शुरू हुआ। दूरदर्शन पर 5 मिनट का समाचार बुलेटिन शुरू किया गया।

- दूरदर्शन पर प्रथम समाचार प्रसारण वर्ष 1965 में शुरू हुआ। दूरदर्शन पर यह समाचार बुलेटिन 5 मिनट का शुरू किया गया।
- वर्ष 1975 में देश में इमरजेंसी लगी। प्रेस को सेंसर किया गया था।
- पहला न्यूज़ एनालिसिस शो प्रणय रॉय ने 1988 में दूरदर्शन पर वर्ल्ड दिस वीक नाम से शुरू किया था। इसे अपनी तरह का पहला शो माना जाता है।

- वर्ष 1998 स्टार इंडिया ने आम चुनावों के लिए स्टार न्यूज चैनल शुरू किया, जो भारत का पहला 24 घंटे का न्यूज चैनल (एनडीटीवी के साथ) था।

प्रेस की स्वतंत्रता एक अमुल्य विशेषाधिकार है। जिस देश के समुदाय को यह स्वतंत्रता प्राप्त है, वह सच्चे अर्थो में आजाद है। भारत में मीडिया ने यह आजादी संघर्ष से हासिल की है और हर मौके पर लोकतंत्र के चौथे स्तंभ के रूप में अपनी जिम्मेदारी निभाई है।

नवंबर 1838 को बॉम्बे टाइम्स एंड जर्नल ऑफ कॉमर्स नाम से इस अखबार की शुरुआत हुई। अखबार बंबई के व्यापारी समुदाय के लिए था जो शनिवार-बुधवार को प्रकाशित होता था। वर्ष 1850 से इसका दैनिक प्रकाशन आरंभ हुआ। वर्ष 1861 में इसे 'द टाइम्स ऑफ इंडिया' नाम मिला। वर्ष 1892 में इसे थॉमस ज्वेल बेनेट और फ्रैंक मोरिस कोलमेन ने खरीदा। वर्ष 1946 में उद्योगपति रामकृष्ण डालमिया ने इसे खरीदा। इसके बाद उनके दामाद साहू शांति प्रसाद जैन ने कमान संभाली और तब से इसे जैन परिवार ही संचालित करता है।[3]

22 मार्च 1890 में केरल के कोट्टायम से मलयाला मनोरमा का पहला अंक प्रकाशित हुआ। वर्गीस मपिल्लई इसके पहले संपादक थे। चार पन्नों का यह साप्ताहिक अख़बार शनिवार को प्रकाशित होता था। वर्ष 1928 में यह दैनिक अख़बार बना। वर्ष 1938 में त्रावणकोर राज्य के दीवान के ख़िलाफ़ ख़बर छापने से इसे प्रतिबंधित किया गया। भारत की आज़ादी और दीवान के पतन के बाद वर्ष 1947 में मलयाला मनोरमा का नियमित प्रकाशन फिर से शुरू हुआ। आज पूरे देश में 'मनोरमा ईयर बुकश्' के लिए इसे जाना जाता है।

मातृभूमि पहली बार 18 मार्च 1923 को कोझिकोड से प्रकाशित हुई। स्वतंत्रता सेनानी के.पी. केशव मेनन इसके संपादक थे। राष्ट्रीय आंदोलन की आवाज बुलंद करने से इस पर लगातार प्रतिबंध, पाबंदी, गिरफ्तारी का दबाव रहा। वर्ष 1942 में भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान कोच्चि में महिलाओं के साथ यूरोपीय सैनिकों के दुर्व्यवहार पर लेख प्रकाशित हुआ तो सरकार ने मातृभूमि पर प्रतिबंध लगा दिया, लेकिन भारी विरोध के कारण प्रतिबंध हटाना पड़ा।[4]

18 अप्रैल, 1948 को डोरीलाल अग्रवाल और मुरारीलाल माहेश्वरी ने आगरा शहर से यह अखबार शुरू किया था। उत्तराखंड आंदोलन के दौरान तत्कालीन मुख्यमंत्री खबरों को रोकना चाहते थे, लेकिन अमर उजाला ने लगातार आंदोलन की खबरें प्रकाशित कीं। अखबार के खिलाफ हल्लाबोल का सार्वजनिक ऐलान किया गया था। अखबार की प्रतियां जलाई जाने लगीं और विज्ञापन रोक दिए गए। आज यह अखबार 6 राज्यों व 2 केंद्र शासित राज्यों में मौजूद है।

डोरीलाल अग्रवाल और मुरारीलाल माहेश्वरी ने 18 अप्रैल 1948 में आगरा शहर से इस अख़बार की शुरुआत की थी। उत्तराखंड आंदोलन के दौरान तत्कालीन मुख्यमंत्री ने इस अख़बार को बंद करवाना चाहा था, लेकिन अमर उजाला ने आंदोलन की रिपोर्टिंग जारी रखी। अख़बार के ख़िलाफ़ जन आक्रोश की घोषणा की गई। अख़बार की प्रतियां जलाई गईं और विज्ञापन बंद कर दिए गए। आज यह अख़बार 6 राज्यों और 2 केंद्र शासित प्रदेशों में मौजूद है। वर्ष 1924 में अकाली दल शिरोमणि के संस्थापक सुंदर सिंह लायलपुरी ने आजादी की लड़ाई में मदद हेतु अंग्रेजी अखबार हिन्दुस्तान टाइम्स शुरू किया। अकालियों को इसे चलाने में दिक्कत होने लगी तो गांधीजी के कहने पर पंडित मदनमोहन मालवीय ने 1925 में लाला लाजपत राय, जेडी बिड़ला की मदद से 40 हजार रुपए

जुटाकर कुछ समय के लिए इसे संभाला। वर्ष 1933 में जेडी बिड़ला ने इसे ले लिया। वर्ष 1937 से 1957 तक इसके मैनेजिंग एडिटर गांधीजी के बेटे देवदास गांधी भी रहे।

वर्ष 1956 में आजाद भारत की जरूरतों को समझते हुए द्वारका प्रसाद अग्रवाल ने भोपाल से 'सुबह सवेरे'और ग्वालियर से गुड मॉर्निंग इंडियाश् का प्रकाशन शुरू किया। वर्ष 1957 में इन दोनों अखबारों का नाम बदलकर 'भास्कर समाचार'कर दिया गया। फिर 1958 में अखबार का नाम 'दैनिक भास्कर' कर दिया गया। द्वारका प्रसाद अग्रवाल के बाद उनके बेटे रमेश चंद्र अग्रवाल ने इसे संभाला। वे कहते थे कि पाठक ही अखबार का मालिक हैं। पाठकों के इसी सिद्धांत पर यह अखबार प्रकाशित होता है।

5 सितंबर, 1932 को आयुर्वेदिक डॉ. पी. वरदराजू नायडू ने मद्रास में इंडियन एक्सप्रेस की शुरुआत की। उन्हें दक्षिण भारत का तिलक कहा जाता था। वित्तीय संकट के कारण वर्ष 1939 में रामनाथ गोयनका ने इसे ले लिया। त्रावणकोर और मैसूर राजघरानों का राष्ट्रीय आंदोलन के प्रति नकारात्मक नजरिया था। इसके खिलाफ लिखने पर कुछ समय के लिए अखबार पर प्रतिबंध भी लगा। वर्ष 1975 में इमरजेंसी में इंडियन एक्सप्रेस ने सेंसरशिप के खिलाफ संपादकीय खाली छोड़कर विरोध जताया था।[5]

पंजाब केसरी के संस्थापक जगत नारायण सिर्फ 21 वर्ष के थे, जब उन्होंने कानून की पढ़ाई छोड़ कांग्रेस जॉइन की थी। बाद में नारायण की लाला लाजपत राय से लाहौर जेल में हुई। वर्ष 929 में लाला लाजपत राय द्वारा स्थापित लोक सेवक मंडल ने पंजाब केसरी नामक साप्ताहिक पत्र का प्रकाशन शुरू किया। हालाँकि, अख़बार आधिकारिक तौर पर 1965 में शुरू हुआ था। इसकी स्थापना के 16 साल बाद, लाला जगत नारायण की आतंकवादियों ने हत्या कर दी थी।

वर्ष 1878 में तत्कालीन एंग्लो-इंडियन प्रेस मद्रास उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की पीठ में सर टी. मुथुस्वामी अय्यर को शामिल करने के खिलाफ थी। इस पर विधि के चार छात्रों और दो शिक्षकों ने चेन्नई से साप्ताहिक समाचार पत्र 'द हिंदू' शुरू किया। 23 वर्षीय शिक्षक जी. सुब्रमण्यम अय्यर इसके संपादक थे और 21 वर्षीय शिक्षक एम. वीर राघवाचार्य इसके प्रबंध निदेशक थे। इसकी शुरुआत 1 रुपया 12 आना की पूंजी से हुई थी। 1905 में एस. कस्तूरीरंग अयंगर ने इसे अपने हाथ में ले लिया, तब से यह समाचार पत्र कस्तूरी परिवार के पास है।[6]

आनंद बाज़ार पत्रिका पहली बार वर्ष 1922 में चार पन्नों के शाम के दैनिक समाचकर के रूप में प्रकाशित हुई थी। इसकी कीमत दो आने थी और इसकी प्रतिदिन एक हज़ार प्रतियाँ बिकती थीं। कट्टर देशभक्ति के कारण यह अंग्रेजों के लिए चुनौती बन गई। वर्ष 1931 में इसे कुछ महीनों के लिए प्रतिबंधित कर दिया गया था, लेकिन यह पहले से कहीं ज़्यादा मज़बूती से वापस आई। इससे पहले अमृत बाज़ार पत्रिका अख़बार वर्ष 1876 में जेसोर (अब बांग्लादेश) से प्रकाशित होता था।

वर्ष 1937 में पूरनचंद गुप्ता ने कानपुर के धन्नाकुट्टी में युगांतर नाम से प्रिंटिंग प्रेस शुरू की, जिसका उद्देश्य लोगों को आजादी की लड़ाई में राष्ट्रीय आंदोलन की गतिविधियों से अवगत कराना था। 1938 में उन्हें साप्ताहिक समाचार पत्र प्रकाशित करने का विचार आया। वर्ष 1939 में कानपुर से साप्ताहिक समाचार पत्र शुरू कियाय़ 1942 में झांसी से दैनिक जागरण का प्रकाशन शुरू हुआ। सविनय अवज्ञा आंदोलन के दौरान गांधी जी के आह्वान पर तीन महीने तक अखबार का प्रकाशन बंद रहा।[7]

चेरुकुरी रामोजी राव ने 1974 में आंध्रप्रदेश के विशाखापत्तनम से तेलुगु भाषा का अखबार इनाडु शुरू किया तब विशाखापट्टनम में कोई अखबार नहीं था। आंध्रज्योति अखबार विजयवाड़ा से निकलता और दोपहर में विशाखापत्तनम पहुंचता था। लोग शाम को काम से लौटकर अखबार पढ़ते थे। शाम को काम से लौटने के बाद लोग अखबार पढ़ते थे। सुबह के अखबार की कमी को महसूस करते हुए रामोजी राव ने ईनाडु की शुरुआत की। ईनाडु की शुरुआत हैदराबाद में 1975 में और विजयवाड़ा में 1978 में हुई। अब यह प्रदेश का सबसे बड़ा अखबार है।

25 जून, 1975 को देश में इमरजेंसी लगाई गई थी। इसके अगले दिन रीडर्स डाइजेस्ट के पत्रकार अशोक महादेवन ने टाइम्स ऑफ इंडिया में एक शोक संदेश छपवाया। यह शोक संदेश 'लोकतंत्र की हत्या' पर आधारित था। इसमें लिखा था सच के पति, आजादी के भाई, विश्वास, उम्मीद और न्याय के पिता की मृत्यु 26 जून को हो गई है।

वर्ष 1929 में क्रांतिकारी जतींद्रनाथ दास कई दिनों से जेल में बंद थे और भूख हड़ताल पर थे। 13 सितंबर, 1929 को लाहौर की बोर्टल जेल में जबरदस्ती खाना खिलाते समय उनकी मृत्यु हो गई। ट्रिब्यून अखबार ने दास की तस्वीर को पहले पन्ने पर छापा था। खबरों के अनुसार इसे देखकर शवयात्रा में 5 लाख लोग पहुंचे। ब्रिटिश सरकार डर गई। इसके बाद अंग्रेजों ने क्रांतिकारियों के शव परिजनों को सौंपना बंद कर दिया था।[8]

वर्ष 1942 में भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान अंग्रेजों ने अखबारों के कामकाज में दखल देना शुरू कर दिया था। अखबारों पर आजादी की खबरों को कम जगह देने का दबाव बनाया जा रहा था। गांधी जी ने इसका विरोध किया, जिसके बाद देश के 14 बड़े अखबारों ने विरोध में प्रकाशन बंद कर दिया। 1942 में मातृभूमि ने 22 अगस्त से 2 सितंबर तक अपना अखबार नहीं निकाला। यह वह समय था जब आजादी की लड़ाई अपने चरम पर पहुंच रही थी।

भारत में इलेक्ट्रॉनिक मीडिया की शुरुआत 1925 में हुई थी। जिसने स्वतंत्रता के बाद लोकतंत्र में जनभागीदारी बढ़ाने में अहम भूमिका निभाई है। स्वतंत्रता के बाद सरकारी नीतियों और विकास कार्यक्रमों को लोगों तक पहुंचाने में मीडिया का सराहनीय योगदान रहा है। साक्षरता, राजनीतिकरण और आधुनिकीकरण के प्रसार की प्रक्रिया के साथ-साथ इलेक्ट्रॉनिक मीडिया भी आम लोगों से गहराई से जुड़ा है। मीडिया लोकतंत्र में जनमत निर्माण, सामाजिक सृजनशीलता, सरकारी त्रुटियों की आलोचना करता है।[9]

लोकतंत्र में प्रेस व मीडिया की महता इस बात से भी पता चलती है कि अमेरिका के प्रथम संवैधानिक संशोधन में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को जोड़ा गया है तथा भारत के संविधान में अनुच्छेद अनुच्छेद 19 (1)(अ) में प्रेस की स्वतंत्रता के संबंध में व्यापक प्रावधान है। प्रेस को एक गरिमा में स्थान प्रदान किया गया है। प्रेस परिषद विधेयक, 1956 के द्वारा भारतीय प्रेस परिषद अस्तित्व में आई।[10] भारत के संविधान में वर्णित अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अंतर्गत अनुचित सरकारी नीतियों की आलोचना करने की स्वतंत्रता प्रदान की गई है, परंतु मीडिया को अपने स्वतंत्रता के अधिकार का उपयोग करते समय यह भी ध्यान रखना चाहिए कि इसमें छपे व प्रसारित तथ्य ऐसे न हों जो देश की एकता, अखंडता व शांति में बाधक हो।

न्यायमूर्ति पालकीवाला के अनुसार 'जिस प्रकार मानव को जीवित रहने हेतु प्राणवायु ऑक्सीजन की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार लोकतंत्र की निरंतरता हेतु प्रेस की स्वतंत्रता अपरिहार्य है।' प्रसिद्ध दार्शनिक जॉन मिल्टन ने

कहा कि ’मुझे जानने की स्वतंत्रता दे दो, ताकि मैं अपनी अंतरात्मा के अनुसार स्वतंत्र रूप बहस व प्रतिरोध कर सकूं, जो कि सभी स्वतंत्रताओं से सर्वापरि है। वर्तमान समय में राजनीति के अपराधीकरण एवं भ्रष्टाचार के माहौल में मीडिया की जिम्मेदारी बहुत बढ़ गई है। इसने भ्रष्ट नेताओं को बेनकाब करने और असामाजिक तत्वों को सजा दिलाने में अपनी आदर्श भूमिका निर्वहन किया है।

लोकतंत्र के तीन आधार स्तम्भ होते हैं; समानता, स्वतंत्रता और बंधुत्व। जिनका सरोकार न्याय से हैं, जिनको वर्तमान समय में मीडिया के सापेक्ष प्राप्त किया जा सकता है तथा इस संदर्भ की व्याख्या कई सारे उदाहरणों व घटनाचक्र के माध्यम से कर सकते हैं। जैसे मीडिया ने ही मानव तस्करी, नरेगा में होने वाले भ्रष्टाचार, पर्यावरण समस्या, रक्षा खरीद घोटाले का पता भी मीडिया के माध्यम से लगा।[11]

भोपाल गैस त्रासदी को मीडिया ने उठाया व इसके पीडितों हेतु मुआवजे की राशि भी बढवाई, रुचिका गहरोत्रा कांड को उठाकर मीडिया द्वारा ही हरियाणा के पूर्व डीजीपी को दोषी ठहराया गया, हिमाचल प्रदेश मेडिकल कॉलेज के प्रथम वर्ष के छात्र द्वारा रैगिंग से परेशान होकर आत्महत्या करने के उपरांत उनके पिता द्वारा चलाए गए एंटी रैगिंग कैंपेन में मीडिया के सहयोग से ही दोषी छात्रों को सजा मिल सकी व पूरे देश भर में एंटी रैगिंग कानून लागू हुआ।

देश की न्याय प्रक्रिया में भी मीडिया ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। समाचार पत्रों में छपी खबरों को जनहित याचिका मानकर सर्वोच्च न्यायालय ने स्वयं संज्ञान लेते हुए कई महत्वपूर्ण निर्णय दिए हैं, जो सर्वोच्च न्यायालय के न्यायिक सक्रियता का परिचय देते हैं। उन्हें सही न्याय दिलाने में मीडिया ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। देश में स्वस्थ न्यायिक प्रक्रिया विकसित करने में सराहनीय योगदान दिया है।[12] राष्ट्र निर्माण में प्रेस की भूमिका को महत्व देते हुए पूर्व अमेरिकी राष्ट्रपति थॉमस जेफरसन ने कहा था, "यदि हमें सरकार वाले लेकिन प्रेस रहित राष्ट्र और सरकार रहित लेकिन प्रेस वाले राष्ट्र के बीच चयन करना हो, तो मैं बाद वाली व्यवस्था को चुनूंगा।" उनके अनुसार किसी देश में सरकार चाहे ना हो, परंतु प्रेस अवश्य हो जिससे जनता को सही दिशा मिल सके।[13]

मीडिया; सरकार, सरकारी नीतियों और कार्यक्रमों तथा महत्वपूर्ण फैसलों के विषय में जनमत का निर्माण करता है। विदेश नीति निर्माण के विषय में उपयुक्त विश्लेषण प्रस्तुत करता है। राजनीतिक दलों की स्वार्थ सिद्धि हेतु संविधान के दुरुपयोग पर अंकुश लगाता है। यह न्यायापालिका के लिए तीसरी आंख का कार्य करता है। भ्रष्ट सरकारी तंत्र तथा भ्रष्टाचार में लिप्त नेताओं को उजागर करने में विभिन्न पत्रकारों तथा चैनलों ने निस्संदेह ख्याति अर्जित की है। आजतक व स्टार न्यूज़ इसके ज्वलंत उदाहरण है। ऑपरेशन दुर्याधन व ऑपरेशन चक्रव्यूह प्रमुख स्टिंग ऑपरेशन रहे, जिनके माध्यम से समय-समय पर मीडिया ने ही देश की गरिमा को दांव पर रखने वाले भ्रष्ट नेताओं को बेनकाब किया। इसके अलावा सरकार को भी देशहित में उचित निर्णय लेने में मार्गदर्शक की भूमिका निभाई है।[14]

यह भारतीय संविधान के भाग-3 में वर्णित नागरिकों के मौलिक अधिकारों का हनन न हो, इसके लिए एक सजग प्रहरी की भूमिका निभाता है।[15] यह सर्वहारा वर्ग के साथ हो रहे अन्याय को सरकार के समक्ष प्रस्तुत करता है, ताकि जन असंतोष को देखते हुए सरकार जनता के हित में अपनी नीतियां बना सके। इस प्रकार सरकार और समाज के बीच समन्वय की स्वस्थ परंपरा विकसित करने में मीडिया की सबसे महत्वपूर्ण भूमिका है। मीडिया के

माध्यम से ही विभिन्न राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक समूह एक-दूसरे के विचारों, मान्यताओं, विश्वासों और अपेक्षाओं से परिचित होते हैं।

भारत जैसे विकासशील देश में साक्षरता फैलाने, लोगों को जागरूक रखने तथा ग्रामीण क्षेत्रों को सूचना से जोड़ने में समाचार-पत्रों की मुख्य भूमिका है। हमारी संस्कृति के प्रति सम्मान बनाए रखने में मीडिया ही है जो अंतर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में इसके महत्व का गौरवपूर्ण प्रस्तुतीकरण करता है, ताकि हमारे युवा कर्तव्य बोध से देश के विकास में योगदान दे सकें। विपत्ति एवं भयंकर आपदा के समय मीडिया सम्पूर्ण देश की सहानुभूति प्राप्त करने में आदर्श संस्था के रूप में कार्य करता है।[16] नैतिक अपील के माध्यम से सम्पूर्ण देश से सहायता मांगी जाती है, ताकि सम्पूर्ण भारत को विपत्ति का सामना करने के लिए एकता के सूत्र में बांधा जा सके।

लेकिन आज मीडिया ने व्यवसायिक दृष्टिकोण अपना लिया है, जिससे मानवीय मूल्यों और नैतिकता की उपेक्षा हुई है। रंग-बिरंगे प्रस्तुतीकरण और मसालेदार खबरों ने सांस्कृतिक मूल्यों को पतन की ओर धकेल दिया है। ग्लैमरस सेल्युलाइड ने भी कुरूप विज्ञापनों और समाचार-पत्रों पर कब्जा कर लिया है, जिससे युवा पीढ़ी निर्माण के उद्देश्य से भटककर संस्कारहीनता की स्थिति पैदा हो गई है। चैनलों के बीच बढ़ती प्रतिस्पर्धा ने असमंजस की स्थिति पैदा कर दी है। कमोबेश मीडिया अपनी पारंपरिक रचनात्मक और सकारात्मक भूमिका से हटकर नकारात्मक भूमिका जैसे कॉरपोरेट घरानों के हितों की पूर्ति, पीत पत्रकारिता, पेड न्यूज और ऐसी ही अन्य विसंगतियों विज्ञापन व समाचार पत्रों को भी अपनी आगोश में ले लिया है, ग्लेमरस सेलुलाईड जिससे पीढी निर्माण के उद्देश्य से भटककर संस्कारहीनता की स्थिति पैदा हो गई है। चैनलो की बढ़ती प्रतिस्पर्धा ने संशय की स्थिति ला दी है। कमोबेस मीडिया अपनी परंपरागत रचनात्मक व सकारात्मक भूमिका से नकारात्मक भूमिका जैसे कॉपरिट घरानों के हितों की पूर्ति, पीत पत्रकारिता, पेड न्यूज़ जैसी विसंगतियों में फंसता नजर आ रहा है।

मीडिया में कमियों को देखते हुए कुछ सुधार किए जा सकते हैं जैसे सनसनी पैदा करने के लिए अतिशयोक्ति से बचना, दबाव में तथ्यों को दबाना, बदलना या विकृत करके प्रस्तुत करना उचित नहीं है। धार्मिक विवादों पर लिखते समय सभी संप्रदायों और समुदायों को समान सम्मान दिया जाना चाहिए। अफवाहों और अपुष्ट खबरों को संपादित नहीं किया जाना चाहिए।

यह आवश्यक है कि मीडिया एक सर्वमान्य आचार संहिता बनाए, ताकि स्वतंत्रता के दुरुपयोग की कोई संभावना न रहे। ऐसे में यह आवश्यक है कि मीडिया अपनी गरिमा, अपने उद्देश्य, देश के प्रति अपने कर्तव्य और जिम्मेदारी तथा समाज के प्रति अपनी जवाबदेही को गंभीरता से समझे, क्योंकि भारतीय लोकतंत्र में मीडिया एक आदर्श अभिव्यक्ति है। जिसके साथ भारत की सांस्कृतिक गरिमा और गौरवशाली आस्था जुड़ी हुई है।

सन्दर्भ सूची

1. देवव्रत "गा़वों की खबरों पर पर्दा" विदुर, नई दिल्ली, अंक-2 वर्ष अप्रेल-जून 2005, प्रेस इंस्टीट्यूट ऑफ इंडिया की पत्रिका, पृष्ठ संख्या 46-49।
2. अनिल चमड़िया,''ग्रामीण विकास और मीडिया'' कुरूक्षेत्र, नई दिल्ली, अंक-4, वर्ष-फरवरी 2001, ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार, पृष्ठ संख्या 15-17।
3. प्रभात रंजन,''स्थानीय मुद्दों सं दूर क्षेत्रीय अखबार" विदुर, प्रेस इंस्टीट्यूट ऑफ इंडिया, जामिया नगर, नई दिल्ली, वर्ष-44 अंक-1, जनवरी-मार्च, 2005, पृष्ठ संख्या 13-15।

4. उपाध्याय सुधांशु, आधुनिक पत्रकारिता और ग्रामीण प्रसंग, रांका प्रकाशन, इला0।
5. मेहता आलोक, भारत में पत्रकारिता, नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली।
6. तिवारी अर्जुन, आधुनिक पत्रकारिता, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी।
7. कमला भसिन थापर, टर्निंग डेजरंस इन टू ऑपरटयुनिटिज, 2003।
8. फ्लेविया एजिस, जर्नी टू जस्टिस, मुम्बई, मजलिस, 1990 पेज नं. 489.।
9. राधिका चोपडा, साउथ एशिया मसकुलिनिटिज, नई दिल्ली, वीमेन अनलिमिटेड,2004।
10. द इण्डियन एक्सप्रेस, 30.12.2012, पेज न012।
11. द टाइम्स ऑफ इण्डिया, 26.09.2008: सम्पादकीय: ए स्ट्रांग मैसेज
12. डेली न्यूज, 31.12.2012, पेज न0.08।
13. दैनिक भास्कर, 30.12. 2012, पेज न0.01
14. दैनिक भास्कर, 11.05.2024, पेज न0.02
15. दैनिक नवज्योति, 16.01.2012, पेज न0.06
16. राजस्थान पत्रिका, 16.12.2013, पेज न0.06,09,

डॉ· सुमन मौर्य
सहायक प्रोफेसर (राजनीतिक विज्ञान)
राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर
Email Id-mauryadrsuman@gmail.com

डिजिटल युग में नैगम संचार की उभरती प्रवृत्तियाँ: चुनौतियाँ एवं अवसर

डॉ. शैलेश शुक्ला

सारांश

डिजिटल युग में नैगम संचार ने कंपनियों के लिए नई संभावनाएँ और चुनौतियाँ प्रस्तुत की हैं। इंटरनेट, सोशल मीडिया और मोबाइल प्रौद्योगिकी के प्रसार ने संचार के तरीकों को पूरी तरह से बदल दिया है। जिससे कंपनियों को अपनी रणनीतियों को नए सिरे से परिभाषित करने की आवश्यकता पड़ी है। इन प्रवृत्तियों के साथ तालमेल बनाए रखना और संचार की प्रभावशीलता को बढ़ाना किसी भी संगठन की सफलता के लिए अनिवार्य हो गया है। (Bell & Zaric, 2012;)[1]

डिजिटल युग में नैगम संचार की सबसे महत्वपूर्ण प्रवृत्तियों में गोपनीयता तथा डेटा सुरक्षा का महत्व है। एक और महत्वपूर्ण चुनौती त्वरित प्रतिक्रिया की अपेक्षा है। सोशल मीडिया तथा अन्य डिजिटल प्लेटफार्म पर उपभोक्ता तात्कालिक उत्तर की अपेक्षा करते हैं। इस प्रवृत्ति ने कंपनियों को चौबीसों घंटे सक्रिय रहने और उपभोक्ताओं की समस्याओं के त्वरित समाधान के लिए निरंतर प्रेरित किया है। (USC Online, 2023).[2]

कंपनियाँ; डिजिटल संचार के माध्यम से वैश्विक बाजारों तक पहुंचती हैं, जिससे उन्हें नए उपभोक्ताओं और व्यापारिक अवसरों का लाभ उठाने का अवसर मिलता है। यह वैश्विक पहुंच न केवल व्यापार के विस्तार में मदद करती है, अपितु प्रतिस्पर्धा में भी बढ़त दिलाती है। (JGU, 2021)[3]

मुख्य शब्द : डिजिटल नैगम संचार, इंटरनेट प्रभाव, सोशल मीडिया रणनीति, मोबाइल प्रौद्योगिकी, डेटा सुरक्षा, तात्कालिक प्रतिक्रिया, तकनीकी जटिलताएँ, वैश्विक पहुंच, किफायती विपणन रचनात्मकता ,नवाचार ,

परिचय

डिजिटल युग ने नैगम संचार को एक नया आयाम दिया है। इंटरनेट, सोशल मीडिया और मोबाइल प्रौद्योगिकी के उभरने से कंपनियों को अपने संचार रणनीतियों को पुनर्परिभाषित करने की आवश्यकता पड़ी है। इसके अलावा, क्लाउड आधारित संचार प्लेटफार्म ने सहयोग को पारदर्शी और सुगम बना दिया है। इन तकनीकों ने न केवल संचार की गति को बढ़ाया है अपितु कर्मचारियों को दूरस्थ रूप से काम करने की अनुमति देकर कार्य संस्कृति में भी बदलाव लाया है।

कंपनियाँ, डिजिटल माध्यमों के उपयोग से अधिक प्रभावी लागत-विपणन कर सकती हैं। पारंपरिक विपणन की तुलना में डिजिटल विपणन की लागत कम होती है, जिससे छोटे और मध्यम आकार के व्यवसाय भी बड़े स्तर पर प्रतिस्पर्धा कर सकते हैं। नवाचार एवं रचनात्मकता के क्षेत्र में भी डिजिटल नैगम संचार कई अवसर प्रस्तुत करता है। नए और अनूठे विपणन अभियानों को विकसित करने की संभावना होती है।[4].

डिजिटल नैगम संचार के इन पहलुओं को समझकर कंपनियाँ उन्हें अपनाकर; अपने उपभोक्ताओं के साथ मजबूत एंव सार्थक संबंध स्थापित कर सकती हैं। गोपनीयता, डेटा सुरक्षा, त्वरित प्रतिक्रिया व तकनीकी जटिलताएं जैसी चुनौतियों को समझते हुए; वैश्विक पहुंच, प्रभावी लागत विपणन व नवाचार जैसे अवसरों का लाभ उठाना

आवश्यक है। इस प्रकार, डिजिटल युग में नैगम संचार को प्रभावी ढंग से अपनाना किसी भी संगठन की दीर्घकालिक सफलता के लिए महत्वपूर्ण है।[5]

नैगम संचार की अवधारणा

'नैगम संचार' एक संगठन; उसके हितधारकों के बीच सूचना के आदान-प्रदान की प्रक्रिया है। इसका उद्देश्य संगठन के लक्ष्यों, नीतियों, उपलब्धियों को स्पष्ट, संक्षिप्त व सकारात्मक तरीके से प्रस्तुत करना है ताकि संगठन की छवि को सुदृढ़ करके उसके लक्ष्यों की पूर्ति में सहायता मिल सके।

नैगम संचार में; आंतरिक और बाह्य दोनों तरह के संचार आते हैं। आंतरिक संचार में संगठन के भीतर कर्मचारियों के साथ बातचीत, सूचना का प्रवाह और कर्मचारियों प्रेरित करने के लिए इस्तेमाल की जाने वाली रणनीतियाँ शामिल हैं। इसमें ईमेल, इंट्रानेट, समाचार पत्र व संगोष्ठियाँ जैसी विधियाँ आती हैं। बाह्य संचार में संगठन का ब्रांड निर्माण, समाज में उसकी छवि, ग्राहकों, निवेशकों, मीडिया व सरकारी संस्थाओं के साथ संवाद स्थापित करना शामिल है। इसके लिए प्रेस विज्ञप्तियाँ, वेबसाइट, सोशल मीडिया, विज्ञापन और जनसंपर्क अभियानों का उपयोग किया जाता है।

डिजिटल युग में नैगम संचार की पृष्ठभूमि

नैगम संचार का उद्देश्य किसी संगठन की छवि और ब्रांड को मजबूत करना, हितधारकों के साथ जुड़ाव बढ़ाना, आंतरिक तथा बाहरी सूचनाओं का प्रभावी आदान-प्रदान सुनिश्चित करना है। डिजिटल युग में, इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए संगठन अनेक माध्यमों का उपयोग करते हैं, जैसे कि वेबसाइट, ब्लॉग, सोशल मीडिया और अन्य डिजिटल टूल।

डिजिटल युग में नैगम संचार के प्रमुख घटक

I. **सोशल मीडिया**: फेसबुक, लिंक्डइन, ट्विटर और इंस्टाग्राम जैसे प्लैटफॉर्म ने संगठनों को ग्राहकों और अन्य हितधारकों तक सीधे पहुंचने का साधन दिया है। इससे न केवल संवाद की गति बढ़ी है बल्कि पारदर्शिता और ब्रांड की प्रामाणिकता को भी बढ़ावा मिला है।

II. **क्लाउड-आधारित संचार**: क्लाउड पर आधारित संचार उपकरणों का उपयोग करके संगठन अब वैश्विक स्तर पर काम करने वाले कर्मचारियों को जोड़ सकते हैं। ये उपकरण डेटा को सुरक्षित रखने के साथ-साथ त्वरित और कुशल जानकारी के आदान-प्रदान को सक्षम बनाते हैं।

III. **डिजिटल मार्केटिंग और ईमेल संचार**: डिजिटल मार्केटिंग तकनीकों और ईमेल अभियानों ने संगठनों को बड़े पैमाने पर प्रभावी संचार रणनीतियों को लागू करने में मदद की है।

डिजिटल युग में नैगम संचार केवल जानकारी का प्रसार करने का माध्यम नहीं है, बल्कि यह संगठनों को हितधारकों के साथ गहरे और सार्थक संबंध बनाने में भी मदद करता है। प्रौद्योगिकी, पारदर्शिता और नवाचार का कुशल उपयोग इस युग में नैगम संचार को और अधिक प्रभावी बनाता है। डिजिटल उपकरण और रणनीतियों को अपनाकर, संगठन न केवल प्रतिस्पर्धी बने रह सकते हैं, अपितु एक प्रभावशाली और सकारात्मक ब्रांड छवि भी बना सकते हैं।

नैगम संचार का महत्व

नैगम संचार किसी भी संगठन की नींव होती है। संचार न केवल आंतरिक संचालन को सुव्यवस्थित करता है अपितु बाहरी संबंधों को भी मजबूत करता है। एक प्रभावी संचार रणनीति न केवल कर्मचारियों के बीच समन्वय व सहयोग को बढ़ावा देती है बल्कि ग्राहकों, भागीदारों और अन्य हितधारकों के साथ भी मजबूत संबंध स्थापित करने में मदद करती है। डिजिटल युग में यह संचार और भी महत्वपूर्ण हो गया है क्योंकि संगठन अब वैश्विक स्तर पर काम करते हैं और उन्हें विभिन्न समय क्षेत्रों और संस्कृतियों में संचार बनाए रखना होता है।[4]

आंतरिक संचार का महत्व : आंतरिक संचार का महत्व विशेष रूप से तब बढ़ जाता है जब संगठन बड़े होते हैं और उनके विभिन्न विभागों और टीमों के बीच समन्वच रखना आवश्यक होता है। जाहिर है, प्रभावी आंतरिक संचार कर्मचारियों को कंपनी के लक्ष्यों और उद्देश्यों से अवगत कराता है। इससे न केवल उत्पादकता बढ़ती है बल्कि कर्मचारी संतुष्टि और प्रेरणा भी बढ़ती है। आंतरिक संचार ईमेल, इंट्रानेट और वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग जैसे विभिन्न उपकरणों का उपयोग करता है, जो कर्मचारियों के बीच तात्कालिक और प्रभावी संचार को संभव बनाते हैं।

बाहरी संचार का महत्व : जब बाहरी संचार की बात आती है तो नैगम संचार का महत्व और भी बढ़ जाता है। संगठन की छवि और प्रतिष्ठा को बनाए रखने के लिए ग्राहकों, निवेशकों और भागीदारों जैसी बाहरी संस्थाओं के साथ संवाद करना आवश्यक है। एक मजबूत संचार रणनीति के माध्यम से, संगठन अपनी ब्रांड पहचान को मजबूत कर सकते हैं, विश्वास बना सकते हैं व बाजार में अपनी स्थिति को मजबूत कर सकते हैं।[5]

वैश्विक संचालन और संचार : डिजिटल युग में नैगम संचार और भी महत्वपूर्ण हो गया है क्योंकि संगठन अब वैश्विक स्तर पर संचालित होते हैं और उन्हें विभिन्न समय क्षेत्रों और संस्कृतियों में संचार बनाए रखना होता है। वैश्विक संचालन के कारण, संगठनों को विभिन्न भाषाओं और सांस्कृतिक बारीकियों को समझना और उनका सम्मान करना आवश्यक होता है। इसके साथ ही, डिजिटल उपकरण और प्लेटफार्म, जैसे ईमेल, सोशल मीडिया और वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग, ने संचार को और भी सुलभ और तेज बना दिया है।

संचार का प्रभाव: कुल मिलाकर, नैगम संचार का महत्व केवल आंतरिक और बाहरी संबंधों को मजबूत करने तक ही सीमित नहीं है, अपितु यह संगठन की समग्र सफलता व विकास के लिए भी महत्वपूर्ण है। एक प्रभावी नैगम संचार रणनीति संगठन को न केवल वर्तमान प्रतिस्पर्धी बाजार में सफल बनाती है, बल्कि भविष्य के लिए भी तैयार करती है। जिससे संगठनों को अपनी संचार रणनीतियों को निरंतर अद्यतन और अनुकूलित करने की आवश्यकता है।[6]

इंटरनेट का नैगम संचार पर प्रभाव

इंटरनेट ने नैगम संचार में क्रांति ला दी है। ईमेल, इंस्टेंट मैसेजिंग व वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग जैसे उपकरणों ने संचार को तेज, सस्ता तथा अधिक प्रभावी बनाया है और क्लाउड आधारित संचार प्लेटफार्म ने सहयोग को आसान द अधिक पारदर्शी बना दिया। इन तकनीकों ने न केवल संचार की गति को बढ़ाया है अपितु कर्मचारियों को दूरस्थ से काम करने की अनुमति देकर कार्य संस्कृति में भी बदलाव लाया है। इसके माध्यम से कर्मचारी और प्रबंधक वास्तविक समय में बैठकें कर सकते हैं, जिससे यात्रा की आवश्यकता कम और समय की बचत होती है। यह तकनीक न केवल लागत को कम करती है अपितु कर्मचारियों के बीच सहयोग को भी बढ़ावा देती है।[7]

ईमेल ने संचार को तात्कालिक एवं किफायती बना दिया है। अब कर्मचारी व प्रबंधक समय और स्थान की सीमाओं के बावजूद एक-दूसरे से संपर्क कर सकते हैं। यह सुविधा निर्णय लेने की प्रक्रिया को तेज करती है व संगठन की समग्र दक्षता को बढ़ाती है। इंस्टेंट मैसेजिंग ने टीम के सदस्यों के बीच तात्कालिक संचार को संभव बनाया है, जिससे छोटे प्रश्नों व त्वरित चर्चाओं के लिए ईमेल की तुलना में अधिक सुविधाजनक विकल्प प्रदान किया है।

इंटरनेट आधारित संचार ने कर्मचारियों को दूरस्थ रूप से काम करने की स्वतंत्रता दी है। दूरस्थ कार्य ने न केवल कर्मचारियों की संतुष्टि और उत्पादकता को बढ़ाया है, बल्कि संगठनों को विश्वभर से प्रतिभाओं को आकर्षित करने का अवसर भी दिया है। इसने संचार को तेज, सस्ता व प्रभावी बनाने साथ ही कर्मचारियों के बीच सहयोग एवं पारदर्शिता को भी बढ़ावा दिया है। इंटरनेट आधारित संचार की सुविधऔ ने संगठन की दक्षता व उत्पादकता को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इससे संगठनों को विभिन्न समय क्षेत्रों में संचालित करने में सुविधा हुई है और वे विभिन्न बाजारों व ग्राहकों के साथ बेहतर तालमेल बना सके हैं।[8]

सोशल मीडिया का उदय: सोशल मीडिया नैगम संचार में महत्वपूर्ण उपकरण बन गया है। फेसबुक, ट्विटर, लिंक्डइन व इंस्टाग्राम जैसे प्लेटफार्म ने कंपनियों को अपने ग्राहकों के साथ सीधे जुड़ने के अवसर दिए हैं। इन प्लेटफार्मों से, कंपनियाँ न केवल अपने उत्पादों व सेवाओं का प्रचार करती हैं, बल्कि ग्राहकों की प्रतिक्रियाओं को भी तुरंत प्राप्त करती हैं। यह तात्कालिक प्रतिक्रिया न केवल ग्राहकों की संतुष्ट करती बल्कि उत्पाद सेवा में सुधार की महत्वपूर्ण जानकारी भी प्रदान करती है।

मोबाइल प्रौद्योगिकी का प्रभाव : मोबाइल प्रौद्योगिकी ने नैगम संचार को अधिक गतिशील व सुलभ बना दिया है। स्मार्टफोन और टैबलेट्स के उदय ने कर्मचारियों को कहीं भी व कभी भी काम करने की स्वतंत्रता दी है। मोबाइल एप्लिकेशंस ने संचार को और भी आसान बनाया है, जिससे कर्मचारी तुरंत अपडेट प्राप्त करके तुरंत प्रतिक्रिया दे सकते हैं। इसके अलावा, मोबाइल प्रौद्योगिकी ने फील्ड वर्कर्स व दूरस्थ स्थानों पर काम करने वाले कर्मचारियों के लिए भी संचार को सुलभ बनाया है।

डिजिटल युग में नैगम संचार की मुख्य प्रवृत्तियाँ

डिजिटल युग ने नैगम संचार के तरीकों में महत्वपूर्ण बदलाव लाए हैं, जिससे कंपनियों को अपनी संचार रणनीतियों को पुनर्परिभाषित करने की आवश्यकता पड़ी है। इस लेख में, हम डिजिटल नैगम संचार की मुख्य प्रवृत्तियों पर चर्चा करेंगे, जिसमें सोशल मीडिया का प्रभुत्व, कंटेंट मार्केटिंग का उदय और वीडियो संचार का महत्व शामिल हैं।

सोशल मीडिया का प्रभुत्व : सोशल मीडिया प्लेटफार्म जैसे फेसबुक, ट्विटर, लिंक्डइन और इंस्टाग्राम ने नैगम संचार के तरीकों में क्रांति ला दी है। इन प्लेटफार्मों के माध्यम से कंपनियाँ सीधे अपने उपभोक्ताओं से जुड़ सकती हैं, उनकी प्रतिक्रियाओं को त्वरित रूप से जान सकती हैं और विपणन अभियानों को अधिक प्रभावी बना सकती हैं। सोशल मीडिया के माध्यम से कंपनियाँ ब्रांड जागरूकता बढ़ा सकती हैं, ग्राहक सेवा सुधार सकती हैं और तात्कालिक समस्याओं का समाधान कर सकती हैं, जिससे ग्राहकों की संतुष्टि और निष्ठा में वृद्धि होती है।

कंटेंट मार्केटिंग का उदय : कंटेंट मार्केटिंग डिजिटल नैगम संचार का एक महत्वपूर्ण हिस्सा बन गया है। कंपनियाँ ब्लॉग पोस्ट, वीडियो, इन्फोग्राफिक्स व ब्राडकास्ट के माध्यम से उपयोगकर्ताओं को मूल्यवान सूचनात्मक सामग्री

प्रदान करती हैं। इसका उद्देश्य उपभोक्ताओं को शिक्षित करना, उनकी समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करना तथा उन्हें उत्पादों या सेवाओं के प्रति आकर्षित करना है।[11]

उच्च गुणवत्ता वाली सामग्री के माध्यम से कंपनियाँ अपने उद्योग में विशेषज्ञता व नेतृत्व को स्थापित कर सकती हैं। उदाहरण के लिए, कंपनी अपने ब्लॉग पर तकनीकी विषयों पर गहन लेख प्रकाशित कर सकती है, जिससे पाठकों को तकनीकी ज्ञान होता है और कंपनी की विशेषज्ञता का प्रदर्शन होता है। इसके अलावा, कंटेंट मार्केटिंग के माध्यम से कंपनियाँ अपने ब्रांड की सकारात्मक छवि बना सकती हैं तथा अपने दर्शकों के साथ गहरा संबंध स्थापित कर सकती हैं।

वीडियो संचार का महत्व : वीडियो प्लेटफार्म जैसे यूट्यूब और वाइन के उदय के साथ, वीडियो संचार कंपनियों के लिए एक महत्वपूर्ण माध्यम बन गया है। वीडियो कंटेंट उपभोक्ताओं के लिए अधिक आकर्षक होता है, उन्हें अधिक समय तक संलग्न रखता है। उत्पाद डेमो, ट्यूटोरियल तथा लाइव स्ट्रीमिंग के माध्यम से कंपनियाँ उपभोक्ताओं के साथ एक मजबूत संबंध स्थापित कर सकती हैं एवं अपने ब्रांड पहचान को बढ़ावा दे सकती हैं।

उदाहरण के लिए, कोई कंपनी अपने नए उत्पाद की विशेषताओं को प्रदर्शित के लिए वीडियो डेमो का उपयोग कर सकती है। इससे उपभोक्ताओं को उत्पाद के बारे में विस्तृत जानकारी मिलती है तथा वे उसे खरीदने के लिए प्रेरित होते हैं। इसके अतिरिक्त, लाइव स्ट्रीमिंग के माध्यम से कंपनियाँ अपने दर्शकों के साथ वास्तविक समय में संवाद कर सकती हैं, उन्हें सवालों के तुरंत जवाब और समस्याओं का समाधान दे सकती हैं। इससे ग्राहकों के साथ विश्वास और वफादारी बढ़ाने में मदद मिलती है।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि डिजिटल युग ने नैगम संचार के तरीकों को पूरी तरह से बदल दिया है। सोशल मीडिया का प्रभुत्व, कंटेंट मार्केटिंग का उदय तथा वीडियो संचार का महत्व इन परिवर्तनों के प्रमुख उदाहरण हैं। सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म के माध्यम से, कंपनियां अपने उपभोक्ताओं से सीधे जुड़ सकती हैं, त्वरित प्रतिक्रिया प्राप्त करके मार्केटिंग अभियानों को अधिक प्रभावी बना सकती हैं, मार्केटिंग अभियानों को अधिक प्रभावी बना सकती हैं। जिससे उनके उद्योग में विशेषज्ञता व नेतृत्व स्थापित हो सकता है। वीडियो संचार के माध्यम से, कंपनियां अपने उत्पादों व सेवाओं को प्रभावी ढंग से प्रस्तुत करके उपभोक्ताओं के साथ मजबूत संबंध स्थापित कर सकती हैं।

डिजिटल युग में नैगम संचार की चुनौतियाँ और अवसर

डिजिटल युग में कॉर्पोरेट संचार ने नई चुनौतियों और अवसरों को जन्म दिया है। वैश्विक संचालन के कारण, संगठनों को विभिन्न क्षेत्रों और संस्कृतियों में प्रभावी संचार बनाए रखना पड़ता है। इसके लिए संगठनों को विभिन्न भाषाओं तथा सांस्कृतिक अंतर्संबंध को समझना व उनका सम्मान करना आवश्यक है। वैश्विक संचार के कारण संगठनों के लिए अपनी सामग्री को विभिन्न भाषाओं में अनुवाद करना व स्थानीय सांस्कृतिक संवेद नशीलताओं को ध्यान में रखना महत्वपूर्ण हो जाता है।

डिजिटल उपकरण और प्लेटफार्म, जैसे ईमेल, सोशल मीडिया तथा वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग ने संचार को अधिक सुलभ तथा तेज बनाया है।

ईमेल व इंस्टेंट मैसेजिंग के परस्पर जुड़ाव ने संचार को तात्कालिक एवं लागत प्रभावी बना दिया है, जबकि वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग ने भौगोलिक बाधाओं को दूर किया है। ये प्लेटफार्म संगठन के विभिन्न हिस्सों में बेहतर समन्वय व सहयोग को बढ़ावा देते हैं, जिससे संचार और निर्णय लेने की प्रक्रिया में तेज आती है।

इससे ग्राहकों की समस्याओं का तुरंत समाधान व उनके साथ मज़बूत रिश्ते बनाए रखना संभव हो गया है। इसके अलावा, डिजिटल प्लेटफॉर्म के ज़रिए मिलने वाले फ़ीडबैक का इस्तेमाल उत्पादों व सेवाओं को बेहतर बनाने में भी किया जा सकता है। यह फ़ीडबैक संगठन को अपने उत्पाद सेवाओं को बेहतर बनाने में मदद करता है, जिससे ग्राहक संतुष्टि और वफादारी बढ़ती है।[10]

इस प्रकार, नैगम संचार का महत्व केवल आंतरिक व बाहरी संबंधों को मजबूत करने तक ही सीमित नहीं है, अपितु संगठन की समग्र सफलता व विकास के लिए भी महत्वपूर्ण है। एक प्रभावी नैगम संचार नीति संगठन को न केवल वर्तमान प्रतिस्पर्धी बाजार में सफल बनाती है अपितु भविष्य के लिए भी तैयार करती है। जिसके लिए संगठनों को अपनी संचार रणनीतियों को लगातार अपडेट और अनुकूलित करने की आवश्यकता होती है। डिजिटल नैगम संचार की इन उभरती प्रवृत्तियों के कारण, संगठन को नवीनतम तकनीकों और उपकरणों को अपनाने की आवश्यकता है। यह न केवल संचार की गुणवत्ता को बढ़ाता है, बल्कि संगठन की समग्र उत्पादकता और दक्षता भी बढ़ती है, साथ ही, संगठनों को अपने कर्मचारियों को इन नई तकनीकों के उपयोग के लिए प्रशिक्षित करना चाहिए, जिससे वे अधिक प्रभावी ढंग से काम कर सकें और संगठन के लक्ष्यों को प्राप्त कर सकें।[11]

अंततः, डिजिटल युग में कॉर्पोरेट संचार की चुनौतियाँ और अवसर किसी संगठन की दीर्घकालिक सफलता के लिए महत्वपूर्ण हैं। गोपनीयता और डेटा सुरक्षा, त्वरित प्रतिक्रिया की अपेक्षाओं व तकनीकी जटिलताओं जैसी चुनौतियों का सामना करते हुए, वैश्विक पहुँच, लागत-प्रभावी विपणन तथा नवाचार जैसे अवसरों का लाभ उठाना आवश्यक है। इस प्रकार, डिजिटल युग में कॉर्पोरेट संचार को प्रभावी ढंग से अपनाना किसी भी संगठन की दीर्घकालिक सफलता के लिए महत्वपूर्ण है।

डिजिटल नैगम संचार की चुनौतियाँ

डिजिटल युग में नैगम संचार ने कंपनियों को नए अवसरों के साथ-साथ कई चुनौतियाँ भी प्रस्तुत की हैं। इन चुनौतियों की गोपनीयता व डेटा सुरक्षा, त्वरित प्रतिक्रिया की अपेक्षाएँ तथा तकनीकी जटिलताएँ प्रमुख हैं। इन समस्याओं का समाधान करना कंपनियों के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है, ताकि वे अपनी संचार रणनीतियों को प्रभावी ढंग से लागू कर उपभोक्ताओं के विश्वास को बनाए रख सकें।

गोपनीयता तथा डेटा सुरक्षा : डिजिटल संचार के बढ़ते उपयोग से डेटा सुरक्षा और गोपनीयता की चिंता भी बढी है। कंपनियों को डेटा उल्लंघनों व साइबर हमलों से सुरक्षित रहना चाहिए, जो उपभोक्ताओं के विश्वास को कमजोर कर सकते हैं। उपभोक्ता डेटा के उपयोग तथा संग्रहण के लिए स्पष्ट गोपनीय नीतियाँ बनानी आवश्यक हैं। उदाहरण के लिए, यूरोपीय संघ का सामान्य डेटा संरक्षण विनियमन (GDPR) कंपनियों को उपभोक्ताओं के व्यक्तिगत डेटा की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए कठोर नियमों का पालन करने के लिए बाध्य करता है। इसके अलावा, कंपनियों को अपने डेटा सुरक्षा उपायों को निरंतर अपडेट करना चाहिए व साइबर हमलों से बचाव के लिए नवीन तकनीकों का उपयोग करना चाहिए।[12]

कंपनियों को डेटा उल्लंघनों और साइबर हमलों से सुरक्षित रहना चाहिए, जो उपभोक्ता के भरोसे को कमज़ोर कर सकते हैं। उपभोक्ता डेटा के उपयोग और भंडारण के लिए स्पष्ट गोपनीयता नीतियाँ आवश्यक हैं। उदाहरण के लिए, यूरोपीय संघ का सामान्य डेटा सुरक्षा विनियमन (GDPR) कंपनियों को उपभोक्ताओं के व्यक्तिगत डेटा की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए सख्त नियमों का पालन करने के लिए बाध्य करता है। इसके अलावा, कंपनियों को अपने डेटा सुरक्षा उपायों को लगातार अपडेट करना चाहिए और साइबर हमलों से बचाव के लिए नई तकनीकों का उपयोग करना चाहिए[14]। **त्वरित प्रतिक्रिया की अपेक्षाएँ :** डिजिटल युग में उपभोक्ता त्वरित प्रतिक्रिया की अपेक्षा करते हैं। सोशल मीडिया और अन्य डिजिटल प्लेटफार्मों पर उपभोक्ताओं की प्रतिक्रियाओं और प्रश्नों का त्वरित उत्तर देना आवश्यक होता है। उपभोक्ता अब चौबीसों घंटे सेवा की उम्मीद करते हैं, जिससे कंपनियों को निरंतर सक्रिय रहना पड़ता है। यह चुनौती विशेष रूप से तब बढ़ जाती है जब कंपनियों को विभिन्न समय क्षेत्रों में अपने ग्राहकों के साथ संचार बनाए रखना पड़ता है। इसके लिए कंपनियों को अपनी ग्राहक सेवा टीमों को प्रशिक्षित करना और उन्हें आवश्यक उपकरण तथा तकनीकें प्रदान करना आवश्यक होता है। इसके अलावा, कंपनियों को त्वरित और प्रभावी संचार रणनीतियों को अपनाना पड़ता है, जिससे उपभोक्ताओं की अपेक्षाओं को पूरा किया जा सके।[13]

तकनीकी जटिलताएँ : डिजिटल नैगम संचार में तकनीकी जटिलताएँ भी हैं, जिनसे निपटना आवश्यक है। विभिन्न डिजिटल प्लेटफार्म का उपयोग और प्रबंधन एक जटिल कार्य हो सकता है। सर्वर डाउनटाइम, हैकिंग और अन्य तकनीकी समस्याओं का समाधान करने के लिए प्रभावी रणनीतियों की आवश्यकता होती है। इसके अलावा, नवीनतम तकनीकी उपकरणों और सॉफ्टवेयर का अद्यतन और उपयोग भी एक चुनौती हो सकता है, जिससे कंपनियों को अपने तकनीकी बुनियादी ढाँचे को मजबूत और सुरक्षित रखना आवश्यक होता है। कंपनियों को सुनिश्चित करना होता है कि उनके संचार सिस्टम नवीनतम साइबर सुरक्षा मानकों का पालन कर रहे हैं और किसी भी संभावित खतरे से सुरक्षित हैं।[14]

तकनीकी जटिलताओं को दूर करने के लिए, कंपनियों को अपने आईटी स्टाफ को निरंतर प्रशिक्षण देना चाहिए तथा उन्हें नवीन तकनीकों व उपकरणों से परिचित कराना चाहिए। इसके अलावा, कंपनियों को तकनीकी समस्याओं के त्वरित समाधान के लिए एक प्रभावी आपातकालीन योजना तैयार करनी चाहिए।[15] यह भी महत्वपूर्ण है कि कंपनियाँ विभिन्न डिजिटल प्लेटफार्मों के एकीकृत प्रबंधन के लिए एक केंद्रीकृत प्रणाली का उपयोग करें, जिससे संचार को अधिक प्रभावी और समन्वित बनाया जा सके।[16]

निष्कर्ष

डिजिटल युग में नैगम संचार ने कंपनियों के लिए नई संभावनाएँ व चुनौतियाँ प्रस्तुत की हैं। इंटरनेट, सोशल मीडिया तथा मोबाइल प्रौद्योगिकी के प्रसार ने संचार के तरीकों को पूरी तरह से बदल दिया है, जिससे कंपनियों को अपनी रणनीतियों को नए सिरे से परिभाषित करने की आवश्यकता है। इन प्रवृत्तियों के साथ तालमेल बनाए रखना और संचार की प्रभावशीलता को बढ़ाना किसी भी संगठन की सफलता के लिए अनिवार्य हो गया है।

नैगम संचार की सबसे महत्वपूर्ण प्रवृत्तियों में गोपनीयता तथा डेटा सुरक्षा की है। साइबर हमलों व डेटा उल्लंघनों की बढ़ती घटनाओं से कंपनियों को अपने डेटा की सुरक्षा के लिए कठोर कदम उठाने की आवश्यकता है। उपभोक्ताओं का डेटा सुरक्षित रखना और उनकी गोपनीयता का सम्मान करना अब किसी भी संगठन के लिए प्राथमिकता बन गई है।

एक और महत्वपूर्ण चुनौती त्वरित प्रतिक्रिया की अपेक्षा है। सोशल मीडिया और अन्य डिजिटल प्लेटफार्म पर उपभोक्ता तात्कालिक उत्तर की अपेक्षा करते हैं। इस तात्कालिकता की अपेक्षा ने कंपनियों को चौबीसों घंटे सक्रिय रहने और उपभोक्ताओं की समस्याओं का त्वरित समाधान करने के लिए मजबूर किया है।

तकनीकी जटिलताएँ भी एक बड़ी चुनौती हैं। विभिन्न डिजिटल प्लेटफार्म का उपयोग और प्रबंधन जटिल हो सकता है। सर्वर डाउनटाइम, हैकिंग और अन्य तकनीकी समस्याओं का समाधान करने के लिए प्रभावी रणनीतियों की आवश्यकता होती है।

हालांकि चुनौतियाँ हैं तो साथ ही डिजिटल युग में नैगम संचार के लिए कई अवसर भी उपलब्ध हैं। सबसे महत्वपूर्ण अवसरों में से एक वैश्विक पहुंच है। डिजिटल संचार के माध्यम से कंपनियाँ वैश्विक बाजारों तक पहुंच सकती हैं, जिससे उन्हें नए उपभोक्ताओं और व्यापारिक अवसरों का लाभ उठाने का अवसर मिलता है। यह वैश्विक पहुंच न केवल व्यापार के विस्तार में मदद करती है, बल्कि प्रतिस्पर्धा में भी बढ़त दिलाती है। इस प्रकार डिजिटल युग में नैगम संचार को प्रभावी ढंग से अपनाना किसी भी संगठन की दीर्घकालिक सफलता के लिए महत्वपूर्ण है।

संदर्भ सूची

1. Bell, P., & Zaric, G. (2012). Analytics for managers: With excel. London/New York: Routledge.
2. USC Online (2023). How the digital age has shaped communication management. Retrieved from communicationmgmt.usc.edu.
3. JGU (2021). Importance of corporate communication in today's digital age. Retrieved from jgu.edu.in.
4. Cornelissen, J. (2014). Corporate communication: A guide to theory and practice. SAGE Publications.
5. Kaplan, A. M., & Haenlein, M. (2010). Users of the world, unite! The challenges and opportunities of Social Media. Business Horizons, 53(1), 59-68.
6. Men, L. R., & Bowen, S. A. (2017). Excellence in internal communication management. Business Expert Press
7. Murtarelli, G. (2017). The role of corporate communication in the digital age: An era of change for the communication profession. In J. Klewes, D. Popp, & M. Rost-Hein (Eds.), Out-thinking organizational communications. Springer, Cham. https://doi.org/10.1007/978-3-319-41845-2_6
8. Invernizzi, E., & Romenti, S. (2013). Adopting an entrepreneurial perspective to the study of strategic communication. In D. Holtzhausen & A. Zerfass (Eds.), Handbook of strategic communication. London/New York: Routledge.

9. Pulizzi, J. (2012). The rise of storytelling as the new marketing. Publishing Research Quarterly, 28(2), 116-123

10. Men, L. R., & Bowen, S. A. (2017). Excellence in internal communication management. Business Expert Press

11. Clampitt, P. G. (2016). Communicating for managerial effectiveness. SAGE Publications.

12. Berezina, K., Cobanoglu, C., Miller, B. L., & Kwansa, F. A. (2012). The impact of information security breach on hotel guest perception of service quality, satisfaction, revisit intentions and word-of-mouth. International Journal of Contemporary Hospitality Management, 24(7), 991-1010.

13. Kotler, P., Keller, K. L., Brady, M., Goodman, M., & Hansen, T. (2017). Marketing management. Pearson UK.

14. Laudon, K. C., & Traver, C. G. (2016). E-commerce: Business, technology, society. Pearson.

15. Schwalbe, K. (2015). Information technology project management. Cengage Learning.

16. Turban, E., Volonino, L., Wood, G. R., & Sipior, J. C. (2018). Information technology for management: On-demand strategies for performance, growth, and sustainability. Wiley.

डॉ. शैलेश शुक्ला

राजभाषा अधिकारी, एनएमडीसी लिमिटेड [भारत सरकार का उद्यम]

हीरा खनन परियोजना, मझगवाँ, पन्ना – 488001 (मध्य प्रदेश)

सिनेमा की भाषा के रूप में दक्खिनी हिन्दी

प्रोमिला

शोध-सार

विश्व की सभी भाषाएँ स्वीकृत परिपाटी की वे श्रेणियां हैं जिन्हें प्रत्येक समाज समान अर्थों वाले प्रतीकों का अर्थवान करके अपने समूह से संबंधित लोगों को सिखाता है। कहानीकारों, यहां तक कि विवेकवान व्यक्तियों को भी, सर्वप्रथम प्रतीकों और संयोजन के नियमों को समझना पड़ता है, लेकिन ये प्रतीक शदैव अपरिवर्तित अवस्था में नहीं रहते। अतः कलाकार या दार्शनिक नवीन प्रतीकों या नियमों को प्रस्तुत कर और प्राचीन को त्यागकर समूह को प्रभावित करते हैं। सिनेमा भी इस उपक्रम में निश्चित स्थान पाता है। सिनेमाई भाषा का जन्म विभिन्न गति की अवस्थाओं में छोटी छवियों के शिथिल जुड़ाव की परख इस विचार से होती है कि छवियों श्रृंखला एक दूसरे से संबंधित हो सकती है और इस तरह, सिनेमा और भाषा के बीच दो स्तरों पर संपर्क योजित होता है।

मुख्य-शब्द- दक्खिनी हिन्दी, हिन्दी सिनेमा, सिनेमायी भाषा, हिन्दीतर भाषा-भाषी, डॉलीवुड हैदराबादी संस्कृति,

शोध आलेख

भाषा शब्दों, प्रतीकों, वाक्यविन्यास की विशिष्ट प्रविधि है जिसका विनियोग अर्थ उत्पन्न करने तथा सम्प्रेषण के लिए किया जाता है। जबकि सिनेमा की भाषा में तकनीक और परंपराओं के संयोजन के साथ शब्दग भाषा भी संवादों और उनसे रचे दृश् में अंतर्भूत होती है। 'जब कोई फिल्म बनायी जाती है तो वह ऐसी भाषा में बनती है जो सिर्फ शब्दों के बारे में नहीं होती अपितु वह भाषा दुनिया के बारे में हमारी धारणा, हमारी समझ को भी कूटबद्ध करती है'[1] पोलिश फिल्म एवं थिएटर निर्देशक आंद्रेज विटोल्ड वाजदा का उपरोक्त कथन सिनेमा के साथ भाषा के उस विशेष जुड़ाव का अर्थ बुनता है जो दृश्य-भाषा और मौखिक-भाषा के मेल का परिणाम है और सांस्कृतिक लोकतंत्र के अन्य गवाक्षों से चिन्हित है। दृश्य भाषा की अभिव्यक्ति के लिए संवादों की आवश्यकता होती है। किसी व्यक्ति विशेष के अनुभव जगत से संबंधित कोड (दृश्य कोड, भाषाई कोड) संवादों के संप्रेषण ग्रहण में भूमिका निभाते हैं। क्षेत्र विशेष के ये कोड एक प्रकार की विषय-वस्तु (विषय) को व्यक्त करते हैं, जिसे विषय-वस्तु के क्षेत्र और अभिव्यक्ति के तरीके को लेकर समझा और परिभाषित किया जा सकता है जैसे कि 'बिमल राय हिन्दी में फिल्में बनाते हैं लेकिन बार-बार वे हिन्दी में बंगला समाज को प्रस्तुत करते हैं, चाहे वह 'देवदास' में हो या 'परिणीता' में..... अपनी महाकाव्यात्मक फिल्म 'मदर इण्डिया' में गुजरात के महबूब खान भी गुजराती पृष्ठभूमि में किसान समस्या को उठाते हैं। इसी सच्चाई को हम वी. शांताराम से श्याम बेनेगल तक लगातार देख सकते हैं। वे हिन्दी भाषा में तो सिनेमा बनाते हैं लेकिन उस यथार्थ को लेकर जिसका संबंध या तो उनकी मातृभाषा से है या फिर किसी एक भाषाई क्षेत्र से उसे संबंधित करना कठिन है।'[2] यानी हिन्दी की कई धाराओं, शैलियों और स्थानीय स्पर्शों के समाहार से हिन्दी-सिनेमा अपना मानक गढ़ता है।

इसमें बिगड़ी हुई हिन्दी, परिष्कृत हिन्दी जैसे सवालों के मध्य हिन्दी भाषा को कितना नफा या नुकसान रहा है, इस पर निश्चिततौर से मतभेद अवश्य हो सकते हैं, किंतु यहां उस मूल मंत्र को भारत की सांस्कृतिक, सामाजिक व भौगोलिक-अवस्थिति में रची-बसी बहुभाषी पृष्ठभूमि के निहितार्थों में प्रस्तुत किया गया है और कहा गया है कि 'भाषा बहता नीर' के निहितार्थ में यहां वह मूलमंत्र प्रस्तुत है जहां हिन्दी सिनेमा के स्वरूप से फिल्म-सेट तक विभिन्न क्षेत्रों, संप्रदायों जातियों की संरचना, उनके अंतर्संबंध की समझ पुष्ट की जा सकती है। स्टीफ़ेन ऑल्टर के कथन को ज्ञापित किया जा सकता है कि 'हालांकि फ़िल्म हिन्दी में बन रही है, लेकिन(ओमकारा के) सेट पर कम से कम पांच

भाषाएँ इस्तेमाल हो रही हैं। निर्देशन के लिए अंग्रेज़ी और हिन्दी चल रही है। संवाद सारे हिन्दी की एक बोली में हैं। पैसे लगाने वाले गुजराती में बातें करते हैं, सेट के कर्मचारी मराठी बोलते हैं, जबकि तमाम चुटकुले पंजाबी के हैं।’[3]

इसमें बिगड़ी हुई हिन्दी, परिष्कृत हिंदी जैसे सवालों के मध्य हिन्दी भाषा को कितना नफा या नुकसान रहा है, इस पर निश्चिततौर से मतभेद हो सकता है किंतु भारत की सांस्कृतिक-सामाजिक और भौगोलिक अवस्थिति से रची-बसी बहुभाषी पृष्ठभूमि और ‘भाषा बहता नीर’ के निहितार्थ में यहां वह मूलमंत्र प्रस्तुत है जहां हिन्दी सिनेमा के स्वरूप से फिल्म-सेट तक विभिन्न क्षेत्रों, संप्रदायों जातियों की संरचना, उनके अंतर्संबंध की समझ पुष्ट की जा सकती है। स्टीफ़ेन ऑल्टर के कथन को ज्ञापित किया जा सकता है कि ‘हालांकि फ़िल्म हिन्दी में बन रही है, लेकिन (ओमकारा के) सेट पर कम से कम पांच भाषाएँ इस्तेमाल हो रही हैं। निर्देशन के लिए अंग्रेज़ी और हिन्दी चल रही है। संवाद सारे हिन्दी की एक बोली में हैं। पैसे लगाने वाले गुजराती में बातें करते हैं, सेट के कर्मचारी मराठी बोलते हैं, जबकि तमाम चुटकुले पंजाबी के हैं।’[3]

फिल्म निर्माण और वितरण में भी हिंदी भाषा-भाषी लोगों के विशिष्ट योगदान ने वस्तुतः प्रारंभ से ही बॉलीवुड को क्षेत्रीय सीमाओं, भौगोलिक बाध्यताओं तथा भाषाई सीमाओं से मुक्त रखा है। देश की राष्ट्रीय संस्कृति, सामाजिक परिवर्तन, राजनीतिक घटनाक्रम का ‘बैरोमीटर’ बनकर इसने समानता से परे हिन्दुस्तान की चिंतनधारा की विचार प्रक्रिया को आंदोलित और उजागर किया है। यहां तक कि हिन्दी, उर्दू का पार्थक्य भी इसमें प्रस्फुटित नहीं हुआ है और सिनेमा सेंसर बोर्ड के प्रमाण-पत्र में ‘मुग़ल-ए-आज़म’ (1960) को हिंदी फिल्म माना है। परिदृश्य बदलाव के साथ साथ शनैः शनैः प्रादेशिक बोलियों के प्रभावस्वरूप क्रमशः कलकतिया हिन्दी, पूर्वोत्तरी हिन्दी, बम्बइया हिन्दी, मद्रासी हिन्दी और दक्खिनी हिन्दी जैसे भाषाई रूप भी फिल्म की विशेष विषयवस्तु और परिवेश के अनुसार उभरते दिखे हैं। हालांकि दक्खिनी और मद्रासी हिन्दी को हसोड़, मसखरे या फूहड़ पात्रों की भाषा के तौर पर ही प्रयोगात्मक प्रस्तुति अधिक मिली है और बम्बइया हिंदी का प्रयोग बदमाशों और गंवार वर्गों को दर्शाने के लिए प्रयुक्त हुई है। जिसके अनेकों उदाहरण हैं।

'गुमनाम' (1965) में महमूद ने एक हैदराबादी बावर्ची का चरित्र निभाते हुए अतिरंजित लहजे, चेक लुंगी और सांवली त्वचा के साथ अतिरिक्त गहरा मेकअप कर 'हम काले हैं तो क्या हुआ दिलवाले हैं' गाया है तथा फिल्म ' पड़ोसन' (1968) में दक्षिण भारतीय संगीत टीचर बनकर मद्रासी हिन्दी में 'एक चतुर नार करके श्रृंगार'। ‘अमर अकबर एंथनी’ (1977) में भी अमिताभ बच्चन ने, ‘अपुन पुलिस के पास नहीं जाएगा, थोबड़े से फंदेबाज लगता हूँ। अपुन के साथ... इसका भी कंप्लेंट करो, अपुन जो कमाता है, उसका फिफ्टी परसेंट उसकी पेटी में डालता है। उसको भी गरीबों की चिंता है, अपुन को भी गरीबों की चिंता है,’ कहते हुए चरित्र को जीवन्त किया है। हिन्दी के स्थानीय रूपों में दक्खिनी का आविर्भाव विशिष्ट रहा है। यूले और बर्नेल ने ‘हाब्सन जाब्सन’ (1866) कोश में 'दकनी' को हिन्द्स्तान की ऐसी विचित्र ज़बान (भाषा) बताया है, जिसे मुसलमानों ने अपनी बोलचाल के लिए अपनाया था। सन् 1516 में प्रयोग की गई इस भाषा को देश की स्वाभाविक स्वीकाराहै।[4] भाषाविद् डॉ. सुनीति कुमार चाटुर्ज्या का इस संबंध में मंतव्य रहा है कि ‘पश्चिमी हिन्दी की ओकारांत बोलियों से एक प्रचलित सार्वदेशिक भाषा का जन्म हुआ, जिस पर 13वीं शती एवं तत्पश्चात आद्य पंजाबी का भी थोड़ा-बहुत प्रभाव पड़ा। सोहलवीं शताब्दी में प्रथम बार दक्खन में इसके एक रूप का साहित्य के लिए उपयोग हुआ।’[5] फ़ौज, फ़कीरों और दरवेशों के साथ यह भाषा दक्षिण भारत पहुंची और वहां बीजापुर, गोलकुंडा, अहमदनगर, बरार, महाराष्ट्र आदि क्षेत्रों तक फैल गयी पर केंद्र बिन्दु हैदराबाद बना रहा। बहमनी, कुतुबशाही और आदिलशाही राजवंशों के समय गेसुदराज

बन्दानवाज, मुल्ला वजही, शाह मीराजी, मुहम्मद शरीफ, अब्दुल हमीद, शाह बुहरानुद्दीन आदि लेखकों ने इसकी साहित्यिक परंपरा को उन्नत किया। 'गुलबर्गी', 'बीदरी', 'बीजापुरी', 'हैदराबादी' आदि इसकी कई उपबोलियाँ भी उभरी और कालांतर में हिन्दी सिनेमा से भी दक्खिनी का मेल हुआ।

एक विचारगोष्ठी में श्याम बेनेगल ने स्पष्ट स्वीकारा है कि 'कहानी के लिहाज़ से अगर मैं 'अंकुर'(1973), 'निशांत'(1975), 'कंडूरा'(1977) और 'मंडी'(1983) में दक्खिनी को अभिव्यक्ति का माध्यम न बनाता तो यह निश्चित है कि ये फ़िल्में उतनी सार्थक न होती।'[6] दरअसल, बेनेगल ने वास्तविक घटना पर आधारित अपनी पहली फीचर फिल्म 'अंकुर' को निर्माताओं की सलाह से तेलुगु की बजाय दक्खिनी में बनाया था, जिससे न केवल क्षेत्रीय बोली के विनियोग से नये सिनेमा 'सांख्यिकीय यथार्थवाद' का एक नूतन सौंदर्यशास्त्र तैयार हुआ बल्कि हैदराबाद से पच्चीस किलोमीटर दूर येलारेड्डीगुडा में आंध्र प्रदेश के गाँव की वह कहानी जीवंत हुई जहां सामंती सत्ता की संरचनाओं और लैंगिक उत्पीड़न की व्यापक शक्तियां भूमिका निभाती रही हैं। उपदेशात्मकता से परे ब्रेख्तियन अर्थ में यह बताने की बजाय कि क्या करना है, उस पर प्रतिक्रिया करने के लिए कहा।

नमूना 1-

- अरे सूर्या मैं सुना तेरी मैरिज होने वाली है यार...
- अरे यार वो पुरानी बातां हो गईअगले महीने इने फांसी पर चढ़ने वाला हय। ,

नमूना 2-

- ✓ लक्ष्मीपहले ...वो बेचारा बेकार है सरकार..सरकार से काम मांगलियो बोलके..मैं लेको आई ...हो सरकार - कुम्हार को काम करता था। बौत अच्छे बर्तना बनाता था पन अब गांव में मट्टी के बर्तना कौन भी ना ले रे। युनियन की हुकूमता आई जब से सब लोगां एलुमिनियम के बर्तना ले रे। कुम्हारा सब भूक्के मररे हैं सरकार।
- ✓ सूर्याक्या काम कर सकता है -?
- ✓ लक्ष्मीपाप बेचारा। ...बोलने कू नइ आता। मूक्का है ,क्या बोलूं। उन्ने सुनने कू उन्ने सरकार। -

इसी प्रकार तवायफों की विवशता को दर्शाती सागर सरहदी की 'बाज़ार' फिल्म (1982) की कहानी का ताना-गिर्द बुना गया। यह फिल्म साधारणतया अमीर आदमी के -बाना भी हैदराबाद के पारंपरिक मुस्लिम परिवारों के इर्द चरित्र और दुल्हन खरीदने केकारोबार पर एक निबंधात्मक टिप्पणी बनी।

नमूना1-

- नजमा को मां की बातें याद आती हैंनौकरी करको अपनी इज्जत को बट्टा लगाएंगी -? लोगां क्या कहेंगे? कैसे-कैसे नामां देंगे? नहीं बेटी हमारे खानदान में तो नौकरां रखते हैंनौकरी नहीं करते। नौकरी तो छोटे लोगां करते , ..हैं मान जाओ बेटी। किसी को खबर इच नहीं होंगी।

नमूना2-

- अख्तरपूरी कोशिश करके अगर तुम चाती हो कि हमारी शादी हो तो तुम्हें ,नजमा एक बातां याद रखो - शाकिर अलीखान के लिए एक लड़की ढूंढनी ही होगी।

दोनों फिल्मों के नमूनों में 'बातां' ,'इने' ,'लेको' ,'बौत' ,'बर्तना' ,'लोगां' ,'उन्ने' ,'करको' ,'लगाएंगी' ,'नामां' , 'नौकरां' ,'इच' जैसे दक्खिनी पदबंध उभरे जिसमें संज्ञाओं में ,'आ' जोड़कर बहुवचन बनाने की युक्ति लक्षित है , नाम का नामां आदि। ,लोग का लोगां ,बात का बातां ,रात का रातां -जैसे

तदनंतर 'निशांत' (1975), 'निकाह' (1982), 'मंडी' (1983), 'मीनाक्षीए टेल ऑफ़ थ्री : सिटीज़'(2004) फिल्मों में भी यही भाषाई रूप सामने आया, किंतु उल्लेखनीय है कि दक्खिनी हिन्दी अति मोह , निरर्थक शब्दबनी रही। वह उतनी ही प्रयुक्त जाल के आग्रह और कला की घेराबंदी से यहां अधिकांशतः उन्मुक्त ही-हुई जितनी प्रदेश विशेष की पृष्ठभूमि रखने के कारणवश अपेक्षित यथार्थ की सृष्टि हेतु आवश्यक थी। यानी फिल्म की भाषा की सीमा कुछ शब्दों के चुनाव और लहज़े तक लक्षित रही। केतन मेहता की 'हीरो हीरालाल'(1988) में अनाथ ऑटोरिक्शा चालक हैदराबादी नायक हीरालाल की, 'रंगीला हफ्ता नक्को देना। पोस्टरां समझा है क्या? नुक्कड़ पे फिर हफ्ता मांगा तो खस्तां कर देंगाकदम जो बढ़ाया तो ,खबरदार नाखून जो उठाया तो खून कर देंगा ... ये देख महूरत।...ये लातां के भूत बातां के नई...तोड़ देंगा। दम' जैसे संवादों ने पात्र के सामाजिक परिपृष्ठ को और अधिक ग्रहणीय बना दिया। 2010 में मराठी फिल्म 'जौ तिथे खाउ' पर श्याम बेनेगल ने 'वेल डन अब्बा' बनाकर भारतीय राजनीति पर व्यंग्यात्मक प्रहार किया। सुखाग्रस्त चिक्कटपल्ली के अरमान अली के चरित्र को उभारते , 'अभी मैं क्या बोलूं ...इधर बोलते तेलुगु ...मुंबई में बोलते के मराठी में बोलो ...अभी कितना बोले जमाना हम... ...चेन्नई में बोलते तमिल। इसके वास्ते मैं अपनी पढ़ने की ऐनक बैग में इच रखता। मेरे अब्बा बोले थे कि मियां बोलो मोहब्बत की जुबान ...बेकार में नक्को सीना तान', जैसे दक्खिनी संवादों में एक आम आदमी की साधारण छवि में छिपी असाधारणता को सजीवता दी। हबीब फैसल की 'दावत-ए-इश्क' वर्ष (2014की कहानी हैदराबाद की रहनेवाली गुलरेज कादिर उर्फ गुल्लू के सपनों और उसके निकाह के आसपास से आरंभ होकर लखनऊ के तारिक उर्फ तारू तक फैली। दो राज्यों के बीच भाषाई अंतर को दर्शाते हुए गुल्लू और उसके अब्बा को दक्खिनी , के प्रयोग से सजीवता मिली जबकि तारिक उर्दू बोलते हुए नज़र आते हैं।

निर्देशक ने भाषा को केवल कहानी द्वारा निर्देशित बताते हुए कहा कि 'दावतइश्क में-ए- मैंने कहानी का एक हिस्सा हैदराबाद में सेट किया है, इसलिए जब फिल्म उस क्षेत्र में सेट की गई, तो मैं चाहता था कि किरदार हैदराबादी दिखें। भोजन और माहौल के अलावा, भाषा एक बहुत बड़ा हिस्सा थी हैदराबादी स्वाद लाने का,' [7]यही स्थिति वर्ष 2014 में आयी निर्देशक समर शेख की 'बॉबी जासूस' फिल्म में जासूस बनने की गहन अभिलाषा रखने वाली बिल्कीस 'बॉबी' अहमद की भी रही। निर्देशक समर शेख की वर्ष में 2014आई फिल्म 'बॉबी जासूस' में जासूस बनने की गहन अभिलाषा रखने वाली बिलकिस 'बॉबी' अहमद की भी रही। उसका चरित्र ,'मुन्ना को क्लाइंट बैठाने के पैसे होनासोहन को फोन होना ...डिग्री वाला आदमी होना .ए.सोढ़ी को एम ...'की भाषाई , शैली में अंकित किया गया। वस्तुतः बॉलीवुड में प्रयुक्त दक्खिनी हिन्दी चाहे वह कुछ संवादों के रूप में हो या कुछ शब्दों के , ,पात्रानुकूल तो रही हीवह बेहद स्वाभाविकजीवंत और बल्कि यह एक बहुत ही स्वाभाविक ,, जीवंत और बोलचाल भाषा भी बन गई। बिना अतिनाटकीय हुए सहज बोलचाल की और जितना बोलने कीचलाने -उतनी ही चलने , वाली अर्थात अभिनेता से क्रिया की मांग करने वाली भी ठहरी। इसमें हास्य, व्यंग्य, उपहास आदि के लक्षण अनायास ही प्रकट हो गए। यहां दक्खिनी कहीं कहानी के आधार रूप में फैली हुई आयीकहीं पात्र विशेष की चरित्रगत , विशिष्टता को गहनता देने के लक्ष्य से और कहीं वातावरण को यथार्थवता देती परंतु इतना होने पर भी ये फिल्में निश्चितता के साथ हिन्दी कीही स्वीकृत रही हैं।

इसके समानांतर, यहां यह भी उल्लेखनीय है कि इक्कीसवीं सदी में बॉलीवुड से परे, डॉलीवुड के रूप में दक्खिनी हिंदी और सिनेमा की एक नवीन संगति का आविर्भाव एक महत्वपूर्ण भाषाई घटना बनी। कुंटा निकिल ने अपनी वर्ष की फिल्म 2006'अंग्रेज' में बोनालू से लेकर बारात तक, बिरयानी से लेकर पब लाइफ तक, समूची हैदराबादी संस्कृति को अभिव्यक्त करने के लिए आईटी सेक्टर के किरदारों से अंग्रेजी बोलवाई और इस्माइल भाई तथा उनके गिरोह के सदस्यों सलीम-'फेकू', जहांगीर, गफूर और चौस के संवादों में दक्खिनी हैदराबादी शैली और स्वभाव को प्रकट किया।

नमूना 1

- सलीम फेकू- पाइजन डाल लियालोगां चीप केटेगरी के लोकल बस्ती के सिक्रेट लोगां हैं अरे तुम ...!, पाइजन बोले तो सेंट कू बोलते, बाहर मिलते...! वो डुप्लीकेट तुमारे बाबा लगाते।

नमूना 2

- इस्माइल भाई पच्चीस साल से चारमीनार में -बैठा हुवा हूं, मेरे कू कोई भी हाथ नइ लगाए... वो अंगरेजा मेरे कू हाथ लगाते। माँ की किरकिरी…।

इस्माइल भाई की भूमिका निभाने वाले धीर चरण श्रीवास्तव का इस संबंध में मत सारभूत है कि वर्ष '2004-05 का वह समय था जब आईटी उद्योग हैदराबाद में धीरे-धीरे फल-फूल रहा था। अचानक शहर का पश्चिमीकरण करने के प्रयास किए गए और सांस्कृतिक संघर्ष पैदा हो गया। इसलिए अंग्रेज़ एक व्यंग्य बन गया, जिसने पुराने शहर की भाषा और संस्कृति और शिक्षित युवाओं द्वारा जीवन के अधिक परिष्कृत तरीके को अपनाने की कथित इच्छा पर कब्जा कर लिया।'8 स्थानीय भाषा, शैली के स्वाद के नॉस्टेल्जिया ने इस उद्योग का क्रमशः विस्तृत होता दर्शक वर्ग खड़ा किया। हास्य और व्यंग्य के माध्यम से पुराने शहर तथा नये शहर के मध्य का संभाषण पर्दे पर जीवंत हुआ। 'हैदराबाद के नवाब' (2006), 'दुबई में हंगामा' (2007), 'स्टेपनी' (2014), 'अंग्रेज-2' (2015), 'दावत-ए-शादी' (2016), 'स्टेपनी 2 रिटर्न्स'(2017) आदि फिल्मों में दक्खिनी हिन्दी केंद्र बिंदु बनी पर अंग्रेजी एवं तेलुगु आदि भाषाओं का भी प्रसंगानुसार प्रयोग चिन्हित हुआ। 'सलाम जिन्दगी' (2017) में उस्मान भाई के संवादों जैसे- 'अरे बचपन में मैं स्कूल की टीचर को लाइट मारां...अरे आशिकी मियां, अच्छा है देख लोगां आशिकी में हाथां काट लेते, मैं कुछ नया दिखता बोलके... नाकां काट लिया...वैसे इच मेरा नाम जो है उस्मान भाई चपटा पड़ गया। मेरे को समझे', ने हैदराबादी चरित्र को प्रत्यक्षता दी। असल में, 'तेलुगु फिल्म उद्योग ने सांस्कृतिक संसाधन के रूप में दक्खिनी संस्कृति की जाँच करने का कभी कष्ट नहीं किया। जब भी उन्हें मामूली प्रतिनिधित्व मिला तो भी वे हमेशा नकारात्मक चरित्र ही रहे, संस्कृति और भाषा का मजाक उड़ाते हुए। दूसरी तरफ दक्खिनी फ़िल्में कहानी के दूसरे पक्ष को सामने लायी। पुराने शहर की संकरी गलियों, गरीब मुसलमानों, जिनकी देश के प्रति प्रतिबद्धता, विकास के तहत, मलिन बस्तियों आदि पर सदैव संदेह किया जाता है, के बारे में लोकप्रिय धारणाएं ध्वस्त हो गई और इसके स्थान पर उन्होंने दक्खिनी भाषा/बोली और संस्कृति की सुंदरता को प्रत्यक्ष किया।'9

अंततः कहा जा सकता है कि दक्खिनी के सिनेमासंस्कार को गढ़ने और इस-के दर्शकों के भाषाई बोध निर्माण में बॉलीवुडसपनों ,चाहतों तथा संघर्षों ,डॉलीवुड का अंशदान रहा है। दोनों ने दक्खिनी भाषी समुदाय की चुनौतियों , को रचा है पर अभी इसके का नवीन फलक उकेरा है। हिन्दी के क्षेत्रीय रूपों की उर्जा को सुदृढ़ करने की प्रत्याशा विकास और इस पर शोध की संभावनाएं अनंत हैं तथा यह लेख इस दिशा में केवल एक आरंभिक प्रयास भर है।-

संदर्भ-

1. https://www.filmink.com.au/andrzej-wajda-salute-to-a-pioneer/) When a film is created, it is created in a language, which is not only about words, but also the way that very language encodes our perception of the world, and our understanding of it(.
2. जवरीमल्ल पारख, 'साझा संस्कृति, साम्प्रदायिक आतंकवाद और हिन्दी सिनेमा', वाणी प्रकाशन, दिल्ली, सं.2012, पृ.245-246
3. स्टीफ़ेन ऑल्टर, 'फ़ैंटसीज़ ऑफ़ अ बॉलीवुड लव थीफ़', हारपर कॉलिन्स, सं.2007, पृ.17
4. यूले और बर्नेल ,हाब्सन जाब्सन ,सं.1903 ,पृ302.
5. डॉ चौथी आवृति ,दिल्ली ,राजकमल प्रकाशन ,भारतीय आर्य भाषा और हिन्दी ,सुनीति कुमार चाटुर्ज्या . ,2004पृ217.
6. 'दक्खिनी अ कॉमन फाउंडेशन ऑफ़ उर्दू ऐंड हिन्दी' अंतरराष्ट्रीय विचारगोष्ठी, https://www.bbc.com/hindi/entertainment/090729/07/2009_dakkhini_seminar_sz (
7. https://www.dnaindia.com/lifestyle/report-hyderabadi-tadka-2022059
8. https://hydnews.net/2019/03/how-dakhini-film-industry-blossomed-with-language-and-slang-on-screens-in-hyderabad/ Article-How 'Dakhini Film Industry' Blossomed With 'Language And Slang' On Screens In Hyderabad?, AHSSANUDDIN HASEEB, 7 March 2019,
9. वही वामसी .प्रो ,रेड्डी का कथन।

प्रोमिला

एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, अंग्रेजी एवं विदेशी भाषा विश्वविद्यालय, हैदराबाद (तेलंगाना)

मो.-8977961191

भारतीय शिक्षा का पुनरुत्थान: औपनिवेशिक प्रभावों से मुक्ति और सांस्कृतिक पुनर्जागरण

डॉ. प्रभाकर पाण्डेय

शोध सार

यह शोध पत्र; भारतीय शिक्षा पर; औपनिवेशिक शिक्षा प्रणाली के प्रभावों का विश्लेषण करता है। औपनिवेशिक नीतियों ने अंग्रेजी और पश्चिमी मूल्यों को प्राथमिकता दी और भारतीयों की सांस्कृतिक पहचान और आत्मगौरव को कमजोर किया। इन प्रभावों की छाया स्वतंत्रता के बाद भी भारतीय शिक्षा प्रणाली पर रही। प्रस्तुत शोध, भारतीय शिक्षा के विऔपनिवेशीकरण के लिए ज्ञान परंपराओं के पुनरुद्धार, मातृभाषा में शिक्षा, आलोचनात्मक सोच के विकास, इतिहास के पुनर्लेखन और नैतिक शिक्षा पर ज़ोर देता है। इसका उद्देश्य छात्रों में आत्मसम्मान, सृजनात्मकता, और सामाजिक जिम्मेदारी की भावना विकसित करना है, ताकि भारतीय समाज आत्मनिर्भर और स्वाभिमानी बन सके।

मुख्य शब्द: ज्ञान परंपरा, मानसिक गुलामी, विऔपनिवेशीकरण, आलोचनात्मक सोच, सांस्कृतिक पुनर्जागरण

प्रस्तावना

भारतीय शिक्षा प्रणाली पर औपनिवेशिक प्रभाव एक जटिल और गहन चर्चा का विषय है। जिसका भारत के सामाजिक, सांस्कृतिक और मानसिक विकास पर गहरा प्रभाव पड़ा है। जब ब्रिटिश शासन ने भारतीय शिक्षा को अपने नियंत्रण लिया, तो इसका उद्देश्य भारतीय समाज को उसकी पारंपरिक ज्ञान प्रणालियों को कमजोर करके, उन्हें पश्चिमी शिक्षा और संस्कृति के अधीन करना था। वर्ष 1835 में थॉमस मैकाले के 'शिक्षा पर स्मरण-पत्र' और 1854 के वुड्स 'घोषणापत्र' ने शिक्षा का ऐसा ढांचा तैयार किया जो भारतीयों को केवल निम्नस्तरीय प्रशासनिक कार्यों के लिए प्रशिक्षित करने पर केंद्रित था। परिणामस्वरूप, भारतीयों की सांस्कृतिक पहचान, आत्मसम्मान और परंपरागत ज्ञान प्रणालियाँ कमजोर होती चली गई। औपनिवेशिक शिक्षा ने अंग्रेजी भाषा और पश्चिमी मूल्यों को सर्वोपरि बनाया, जिससे भारतीय समाज में मानसिक गुलामी, सांस्कृतिक हीनता और आत्महीनता की भावना उत्पन्न हुई।

इस सन्दर्भ में गौरी विश्वनाथन अपनी पुस्तक *'मास्क्स ऑफ कॉन्क्वेस्ट'* में लिखती हैं कि औपनिवेशिक शिक्षा प्रणाली का सबसे बड़ा नकारात्मक प्रभाव भारतीय संस्कृति परंपराओं के प्रति तिरस्कार और अपमान की भावना का निर्माण था। ब्रिटिश शिक्षा नीति ने भारतीय ज्ञान, दर्शन और परंपराओं को 'अधिकारहीन', 'पुराने जमाने का अंधविश्वासी' करार दिया।[i] उनकी शिक्षा नीति; इस विश्वास पर आधारित थी कि भारतीय छात्रों को उनकी अपनी सांस्कृतिक विरासत से दूर रखाना और उन्हें पश्चिमी संस्कृति की श्रेष्ठता के बारे में पढ़ाना था। उनकी नीति थी कि यदि भारतीयों को यह विश्वास दिलाया जाए कि उनकी संस्कृति हीन है, तो वे स्वाभाविक रूप से ब्रिटिश संस्कृति और ज्ञान को अपनाने के लिए प्रेरित होंगे जो दीर्घकाल तक ब्रिटिश सत्ता को स्थापित रखेगा। इस पर चर्चा करते हुए आशिस नंदी लिखती हैं कि "इसका परिणाम हुआ कि भारतीय समाज के उच्च और शिक्षित वर्ग ने अपनी ही परंपराओं को छोड़कर पश्चिमी जीवन-शैली व विचारों को अपनाना शुरू कर दिया, जो भारतीय समाज में गहरी विभाजन रेखाएं खींचने वाली साबित हुई। इसलिए कि भारतीय समाज में सांस्कृतिक आत्मगौरव की भावना क्षीण हो गई। [ii] परिणामस्वरूप भारतीय समाज में मानसिक दासता, आत्मविश्वास की कमी और सांस्कृतिक गर्व की भावना

समाप्त हुई। थॉमस मैकाले ने वर्ष 1835 में अपने 'शिक्षा स्मरण–पत्र' में इस मानसिकता का खुलासा किया, जब उन्होंने कहा कि ब्रिटिश शिक्षा का उद्देश्य ऐसा वर्ग तैयार करना था जो भारतीय रक्त और रंग का हो लेकिन विचारों, नैतिकता और बुद्धि में पूरी तरह से अंग्रेज हो। [iii] इसका मतलब यह है कि औपनिवेशिक शिक्षा ने भारतीयों को उनके सांस्कृतिक मूल्यों से दूर किया तथा उन्हें एक ऐसी मानसिक गुलामी में जकड़ दिया, जिसमें वे अपनी पहचान खो बैठे।

स्वतंत्रता प्राप्ति के साथ हीं भारतीय शिक्षा प्रणाली में उपनिवेशी प्रभाव को समाप्त करने और विऔपनिवेशीकरण के लिए प्रयास हुए, किन्तु स्वतंत्र भारत में कई सुधारों के बावजूद, भारतीय शिक्षा प्रणाली में अभी भी ब्रिटिश शिक्षा का ढांचा विद्यमान है। भारतीय शिक्षा का 'स्व' 'तंत्र' विकसित करने के लिए निम्नांकित बिन्दुओं पर विचार किया जाना उचित होगा

भारतीय ज्ञान परंपराओं का पुनर्जीवन

भारतीय ज्ञान परंपराओं का पुनर्जीवन विऔपनिवेशीकरण की दिशा में पहला और महत्वपूर्ण कदम है। इस सन्दर्भ में 'हिन्द स्वराज' में लिखित महात्मा गांधी के विचार महत्वपूर्ण हैं। उन्होंने लिखा कि शिक्षा का उद्देश्य आत्मनिर्भरता और स्वराज की भावना को विकसित करना होना चाहिए, इसके लिए भारतीय ज्ञान और संस्कृति को केंद्र में रखना अत्यंत आवश्यक है। [iv] इसके लिए भारतीय ज्ञान परंपरा को शिक्षा प्रणाली में पुनर्गठित करने की आवश्यकता है। इसे स्पष्ट करते हुए दीनदयाल उपाध्याय कहते हैं कि "भारतीय शिक्षा प्रणाली को इस प्रकार पुनर्गठित किया जाना चाहिए कि वह भारतीय सांस्कृतिक धरोहर को पुनर्जीवित करे और अपनी प्राचीन ज्ञान की महानता को स्वीकार करे"। [v] देखा जाए तो ज्ञान की यह परंपरा केवल अपने प्राचीनता के लिए ही महत्वपूर्ण नहीं अपितु इसकी अपनी एक विशिष्ट दृष्टि है। इस सन्दर्भ में राजीव मल्होत्रा ने अपनी पुस्तक *'बिंग डिफरेंट'* में पश्चिमी शिक्षा प्रणाली की आलोचना करते हुए लिखा है कि भारतीय शिक्षा प्रणाली में भारतीय दर्शन और शास्त्रों को पुनः महत्व दिया जाना चाहिए ताकि भारतीय अपनी सांस्कृतिक से पुनः जुड़ सकें। उन्होंने तर्क दिया कि भारतीय सभ्यता की विशिष्टता को पहचानने और बनाए रखने के लिए शिक्षा का भारतीयकरण आवश्यक है। [vi] ज्ञान की यह परम्परा न केवल भारतीय मानस के विऔपनिवेशिकरण के लिए आवश्यक है अपितु ज्ञान के इस समृद्ध भण्डार का युगानुकुलता, वर्त्तमान की चुनौतियों व भविष्य की आवश्यकताओं के लिए संरक्षित रखना आवश्यक है। भारतीय समाज को पुनः परंपरिक ज्ञान से जोड़ने के लिए शिक्षा प्रणाली में भारतीय दर्शन, शास्त्र व विज्ञान का समावेश आवश्यक है।

मातृभाषा में शिक्षा का प्रावधान

विऔपनिवेशीकरण की दिशा में बढ़ने के लिए यह आवश्यक है कि मातृभाषा में शिक्षा प्रदान की जाए। छात्रों के मानसिक एवं बौद्धिक विकास के लिए मातृभाषा में शिक्षा बहुत महत्वपूर्ण है। रवींद्रनाथ टैगोर ने अपनी पुस्तक *'टुवर्ड युनिवर्सल मैन'* में इस बात पर जोर दिया है कि मातृभाषा में शिक्षा से छात्रों में आत्म-सम्मान तथा सांस्कृतिक गौरब की भावना का विकास होता है। [vii] मातृभाषा के महत्व को स्थापित करते हुए दीनदयाल उपाध्याय ने एकात्म मानववाद में लिखा है कि "शिक्षा का माध्यम मातृभाषा होना चाहिए, क्योंकि मातृभाषा में शिक्षा से छात्रों को अपनी संस्कृति और परंपराओं के साथ जुड़ने का अवसर मिलता है"।[viii] राजीव मल्होत्रा अपनी पुस्तक *'ब्रेकिंग इंडिया'* में इस तर्क को आगे बढाते हुए कहते हैं कि भारतीय भाषाओं को शिक्षा माध्यम के रूप में बहाल किया जाना चाहिए, ताकि भारतीय छात्रों को उनकी सांस्कृतिक जड़ों से जुड़ने का अवसर मिल सके। उनका मानना है कि

अंग्रेजी का प्रभुत्व भारतीय मानस पर औपनिवेशिक मानसिकता को बनाए रखने का एक माध्यम है।[ix] यह एक स्थापित तथ्य है कि छात्रों के मानसिक और बौद्धिक विकास के लिए मातृभाषा में शिक्षा अत्यंत आवश्यक है। मातृभाषा में शिक्षा न केवल छात्रों को उनकी संस्कृति से जोड़ती है अपितु उन्हें रचनात्मक और आलोचनात्मक रूप से सोचने के लिए प्रेरित भी करती है।

इन संदर्भ के विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि मातृभाषा में शिक्षा का प्रावधान न केवल छात्रों के मानसिक विकास के लिए महत्वपूर्ण है, बल्कि यह समाज में सांस्कृतिक एकता व सामंजस्य स्थापित करने में भी सहायक है।

आज के समय में, शिक्षा प्रणाली में अंग्रेजी माध्यम को प्राथमिकता देने से समाज में एक प्रकार की सांस्कृतिक असमानता उत्पन्न हो गई है। इस असमानता को कम करने के लिए मातृभाषा में शिक्षा का विस्तार अत्यंत आवश्यक है।

वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में अंग्रेजी माध्यम को प्राथमिकता देने से समाज में एक प्रकार की सांस्कृतिक असमानता पैदा हो गई है। इस असमानता को कम करने के लिए मातृभाषा में शिक्षा का विस्तार बहुत जरूरी है।

सृजनात्मक और आलोचनात्मक सोच का विकास

विऔपनिवेशीकरण की दिशा में शिक्षा सुधार का एक महत्वपूर्ण पहलू छात्रों में रचनात्मक और आलोचनात्मक सोच को बढ़ावा दिया जाय। शिक्षा का उद्देश्य जानकारी प्रदान करना नहीं अपितु छात्रों को समस्याओं का समाधान करने और नवीन दृष्टिकोण विकसित करने का होना चाहिए। रवींद्रनाथ टैगोर ने अपनी पुस्तक *'टुवर्ड युनिवर्सल मैन'* में लिखा है कि शिक्षा का उद्देश्य स्वतंत्रता और सृजनात्मकता की भावना का विकास करना होना चाहिए।[x] इसी विषय को स्पष्ट करते हुए गौरी विश्वनाथन अपनी पुस्तक *'मास्क ऑफ कॉन्क्वेस्ट'* में औपनिवेशिक शिक्षा प्रणाली के इस पहलू पर चर्चा करते हुए कहती हैं कि "औपनिवेशिक शिक्षा का मुख्य उद्देश्य भारतीयों में स्वतंत्र सोच को समाप्त करना और उन्हें केवल अधीनस्थ भूमिका निभाने के लिए तैयार करना था।"[xi] राजीव मल्होत्रा ने भी इसी तर्क को बढाते हुए अपनी पुस्तक *'बींग द डिफरेंट'* में तर्क दिया है कि पश्चिमी शिक्षा प्रणाली ने भारतीयों को मौलिक रूप से सोचने की क्षमता से दूर कर दिया। उनका मानना है कि भारतीय शिक्षा प्रणाली को विऔपनिवेशीकरण करते समय रचनात्मकता और आलोचनात्मक सोच का विकास अत्यंत महत्वपूर्ण है। मल्होत्रा का तर्क है कि भारतीय समाज को आत्मनिर्भर व सशक्त बनाने के लिए भारतीय शिक्षा प्रणाली में स्वतंत्र और आलोचनात्मक सोच विकसित करना आवश्यक है।[xii]

भारतीय इतिहास का पुनर्लेखन

औपनिवेशिक शासन के दौरान भारतीय इतिहास को एक ऐसे दृष्टिकोण से लिखा गया, जिसमें भारतीय संस्कृति को कमजोर और पश्चिमी सभ्यता को श्रेष्ठ बताया गया। इस प्रकार का इतिहास लेखन भारतीय समाज में आत्म-संदेह तथा हीन भावना को बढ़ावा देने वाला साबित हुआ। इसलिए विऔपनिवेशीकरण के लिए भारतीय इतिहास का पुनर्लेखन अतिआवश्यक है।

भारतीय इतिहास का पुनर्लेखन इस प्रकार होना चाहिए कि वह भारतीय समाज की उपलब्धियों, संघर्षों तथा सांस्कृतिक धरोहर को उचित स्थान दे। इतिहास का पुनर्लेखन भारतीय दृष्टिकोण से होना चाहिए, ताकि छात्रों

में अपने पूर्वजों और समाज के प्रति गर्व की भावना विकसित हो सके। इस विषय को स्पष्ट करते हुए आर. सी. मजूमदार ने अपनी पुस्तक *'एंसियंट इण्डिया'* में इस बात पर जोर दिया है कि भारतीय इतिहास का लेखन भारतीय दृष्टिकोण से होना चाहिए, ताकि भारतीय अपनी सांस्कृतिक धरोहर को समझें व उसका सम्मान कर सके।[xiii] इस विषय को आगे बढाते हुए अरुण शौरी ने अपनी पुस्तक *'एमिनेंट हिस्टोरियंस'* में भारतीय इतिहासकारों की आलोचना करते हुए स्थापित किया है कि भारतीय इतिहास का पुनर्लेखन जरूरी है। उनका मानना है कि औपनिवेशिक शिक्षा प्रणाली ने भारतीय इतिहास को इस प्रकार प्रस्तुत किया, जिससे भारतीय समाज में हीन भावना उत्पन्न हुई। शौरी ने यह भी लिखा कि भारतीय इतिहास को भारतीय दृष्टिकोण से लिखना चाहिए, ताकि छात्र अपने पूर्वजों की उपलब्धियों पर गर्व करें। [xiv] अतः भारतीय इतिहास का पुनर्लेखन ऐसा होना चाहिए जिसमें भारतीय समाज की उपलब्धियों और संघर्षों को सही परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुती हो।

नैतिक और मूल्य-आधारित शिक्षा

गांधी जी ने अपनी पुस्तक *'कैरेक्टर एन्ड नेशन बिल्डिंग'* में लिखा है कि शिक्षा का मुख्य उद्देश्य नैतिकता और चरित्र निर्माण होना चाहिए। क्योंकि नैतिकता के बिना समाज का विकास संभव नहीं है, इसके लिए शिक्षा में नैतिक व मूल्य-आधारित शिक्षा का समावेश होना चाहिए। [xv] इस प्रकार कहा जा सकता है कि शिक्षा का उद्देश्य केवल अकादमिक ज्ञान देना ही नहीं बल्कि छात्रों में नैतिकता और समाज के प्रति जिम्मेदारी की भावना विकसित करने वाला भी होना चाहिए।

कौशल और व्यावसायिक शिक्षा का विस्तार

औपनिवेशिक शिक्षा ने भारतीय समाज में केवल प्रशासनिक और कार्यालयीय कार्यों के दक्ष व्यक्तियों को तैयार किया। परिणामस्वरूप भारतीय समाज में व्यवसायिक कौशल और नवाचार की क्षमता कमजोर हुई। इसके विपरीत, भारतीय समाज को आत्मनिर्भर व आधुनिक बनाने के लिए कौशल आधारित शिक्षा आवश्यक है, जो छात्रों को व्यवहारिक जीवन के लिए तैयार करती है। 'नई तालीम' पुस्तक में महात्मा गांधी कौशल विकास तथा व्यावसायिक शिक्षा के महत्व पर जोर देते हैं। गांधीजी का मानना था कि शिक्षा का उद्देश्य केवल बौद्धिक विकास ही नहीं बल्कि छात्रों को व्यावहारिक जीवन में आत्मनिर्भर बनाने के लिए व्यावसायिक कौशल भी प्रदान करना चाहिए। [xvi]

शिक्षा का विकेंद्रीकरण और स्थानीय आवश्यकताओं पर ध्यान

विऔपनिवेशीकरण के लिए शिक्षा प्रणाली के विकेंद्रीकरण की दिशा में सुधार अत्यंत आवश्यक है। औपनिवेशिक शिक्षा प्रणाली ने केंद्रीकृत शिक्षा प्रणाली को प्राथमिकता है जिसमें स्थानीय संदर्भों और आवश्यकताओं की उपेक्षा की गई। परिणामस्वरूप, भारतीय शिक्षा प्रणाली में स्थानीय संस्कृतियों, भाषाओं व आवश्यकताओं का समावेश नहीं हो पाया। शिक्षा का विकेंद्रीकरण इस प्रकार होना चाहिए कि विभिन्न राज्यों, क्षेत्रों तथा समुदायों की विशिष्ट आवश्यकताओं के अनुसार पाठ्यक्रम और शिक्षण विधियाँ तैयार की जा सकें। गांधी जी ने जोर दिया कि शिक्षा का उद्देश्य समाज की स्थानीय आवश्यकताओं और संदर्भों के साथ जुड़े होना चाहिए। उन्होंने कहा है कि शिक्षा का स्वरूप छात्रों को समाज की समस्याओं को हल करने तथा समुदायिक विकास में भागीदार बनने के लिए होना चाहिए। [xvii] शिक्षा के स्वरुप को स्पष्ट करते हुए के. एम. श्राफ अपनी पुस्तक *'डिसेंट्रलाइजेशन*

इन इण्डियन एजुकेशन' में तर्क करते हैं कि शिक्षा का विकेंद्रीकरण इस प्रकार होना चाहिए कि स्थानीय समुदायों की आवश्यकताओं तथा उनकी सांस्कृतिक धरोहर को ध्यान में रखते हुए पाठ्यक्रम तैयार किया जाए। [xviii]

विकेंद्रीकृत शिक्षा प्रणाली स्थानीय संदर्भों में शिक्षण को प्रोत्साहित करेगी, जिससे छात्रों को अपने समाज व सांस्कृतिक धरोहर से गहरा संबंध महसूस होगा। इससे स्थानीय ज्ञान परंपराओं का संरक्षण होगा और छात्रों में अपने समुदाय के प्रति जिम्मेदारी व योगदान की भावना का विकास होगा।

राष्ट्रवाद और भारतीयता का विकास

भारतीय राष्ट्रवादी विचारक दीनदयाल उपाध्याय ने एकात्म मानववाद के सिद्धांत के तहत शिक्षा के उद्देश्य को भारतीय संदर्भ में परिभाषित किया। उनका मानना था कि शिक्षा केवल प्रशासनिक दक्षता या नौकरी पाने का साधन नहीं होनी चाहिए, बल्कि यह छात्रों के समग्र विकास और राष्ट्र के प्रति उनकी जिम्मेदारी को समझने का एक माध्यम होनी चाहिए। दीनदयाल उपाध्याय का कहना है कि शिक्षा का उद्देश्य "केवल ज्ञान देना नहीं होना चाहिए, बल्कि इसका उद्देश्य छात्रों में भारतीयता की भावना का विकास करना होना चाहिए, ताकि वे भारतीय समाज की सेवा कर सकें"। [vix] इस सन्दर्भ में अरुण शौरी ने भी भारतीय शिक्षा प्रणाली के औपनिवेशिक प्रभावों की कड़ी आलोचना की। अपनी पुस्तक *'एमिनेंट हिस्टोरियन'* में उन्होंने बताया है कि औपनिवेशिक शासन के दौरान भारतीय इतिहास को विकृत रूप में प्रस्तुत किया गया, जिससे भारतीय समाज में राष्ट्रवाद और सांस्कृतिक गर्व की भावना कमजोर हुई। शौरी का मानना है कि शिक्षा का मुख्य उद्देश्य भारतीय राष्ट्रवाद को पुनर्जीवित करना होना चाहिए।[xx] उनके अनुसार, शिक्षा प्रणाली में भारतीय संस्कृति, परंपराएँ, और इतिहास के प्रति छात्रों में गर्व की भावना उत्पन्न होनी चाहिए, ताकि वे भारतीय सभ्यता की महानता को पहचान सकें। उन्होंने लिखा है कि भारतीय शिक्षा प्रणाली को इस प्रकार तैयार किया जाना चाहिए, जिससे कि छात्र अपनी जड़ों और परंपराओं से जुड़ सकें और पश्चिमी प्रभावों से मुक्त हो सकें। शौरी का मानना है कि भारतीय शिक्षा में राष्ट्रवाद और भारतीयता का विकास तभी संभव है जब छात्रों को भारतीय इतिहास, संस्कृति, तथा नायकों के बारे में सटीक व गर्वपूर्ण जानकारी दी जाए। औपनिवेशिक शिक्षा ने भारतीय समाज को यह विश्वास दिलाने का प्रयास किया कि उनका इतिहास कमजोर तथा हीन था, जबकि पश्चिमी सभ्यता श्रेष्ठ है। इस मानसिकता को बदलने के लिए शिक्षा का पुनर्गठन आवश्यक है, ताकि छात्रों में राष्ट्रीय गर्व की भावना का विकास हो सके।

निष्कर्ष

यह शोध भारतीय शिक्षा प्रणाली पर औपनिवेशिक प्रभावों का विश्लेषण और यह विमर्श प्रस्तुत करता है कि औपनिवेशिक शिक्षा ने भारतीय समाज को उसकी सांस्कृतिक धरोहर से किस प्रकार अलग कर दिया। थॉमस मैकाले और वुड्स डिस्पैच की नीतियों ने भारतीयों को प्रशासनिक कार्यों के लिए प्रशिक्षित किया लेकिन उनकी सृजनात्मकता और सांस्कृतिक पहचान को कमजोर कर दिया। इस शिक्षा प्रणाली ने अंग्रेजी और पश्चिमी मूल्यों को प्राथमिकता दी, जिससे भारतीय समाज में आत्महीनता और मानसिक गुलामी की भावना उत्पन्न हुई।

शोध का निष्कर्ष है कि भारतीय शिक्षा प्रणाली को पुनर्गठित करके भारतीय सांस्कृतिक धरोहर और मूल्यों को प्राथमिकता दी जानी चाहिए, ताकि छात्रों में आत्मसम्मान, सृजनात्मकता, और सामाजिक जिम्मेदारी की भावना

का विकास हो सके। इन सुधारों के माध्यम से भारतीय समाज औपनिवेशिक मानसिकता से मुक्त होकर आत्मनिर्भर और स्वाभिमानी बन सकता है।

सन्दर्भ सूची

i. विश्वनाथन, गौरी। *मास्क्स ऑफ कॉन्क्वेस्ट: लिटरेरी स्टडी एंड ब्रिटिश रूल इन इंडिया*. न्यूयॉर्क: कोलंबिया यूनिवर्सिटी प्रेस, 1989, पृष्ठ 23।

ii. नंदी, आशिस। *द इंटिमेट एनिमी: लॉस एंड रिकवरी ऑफ सेल्फ अंडर कॉलोनियलिज्म*. नई दिल्ली: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1984, पृष्ठ 78।

iii. मैकाले, थॉमस बाबिंगटन। *मिनिट्स ऑन इंडियन एजुकेशन*. 1835, पृष्ठ 16।

iv. गांधी, महात्मा। *हिंद स्वराज*। अहमदाबाद: नवजीवन ट्रस्ट, 1909, पृष्ठ 54।

v. उपाध्याय, दीनदयाल। *एकात्म मानववाद*। नई दिल्ली: भारतीय जनसंघ, 1965, पृष्ठ 122।

vi. मल्होत्रा, राजीव। *बीइंग डिफरेंट: एन इंडियन चैलेंज टू वेस्टर्न यूनिवर्सलिज्म*। नई दिल्ली: हार्पर कॉलिन्स, 2010, पृष्ठ 88।

vii. टैगोर, रवींद्रनाथ। *टुवर्ड युनिवर्सल मैन*। न्यूयॉर्क: मैकमिलन पब्लिशर्स, 1929, पृष्ठ 32।

viii. उपाध्याय, दीनदयाल। *एकात्म मानववाद*। नई दिल्ली: भारतीय जनसंघ, 1965, पृष्ठ 89।

ix. मल्होत्रा, राजीव। *ब्रेकिंग इंडिया: वेस्टर्न इंटरवेंशंस इन ड्रविडियन एंड दलित फॉल्टलाइन्स*। नई दिल्ली: अमरिलिस, 2011, पृष्ठ 124।

x. टैगोर, रवींद्रनाथ। *टुवर्ड युनिवर्सल मैन*। न्यूयॉर्क: मैकमिलन पब्लिशर्स, 1929, पृष्ठ 45।

xi. विश्वनाथन, गौरी। *मास्क्स ऑफ कॉन्क्वेस्ट: लिटरेरी स्टडी एंड ब्रिटिश रूल इन इंडिया*। न्यूयॉर्क: कोलंबिया यूनिवर्सिटी प्रेस, 1989, पृष्ठ 75।

xii. मल्होत्रा, राजीव। *बीइंग डिफरेंट: एन इंडियन चैलेंज टू वेस्टर्न यूनिवर्सलिज्म*। नई दिल्ली: हार्पर कॉलिन्स, 2010, पृष्ठ 88।

xiii. मजूमदार, आर. सी. *एंसियंट इण्डिया*। दिल्ली: मोतीलाल बनारसीदास पब्लिशर्स, 1950, पृष्ठ 102।

xiv. *शौरी, अरुण। एमिनेंट हिस्टोरियंस : नई दिल्ली: हार्पर कॉलिन्स, 1998, पृष्ठ 65।*

xv. गांधी, महात्मा। *कैरेक्टर एन्ड नेशन बिल्डिंग*: नवजीवन ट्रस्ट, 1976, पृष्ठ 88।

xvi. गांधी, महात्मा। *नई तालीम*. अहमदाबाद: नवजीवन ट्रस्ट, 1947, पृ.77।

xvii. गांधी, महात्मा। *नई तालीम*. अहमदाबाद: नवजीवन ट्रस्ट, 1947, पृष्ठ 12-18।

xviii. श्रॉफ, के. एम। *डिसेंट्रलाइजेशन इन इंडियन एजुकेशन: पॉलिसी एंड प्रैक्टिस*. नई दिल्ली: सेज पब्लिकेशन्स, 2015, पृ. 74 ।

xix. उपाध्याय, दीनदयाल। *एकात्म मानववाद*। नई दिल्ली: भारतीय जनसंघ, 1965, पृष्ठ 122।

xx. शौरी, अरुण। एमिनेंट हिस्टोरियन. नई दिल्ली: हार्पर कॉलिन्स, 1998, पृष्ठ 65।

डॉ. प्रभाकर पाण्डेय

विभागाध्यक्ष

वैकल्पिक शिक्षा एवं समग्र विकास विभाग

साँची बौद्ध-भारतीय ज्ञान अध्ययन विश्वविद्यालय

साँची, रायसेन, मध्य प्रदेश

भारतीय ज्ञान परम्परा आधारित वैज्ञानिक दृष्टिकोण की समकालीन प्रासंगिकता

मोहिता वर्मा
डॉ. नीतू सिंह

हजारों वर्षों से भारतीय उप-महाद्वीप में विविध शिक्षण प्रणालियों और निकायों के माध्यम से अर्जित, संरक्षित और प्रसारित किए गए समृद्ध ज्ञान को भारतीय ज्ञान परम्परा के रूप में जाना जाता है। भारतीय ज्ञान परम्परा के माध्यम से ज्ञान को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में व्यवस्थित रूप से प्रसारित किया जाता है। यह केवल एक परम्परा न होकर एक सुसंगठित प्रणाली और ज्ञान हस्तांतरण कि एक विधि है। भारतीय ज्ञान परंपरा में भारतीय दृष्टिकोण 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' की उक्ति चरितार्थ होती है। यह महत्वपूर्ण है कि हम अपने पूर्वजों के ज्ञान के आधार को पुनः प्राप्त करें और इसे पूरे विश्व में प्रसारित करें। इसके लिए हमें अपनी पढ़ी-लिखी पीढ़ियों को शिक्षित करना होगा ताकि वे अपनी जीवन पद्धति को पूरे विश्व के सामने प्रस्तुत कर सकें। जिससे हमारी महान सभ्यता को एक विशिष्ट पहचान मिलेगी। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में कालातीत भारतीय ज्ञान और दर्शन की इस समृद्ध विरासत को एक मार्गदर्शक तत्व के रूप में स्वीकार किया गया है। विभिन्न क्षेत्रों में भारतीयों के योगदान के समृद्ध इतिहास (जिसे भारतीय ज्ञान परंपरा भी कहा जाता है) को राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा-विद्यालय शिक्षा 2023 के संपूर्ण पाठ्यक्रम में एकीकृत किया गया है। भारतीय ज्ञान परंपरा से संबंधित कुछ महत्वपूर्ण तथ्य निम्नलिखित हैं-

(क) दर्शन और आध्यात्मिकता

भारतीय दर्शन अस्तित्व, नैतिकता, चेतना और वास्तविकता के सार की मौलिक जांच पर प्रकाश डालता है। इन विषयों में बौद्ध धर्म, सांख्य, योग, न्याय, वेदांत और वैशेषिक जैसे विभिन्न विचारधाराएँ शामिल हैं। धर्म या कर्तव्य का विचार, मोक्ष, मुक्ति आदि की खोज भारतीय दर्शन के मूल तत्व माने जाते हैं (शुक्ल, 2022)।

(ख) वेद और उपनिषद्

हिंदू दर्शन व आध्यात्मिकता वेदों पर आधारित है जो लगभग 5000 साल पुराने तथा दुनिया के सबसे प्राचीन धार्मिक ग्रंथ में से एक है । उपनिषद के रूप में दार्शनिक रीतियाँ जो स्वयं तथा वास्तविकता की प्रकृति की जांच करती है को वैदिक दर्शन का शीर्ष माना जाता है।

(ग) आयुर्वेद

आयुर्वेद की प्राचीन चिकित्सा प्रणाली-मन, शरीर तथा आत्मा के बीच स्वस्थ संतुलन बनाए रखने पर बल देती है। जिसमें; योग, ध्यान, आहार तथा जड़ी-बूटियों द्वारा उपचार सहित व्यायाम आदि सम्मिलित हैं। आयुर्वेद पर लिखे गए ग्रंथ यथा; सुश्रुत संहिता, चरक संहिता में असाध्य रोगों के उपचार तथा शल्य चिकित्सा की तकनीकों की विस्तृत व्याख्या प्रस्तुत करते हैं।

(घ) योग और ध्यान

योग; शारीरिक और आध्यात्मिक अभ्यास है जिसका उद्देश्य आत्मा को परमात्मा के साथ एकीकृत करना है। इसमें 6 अष्टांग योग अर्थात्- यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान तथा समाधि सम्मिलित हैं।

(ड) गणित और विज्ञान

शून्य की अवधारणा के साथ-साथ बीजगणित, ज्यामिति, त्रिकोणमिति आदि में भारतीय गणितज्ञों ने महत्वपूर्ण योगदान दिए हैं। भारत में खगोल विज्ञान इतना विकसित हुआ कि इससे प्रेरणा प्राप्त करके विश्व भर के वैज्ञानिकों ने ब्रह्मांड के अवलोकन की पद्दतियाँ और गणितीय प्रणालियाँ विकसित की हैं।

(च) साहित्य और कला

भारतीय साहित्य में हिंदी, तमिल, संस्कृत आदि कई भाषाओं में लेखन की विस्तृत श्रृंखला शामिल हैं। महाकवि कालिदास के नाटकों व रवींद्रनाथ टैगोर की कविताओं के साथ ही रामायण तथा महाभारत जैसे शास्त्रीय रचनाओं के महाकाव्य भारतीय साहित्यिक विरासत का प्रतिनिधित्व करते हैं।

(छ) सामाजिक और राजनैतिक विचार

भारतीय दार्शनिकों ने प्राचीन समय में प्रचलित सामाजिक संरचना, नैतिकता और प्रशासन की अवधारणाओं आदि का अध्ययन किया है। महर्षि मनु द्वारा लिखित मनुस्मृति तथा चाणक्य द्वारा लिखित अर्थशास्त्र जैसी पुस्तकें प्राचीन भारत की राजनैतिक और सामाजिक परम्पराओं के विषय में अंतर्दृष्टि प्रदान करती हैं।

भारतीय ज्ञान परम्परा में विज्ञान, जीव विज्ञान, भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, चिकित्सा, खगोल विज्ञान तथा गणित जैसे क्षेत्रों के विकास का विस्तृत क्रम सम्मिलित हैं। भारतीय ज्ञान परम्परा में विज्ञान के निम्नलिखित क्षेत्रों को सम्मिलित किया गया है-

गणित और खगोल विज्ञान

गणित और खगोल विज्ञान प्राचीन संमय से ही भारतीय ज्ञान परम्परा का अभिन्न अंग हैं, जिसमें विभिन्न ऐसे बिन्दुओं को इंगित किया गया है, जिनका सीधा संबंध गणित तथा खगोल विज्ञान से है। इन क्षेत्रों में भारतीय ज्ञान परम्परा की भूमिका को निम्नलिखित बिन्दुओं के माध्यम से स्पष्ट किया जा सकता है-

- वैदिक युग के कुछ सदियों बाद ही गणित और खगोल विज्ञान के ज्ञान ने धर्म पर अपनी निर्भरता को कम किया। इस युग का सबसे प्रसिद्ध साहित्य 400 ई. का सूर्य सिद्धांत है, जिसमें ज्योतिष ज्ञान को संजोया गया है। कोण की त्रिज्या का उपयोग एक महत्वपूर्ण खोजों में से एक है जिसे सूर्य के सिद्धांत के परिणामस्वरूप विकसित किया गया है। इस समय के दौरान, खगोलशास्त्री और गणितज्ञ आर्यभट्ट (476 ईसा पूर्व) और उनके दो प्रसिद्ध शिष्य वराहमिहिर (587 ईसा पूर्व) और भास्कर प्रथम (600 ईसा पूर्व) का भी जन्म हुआ। ब्रह्मपुत्र को खगोल विज्ञान में इस युग का एक और प्रसिद्ध विशेषज्ञ माना जाता है।
- आर्यभट्ट ने त्रिकोणमितीय फलन बनाए, साइन का विचार प्रस्तुत किया और π (पाई) का अनुमान दिया। उन्होंने द्विघात समीकरणों को हल करने की विधियाँ भी सुझाई। भारतीय गणितज्ञों, विशेष रूप से ब्रह्मगुप्त और आर्यभट्ट को दशमलव प्रणाली और शून्य की खोज का श्रेय दिया जाता है, जिसने दुनिया भर में गणित के स्वरुप को बदल दिया तथा समकालीन बीजगणित और अंकगणित के लिए आधार के रूप में कार्य

किया। शून्य, ऋणात्मक संख्या और द्विघात समीकरण समाधान जैसे गणितीय विचारों को संबोधित करने वाली पहली पुस्तकों में से एक ब्रह्मस्फुटसिद्धांत ही थी, जिसे ब्रह्मगुप्त ने लिखा था।

- सुल्बसूत्र, जो 800 और 600 ईसा पूर्व के बीच निर्मित और संगठित किए गए थे; में ज्यामितीय, गणितीय व खगोलीय अवधारणाओं को सम्मिलित किया गया है। इसके साथ ही भारतीय गणितज्ञों ने ज्यामिति, बीजगणित और त्रिकोणमिति के विकास में भी अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है।
- जैसे-जैसे पहली सहस्राब्दी आगे बढ़ी, खगोल विज्ञान और अधिक उन्नत हुआ, हम महावीर, आर्यभट्ट द्वितीय, भास्कर द्वितीय और श्रीधर जैसे व्यक्तित्वों व इनके कार्यों से भली-भांति परिचित हैं।
- भारतीय वास्तुकला में अक्सर उन्नत ज्यामितीय कलाकृतियों का प्रदर्शन किया जाता है। विशेष रूप से मंदिरों और महलों या बड़ी इमारतों में इनका प्रतिबिम्बन देखा जा सकता है। इन कलाकृतियों के आध्यात्मिक व रूपक अर्थ भी होते हैं।
- क्रम परिवर्तन और संयोजन के साथ-साथ संयोजनिकी का अध्ययन दो ऐसे क्षेत्र हैं, जिनमें जैन गणितज्ञों ने भारतीय गणित के विकास में प्रमुख योगदान दिया है। जैन गणितज्ञ महावीर द्वारा लिखे गए बीजगणित, ज्यामिति और क्रमपरिवर्तन आदि महत्वपूर्ण ग्रंथ हैं।
- 14वीं तथा 16वीं शताब्दी में केरल स्कूल ऑफ मैथमेटिक्स ने कलन, अनंत श्रृंखला विस्तार और त्रिकोणमिति के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया। दक्षिण भारत की समृद्ध गणितीय और खगोलीय विरासत माधव (1340-1425 ई.) और नीलकंठ सोमयाजी (1444-1545 ई.) के लेखन में दिखाई देती है। संगमग्राम के एक प्रमुख गणितज्ञ थे, जिन्होंने त्रिकोणमितीय तथा श्रृंखला विस्तार सहित कलन की प्रारंभिक अवधारणाएँ विकसित कीं (येट्स, 2017)।
- भारतीय खगोल विज्ञान का इतिहास बहुत पुराना है, जिसमें वेदों और सिद्धांतों जैसे प्राचीन ग्रंथों में खगोलीय घटनाओं के अवलोकन का वर्णन मिलता है।
- प्रसिद्ध भारतीय खगोलविदों द्वारा सौर मंडल के सूर्यकेंद्रित प्रतिमान और ग्रहों की कक्षाओं की गणन विधियों ने आधुनिक खगोलीय समझ को और विस्तार प्रदान किया है।

आयुर्वेद एवं चिकित्सा

- भारत में वैज्ञानिक पहलुओं के साथ-साथ विभिन्न प्रकार की चिकित्सकीय प्रणालियाँ भी विकसित व समृद्ध हुई हैं। उनमें से आयुर्वेद आज सबसे प्रसिद्ध है। इसका शाब्दिक अनुवाद *'जीवन का विज्ञान'* है। सैद्धांतिक आधार के रूप में भौतिकवादी दृष्टिकोण के साथ यह निस्संदेह भारत में वैज्ञानिक चेतना का आधार रहा है।
- आयुर्वेद की सर्वाधिक महत्वपूर्ण पुस्तकें जैसे सुश्रुत संहिता और चरक संहिता को 200 ई. पू. से 400 ई. तक की लंबी अवधि में संकलित किया गया था। इन संहिताओं में आयुर्वेदिक उपचारों में मालिश (अभ्यंग), विषहरण (पंचकर्म), और आहार संबंधी हस्तक्षेपों सहित उपचारों की एक विस्तृत जानकारी सम्मिलित है। इन उपचारों का उद्देश्य स्वास्थ्य और कल्याण को बढ़ावा देना तथा शरीर के भीतर संतुलन और सद्भाव लाना है।

- प्राचीन आयुर्वेदिक विद्वान मनुष्य को पदार्थ (भारतीय शब्द 'भूत') के रूप में देखते थे, और उसके स्वास्थ्य, विकास, क्षय और जीवन (या प्राण) के रूप में जानी जाने वाली घटनाओं पर विचार करते थे। आयुर्वेद समग्र शारीरिक द्रव्यों (वात, पित्त, कफ) के संतुलन पर जोर देता है।
- आधुनिक एकीकृत चिकित्सा में ऐसी आयुर्वेदिक पद्धतियाँ भी सम्मिलित हैं जिनमें हर्बल उपचार के ज्ञान ने चिकित्सीय ज्ञान की कई सहायक प्रणालियों के विकास को प्रेरित किया, जिन्हें आधुनिक काल में वनस्पति विज्ञान और रसायन विज्ञान के रूप में जाना जा सकता है।
- आयुर्वेद में भस्म बनाने संबंधी प्रक्रियाओं का उल्लेख शामिल है जो कैल्सीनेशन जैसी प्रक्रियाओं से प्राप्त किया जाता है। जिनका उपयोग चिकित्सीय उद्देश्यों को पूर्ण करने के लिए किया जाता है। ऐसा माना जाता है कि ये प्रक्रियाएं धातुओं और खनिजों के औषधीय गुणों को बढ़ाने के साथ उनकी विषाक्तता को भी कम करती हैं।

भौतिक विज्ञान

- प्राचीन काल में भारतीय वैज्ञानिकों ने पदार्थ और ऊर्जा के सिद्धांतों सहित भौतिकी के विभिन्न पक्षों की खोज की है। परमाणुओं (अणु) की अवधारणा व पांच तत्वों (पंचभूत) का सिद्धांत भारतीय भौतिकी विज्ञान के विकास में ज्ञान का केंद्र रहा है।
- भारतीय दर्शन की न्याय व वैशेषिक परंराओं ने भी पदार्थ और गति को समझने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

रसायन विज्ञान

- प्राचीन भारतीय रसशास्त्र में धातुओं, खनिजों और रासायनिक प्रक्रियाओं का अध्ययन सम्मिलित था। रस-शास्त्रियों का उद्देश्य मूल अयस्कों से धातुओं को प्राप्त करना व अमरता के अमृत का विकास करना था।
- आयुर्वेदिक पुस्तकों में प्राकृतिक अवयवों से औषधि बनाने की विधियों के बारे में विस्तार से वर्णन है, जिसे औषधीय रसायन विज्ञान की संज्ञा दी जाती है। इन विधियों में निष्कर्षण, शुद्धिकरण और निर्माण की प्रक्रियाएँ सम्मिलित हैं जो समकालीन औषधीय रसायन विज्ञान तथा औषधि उद्योगों में उपयोग की जाने वाली विधियों के समान हैं।
- पदार्थों के आसवन, उर्ध्वपातन, मिश्रधातु बनाने व शुद्धिकरण की विस्तृत प्रक्रियाओं जैसी रासायनिक प्रक्रियाओं का वर्णन भारतीय ग्रंथों में मिलता है। जिन्हें रसशास्त्र विद्यालय में नागार्जुन व अन्य विद्वानों ने बताया है। इन तकनीकों से उपयोगी रासायनिक विधियों के विकास में सहायता मिलती है (नारायण, 1995)।

जीव विज्ञान

- भारतीय ज्ञान परम्परा में जीव विज्ञान, विशेष रूप से वनस्पति विज्ञान और प्राणि विज्ञान जैसे क्षेत्रों की गहरी समझ सम्मिलित है। प्राचीन ग्रंथ, चरक संहिता में औषधीय पौधों और उनके गुणों का विस्तृत वर्णन है।
- भारतीय विद्वानों ने पशु प्रजातियों का वर्गीकरण करके उनके व्यवहार का अध्ययन भी किया है।

अभियांत्रिकी और वास्तुकला

- प्राचीन भारतीय सभ्यताओं ने परिष्कृत जल प्रबंधन प्रणालियाँ विकसित की हैं। जैसे- सीढ़ीदार कुएँ (जैसे गुजरात में रानी की वाव), जिनकी अभियांत्रिकी की आज भी प्रशंसा होती है और स्थायी जल संरक्षण में उनका अध्ययन भी होता है।
- तमिलनाडु में बृहदेश्वर जैसे मंदिर उन्नत वास्तुशिल्प के सिद्धांतों एवं वास्तुकला को प्रदर्शित करते हैं। जिनका अध्ययन उनकी संरचनात्मक स्थिरता एवं सुन्दर कलाकृतियों के लिए किया जाता है।

पर्यावरण विज्ञान

- वैदिक पारिस्थितिकी और संधारणीयता के गांधीवादी सिद्धांत जैसी पारंपरिक भारतीय ज्ञान प्रणालियाँ प्रकृति के साथ मनुष्य के अंतर्संबंधों पर बल देती हैं।
- *'वसुधैव कुटुम्बकम'* (पूरा विश्व एक परिवार है) जैसी अवधारणा एक वैश्विक पारिस्थितिक दृष्टिकोण को दर्शाती हैं जो पर्यावरण के साथ सद्भाव को बढ़ावा देती है।
- प्राचीन ज्ञान में निहित भारत में प्रचलित स्वदेशी प्रथाएं कृषि, जैव विविधता संरक्षण व संसाधनों के प्रभावी प्रबंधन के लिए स्थायी दृष्टिकोण प्रदान करती हैं। आधुनिक पर्यावरणीय चुनौतियों से निपटने के लिए इन प्रथाओं की तेजी से पुन: पहचान करके इनके उपयोग को प्राथमिकता दी जा रही है (कुमार, 2016)।

योग और ध्यान

- योग की ऐतिहासिक जड़ें प्राचीन भारत में खोजी जा सकती हैं। सिंधु घाटी की सभ्यता से पुराने अभिलेख जो 3300-1900 ई.पू. ज्ञात हुए हैं तथा पतंजलि के योग सूत्र के रूप में जाना जाने वाला शास्त्रीय ग्रंथ योग के मूल तत्वों विचारों व तकनीकों का वर्णन करता है (तिवारी, 2023)।
- योग और ध्यान को सामान्य स्वास्थ्य के लिए लाभकारी अभ्यास के रूप में मान्यता मिलने के बाद से दुनिया भर में इसे व्यापक रूप से अपनाया जा रहा है। पिछले कुछ वर्षों में पूर्वी और पश्चिमी देशों में, योग और ध्यान को अपनी दिनचर्या में शामिल करने वाले लोगों की संख्या में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है।
- इन क्रियाऔ. की इतनी प्रशंसा और मांग क्यों की जाती है, इसके कई कारण हैं। जैसे कि वैज्ञानिक समुदाय ने मानसिक भावात्मक और शरीरिक स्वास्थ्य के लिए योग और ध्यान के लाभों की गहनता से जोच और पुष्टि की है। अध्ययनों से यह भी ज्ञात होता है कि योग के लगातार अभ्यास से सहनशक्ति, संतुलन और शक्ति में सुधार होता है। अर्थात योग, तनाव, चिंता और अवसाद ग्रस्तता के समग्र स्वास्थ्य सुधार के लक्षणों में भी सहायक है (दास, 2022)।

शल्य चिकित्सा तकनीकें

- प्राचीन भारतीय सुश्रुत संहिता ग्रंथ में प्लास्टिक सर्जरी, मोतियाबिंद सर्जरी सहित विभिन्न अन्य शल्य चिकित्सा प्रक्रियाओं का विस्तृत विवरण है जिसके लेखन का श्रेय महान आयुर्वेद चिकित्सक सुश्रुत को दिया जाता है।
- शल्य चिकित्सा की तकनीकों के विकास के क्षेत्र में सुश्रुत का योगदान महत्वपूर्ण है।

दोषों (द्रव्यों) की अवधारणा

- आयुर्वेद स्वास्थ्य को तीन दोषों (वात, पित्त, कफ) या जैव ऊर्जाओं के बीच संतुलन के रूप में मानता है और इस बात में भी विश्वास करता है कि इन दोषों में असंतुलन ही बीमारी का कारण बनता है।
- आयुर्वेदिक उपचार का उद्देश्य जीवन-शैली तथा आहार में बदलाव व संतुलित करके शाररिक बीमारियों को नैसर्गिक उपचार के माध्यम से ठीक करना है। (योगिनी एवं जायसवाल, 2017)।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में विद्यालयी स्तर से लेकर उच्च शिक्षा तक के सभी क्षेत्रों में भारतीय ज्ञान परम्परा के एकीकरण पर बल दिया गया है। भारतीय ज्ञान परम्परा के माध्यम से विद्यार्थियों को जीवन के सभी पहलुओं को ध्यान में रखते हुए एक समग्र विश्वदृष्टि प्रदान की जा सकती है। भारतीय ज्ञान परंपरा को शिक्षाण संस्थानों द्वारा उच्च शिक्षा में एकीकृत करने के प्रयास किए जा रहे हैं। भारत के विश्वविद्यालय और कॉलेज पहले से ही बड़ी संख्या परंपरिक ज्ञान पर आधारित पाठ्यक्रम चला रहे हैं (राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020)।

वर्तमान समस्याओं के समाधान के लिए भारतीय ज्ञान परम्परा को समकालीन उपायों से जोड़ने का महत्व अधिक व्यापक रूप से स्वीकार किया जा रहा है। नेशनल इनोवेशन फाउंडेशन (एनआईएफ) और हनी बी नेटवर्क दो भारतीय प्रयास हैं जो भारतीय ज्ञान परम्परा पर समुदाय आधारित नवाचारों को अभिलेखित, प्रमाणित और उनका समर्थन करने का प्रयास करते हैं। इस प्रकार भारतीय ज्ञान परम्परा को समकालीन वैज्ञानिक ज्ञान के साथ जोड़कर अधिक संधारणीय तकनीकें, रचनात्मक स्वास्थ्य सेवा समाधान और शहरी नियोजन रणनीतियाँ बना सकते हैं जो मानव समृद्धि तथा पर्यावरण संतुलन के लिए उपयोगी सिद्ध होंगी।

आईआईटी कानपुर द्वारा भारतीय ज्ञान प्रणाली 'अध्ययन केंद्र की स्थापना' के लिए सक्रिय कदम उठाए गए हैं। इसका उद्देश्य, भारतीय ज्ञान परम्परा की जांच करके इसे अकादमिक पाठ्यचर्या, पाठ्यक्रम एवं बहुविषयक शोध परियोजनाओं में प्रभावी रूप से सम्मिलित करना है (कुमार, 2024)। इसी तरह आईआईटी मद्रास में भी भारतीय ज्ञान प्रणाली केंद्र भारत की प्रचुर वैज्ञानिक, तकनीकी और सांस्कृतिक विरासत पर गहन अध्ययन के लिए एक जीवंत केंद्र के रूप में कार्य कर रहा है।

निष्कर्ष

इस प्रकार निष्कर्षत: यह कहा जा सकता है कि भारतीय ज्ञान परम्परा की मूल अवधारणाओं और इससे संबंधित प्रथाओं को उजागर करके, हम उनकी प्रभावशीलता दिखा सकते हैं, और उन पर शोध करने के लिए वैज्ञानिक दृष्टिकोणों का उपयोग करके समकालीन मुद्दों को हल करने में इसे लागू कर सकते हैं। भारतीय ज्ञान परम्परा का उपयोग विभिन्न क्षेत्रों में समकालीन नवाचार को प्रेरित करने के लिए भी किया जा सकता है। तेजी से बदलते प्रौद्योगिकी-संचालित समाज और दुनिया में किसी भी व्यक्ति के लिए जीवन की गुणवत्ता और सामुदायिक कल्याण का अत्यधिक महत्व है। आधुनिक युग में, राल्फ वाल्डो इमर्सन, जोहान वोल्फगैंग वॉन गोएथे, जोहान गॉटफ्रीड हेरडर, कार्ल जुंग, मैक्स मूलर, रॉबर्ट ओपेनहाइमर, एर्विन श्रोडिंगर, आर्थर शोपेनहावर, हेनरी डेविड थोरो जैसे विविध विचारकों व वैज्ञानिकों ने विज्ञान, प्रौद्योगिकी तथा दर्शन में प्राचीन भारतीय उपलब्धियों की महत्व को

पहचाना है। भारतीय ज्ञान प्रणाली दुनिया को ईश्वर की अभिव्यक्ति के रूप में देखती है। प्रकृति के साथ सद्भाव और सामंजस्य से रहने के महत्व पर जोर दिया जाता है। योग और आयुर्वेद जैसे अभ्यास समग्र स्वास्थ्य, प्रकृति और उसके तत्वों के प्रति श्रद्धा व कल्याण पर ध्यान केंद्रित करती है (शुक्ला, 2022)। कुल मिलाकर, प्राचीन भारतीय ज्ञान परम्परा में अंतर्निहित वैज्ञानिक अवधारणाऔं को जब दर्शन और आध्यात्मिकता के साथ एकीकृत किया जाता है, तो वे मानव कल्याण में सुधार के लिए एक समग्र दृष्टिकोण प्रदान करती हैं।

सन्दर्भ

दास, डी. वी. (2022, जून 20). योगा वन ऑफ द मैनी वेज इंडियन कंट्रिब्यूट्स इज टू मेकिंग द वर्ल्ड बेटर प्लेस. द टाइम्स ऑफ इंडिया. https://timesofindia.indiatimes.com/blogs/voices/yoga-one-of-the-many-ways-india-contributes-to-making-the-world-a-better-place/

1. जयंती, एस. (2024). एनशिएंट इंडियन नॉलेज सिस्टम एंड इट्स एप्लीकेशन इन हायर एजुकेशन. *इंटरनेशनल जर्नल ऑफ़ क्रिएटिव रिसर्च थॉट्स, 12*(1), 693–703. https://ijcrt.org/papers/IJCRT2401443.pdf
2. कुमार, एस. (2016). *ड्रॉप्स ऑफ वैदिक नेक्टर*. न्यू देल्ही : डी. के. प्रिंटवर्ड.
3. कुमार, एम. जे. (2024). फॉरेन कनेक्शन्स इंटीग्रेशन इंडियन नॉलेज सिस्टम इन हायर एजुकेशन. *आईईटीई टेक्निकल रिव्यु, 41*(3), 271–273. https://www.tandfonline.com/doi/pdf/02564602.2024.2342625/10.1080
4. मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार. (2020). राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020. https://www.education.gov.in/sites/upload_files/mhrd/files/nep_update/NEP_final_HI_.0pdf
5. नारायण, ए. (1995). मेडिकल साइंस इन एशियंट इंडियन कल्चर विद स्पेशल रेफ्रेंस टू आयुर्वेद. *बुलेटिन ऑफ द इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ हिस्टरी ऑफ मेडिसिन, 25*(2), 100–110. https://snscourseware.org/snsctnew/files/1715328640.pdf
6. नेशनल काउंसिल ऑफ एजुकेशनल रिसर्च एंड ट्रेनिंग. (2023). नेशनल करिकुलम फ्रेमवर्क–स्कूल एजुकेशन 2023. एन.सी.ई.आर.टी., न्यू देल्ही. https://ncert.nic.in/pdf/NCFSE-2023-August_2023.pdf
7. शुक्ला, एस. (2022, जुलाई 22). इन हिंदुइज्म वॉट इज़ द रिलेशनशिप बिटवीन स्पिरिचूऐलिटी एंड हेल्थ? www.hinduamerican.org:https://www.hinduamerican.org/blog/hinduism-and-health
8. तिवारी, एस. (2023). योग इन इंडियन नॉलेज सिस्टम. *नॉलेजबल रिसर्च*, *2*(5), 9–5. https://doi.org/10.57067/kr.v2i1.195
9. येट्स, सी. (2017, सितम्बर 19). द फाइव बिग कंट्रीब्यूशन्स एनीसेंट इंडिया मेड टू द वर्ल्ड ऑफ मैथ. द वायर. https://thewire.in/culture/ancient-india-maths

10. योगिनी, एस. तथा जायसवाल, एल. एल. (2017). ए ग्लिंप्स ऑफ आयुर्वेद आ द फॉर्गाटन हिस्टरी एंड प्रिंसिपल्स ऑफ इंडियन ट्रेडिशनल मेडिसिन. *जर्नल ऑफ ट्रेडिशनल एंड कंप्लीमेंट्री मेडिसिन, 7*(1). 50–53.
https://www.sciencedirect.com/science/article/pii/S2225411016000250?via%3Dihub

मोहिता वर्मा
पी-एच.डी. शोधार्थी (शिक्षाशास्त्र)
शिक्षाशास्त्र विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ
उत्तर प्रदेश) 226007, मोबाईल न. +91-6398273848
ईमेल- mohitavermag@gmail.com

डॉ. नीतू सिंह
एसोसिएट प्रोफेसर
शिक्षाशास्त्र विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ (उत्तर प्रदेश) 226007

जेल रेडियो के जरिए हरियाणा की करनाल जेल में शिक्षा का प्रसार

डॉ. वर्तिका नन्दा

भारत में जेल रेडियो की सुविधा सबसे पहले वर्ष 2013 में तिहाड़ जेल परिसर में शुरू की गई थी।

भारत में जेल रेडियो की सुविधा सर्व प्रथम वर्ष 2013 में तिहाड़ जेल परिसर **में शुरू की गई थी।** जो दक्षिण एशिया का सबसे बड़ा जेल परिसर है। जेल के अंदर संचालित होने वाले ये जेल रेडियो बंदियों के लिए; सूचना, ज्ञान तथा मनोरंजन का साधन है। इसके लिए कार्यक्रम बनाने और रेडियो जॉकी की भूमिका निभाने के लिए बंदियों को ही चुना जाता है। रेडियो के प्रसारण को जेल के अंदर ही सुना जा सकता है। जेल रेडियो के जरिए बंदियों की संचार जरूरत के अनुरूप कार्यक्रम तैयार कर उनके समुचित विकास को सुनिश्चित करने का प्रयास किया जाता है। जेल के रेडियो सार्वजनिक सेवा प्रसारणों के मॉडल पर आधारित हैं।

हरियाणा में जेल रेडियो

हरियाणा की जेलों में रेडियो लाने का काम वर्ष 2020 में आरंभ हुआ। इस राज्य का पहला जेल रेडियो वर्ष 2021 में ज़िला जेल, पानीपत में स्थापित किया गया था। जेल रेडियो के पहले चरण में तीन जेलों; जिला जेल, पानीपत, फरीदाबाद और केंद्रीय जेल, अंबाला को चुना गया। दूसरे चरण में 4 जेलों यथा; जिला जेल रोहतक, करनाल, गुरुग्राम और केंद्रीय जेल हिसार-1 (एक) को चुना गया। तीसरे चरण में; जिला जेल सोनीपत, कुरुक्षेत्र, झज्जर, यमुनानगर, सिरसा और जींद को शामिल किया गया। इस तरह भारत में पहली बार किसी राज्य की जेलों में दो साल के भीतर 20 में से 12 जेलों में रेडियो स्थापित कर दिए गए तथा चार जेलों में रेडियो स्थापित करने की तैयारी की गई। इस प्रकार राज्य की दो तिहाई जेलों में रेडियो स्थापित कर दिए गए।

जिला जेल, करनाल की पृष्ठभूमि

करनाल जेल वर्ष 1870 में बनी जिसे वर्ष 1961 में उप-जेल से जिला जेल में तब्दील किया गया। वर्ष 2004 से यह जेल एक नए जेल भवन में है जिसकी क्षमता 2434 (पुरुष व महिला) बंदियों की है। जेल रेडियो की शुरुआत, 29 अप्रैल, 2021 में की गई और उस समय यहां से हर रोज एक घंटे का प्रसारण होता था। यह अवधि अब बढ़ाकर 8 घंटे कर दी गई है (सुबह 5 घंटे और शाम को 3 घंटे)। वर्ष 2021 में इस जेल से 10 रेडियो जॉकी चयनित किए गए थे।[1] जेल में रेडियो की सक्रियता, उत्साह और उसमें लगातार बदलाव लाने को तैयार रहने की प्रवृत्ति को देखते हुए, जेल रेडियो के जरिए शिक्षा के प्रसार में योगदान को इस आलेख के केंद्र में रखा गया है।

जिला जेल, करनाल में बंदियों की संख्या और आंकड़े

मार्च 31, 2024 तक जेल में कुल 2041 बंदी थे जिसमें से 1986 पुरुष बंदी और 55 महिला बंदी थीं। पुरुष बंदियों में 740 सजायाफ्ता तथा 1246 हवालाती थे और महिला बंदीयों में 16 सजायाफ्ता और 39 हवालाती बंदी थीं। जेल में पुरुषों के लिए कुल 32 बैरक हैं। आलेख में मार्च, 2024 के आंकड़े लिए गए। इस प्रक्रिया को पूरा करने और आंकड़ों के संकलन संबंधित जानकारी प्राप्त करने के लिए जेल प्रशासन से मदद ली गई। इनमें जेल अधीक्षक अमित भादू और उप-अधीक्षक शैलाक्षी भारद्वाज व एक बंदी मनोज (बदला हुआ नाम) की विशेष भूमिका रही।

बंदियों से साक्षात्कार और प्रश्नावली के माध्यम से **मात्रात्मक** और **गुणात्मक** दोनों प्रकार की जानकारी एकत्र की गई। साक्षात्कार के लिए नमूने में केवल उन 100 बंदियों को शामिल किया गया जो मार्च, 2024 के अंत तक जेल

में थे। जानकारी एकत्र करने लिए दो प्रमुख प्रश्न किए गए। बंदियों के बीच शिक्षा फैलाने में जेल रेडियो कितना उपयोगी है और इसे और अधिक प्रभावी कैसे बनाया जाए।

जेलों में शिक्षा के प्रसार को लेकर चुनौतियां

जेल में ज्यादातर बंदी गीत-संगीत और मनोरंजन से जुड़े कार्यक्रम सुनना चाहते हैं। ऐसे में नियमित तौर पर शैक्षिक कार्यक्रमों का प्रसारण करना एक चुनौती है। जेल के बंदियों की शैक्षिक योग्यताएं, रुचियां और प्राथमिकताएं भिन्न भिन्न होती हैं। यहां बंदियों के पास समय बहुतायत में होता है जिसमें में कई बंदी अपने समय का सदुपयोग करना चाहते हैं।

रेडियो का कक्ष पुरुषों की जेल में होने से महिलाओं के क्षेत्र में रेडियो के प्रसारण में तकनीकी दिक्कत आने पर उसकी मरम्मत का काम तुरंत से नहीं हो पाता। इसलिए कि पुरुष कर्मचारियों के लिए भी अनुमति की जरूरत होती है। इससे जेल रेडियो से नियमित तौर पर जुड़कर कुछ सीखते रहने की गति धीमी हो जाती है। महिला अनुभाग में आज भी पुस्तकालय नहीं है जबकि पुरुषों की बैरक में पुस्तकालय का व्यवस्था है। वे जब चाहे किताबें ले सकते हैं लेकिन महिलाओं को किताबें लेने के लिए एक लंबी प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है।

जेल रेडियो का संचालन करने वालों के लिए भी यह एक मुश्किल प्रक्रिया है। मिसाल के तौर पर तिनका तिनका का काम पूरी तरह से अवैतनिक है और समाज के हित में है लेकिन समाज में ऐसे लोग कम मिल पाते हैं जो जेल के लिए अपना समय और संसाधन खर्च करने को तैयार हैं। जेल में पुस्तकालय के लिए किताबें दान करने से भी लोग परहेज करते हैं। समाज चाहता है कि जेल से बाहर निकलने पर बंदी सुधर सुधर जाए, लेकिन वे सुधार की प्रक्रिया में अपना योगदान देना नहीं चाहते।

शिक्षा में रुचि को लेकर प्रवृत्ति

जेल में आए बंदियों में साक्षरता या उच्च शिक्षा को लेकर आमतौर पर यह धारणा होती है-

1. जेल में कुछ बंदी शिक्षित होने के लिए नहीं अपितु समय काटने के लिए पढ़ना चाहते हैं
2. कुछ अपने समय के उपयोग के लिए पढ़ते हैं
3. कई बंदी जेल में अपनी उपयोगिता सिद्ध करने के लिए पढ़ना चाहते हैं
4. कुछ बंदी परिवार और समाज में अपनी बेहतर छवि प्रस्तुत करने के लिए पढ़ते हैं तो
5. कुछ अपना भविष्य बनाने के लिए

जेल के रेडियो के जरिए बंदियों को शिक्षित करने की प्रक्रिया:

जेल के रेडियो के जरिए शिक्षा के उद्देश्य को पूरा करने के लिए कई अनिवार्य आवश्यकताएं हैं जैसे कि

- रेडियो जॉकी का खुद शिक्षित होना
- बंदियों को नियमित तौर से साक्षरता और शिक्षा के लिए प्रोत्साहित करने की क्षमता
- जरूरत के मुताबिक कार्यक्रमों का ढांचा तय करना
- कार्य्रक्रमों में स्पष्टता ,सहजता ,नवीनता ,रचनात्मकता और उचित कठोरता
- ज्ञान और मनोरंजन का उचित सामंजस्य

- ➢ रेडियो जॉकी की योग्यता, आवाज, शैली आत्मविश्वास

जेल रेडियो शिक्षा के प्रचार-प्रसार के लिए निम्नलिखित काम करता है-

- ✔ जेल रेडियो पर शिक्षा संबंधी कार्यक्रम (साक्षरता अभियान से लेकर उच्च शिक्षा तक)
- ✔ निरक्षरों को बेसिक ज्ञान
- ✔ कक्षाओं में समय पर जाने की सूचनाएं
- ✔ पाठ्य-सामग्री की जानकारी
- ✔ परीक्षाओं की जानकारी
- ✔ विषय़ों से संबंधित सलाह

जेल की डिप्टी सुपरिंटेंडेंट शैलाक्षी भारद्वाज बताती हैं *"रेडियो स्टेशन पर विभिन्न कक्षाओं की समय-सारंणी बना कर, हर प्रसारण को उपयोगी बनाया गया ताकि विद्यार्थी विषय को ठीक ढंग से समझ सकें। प्रसारण के प्रत्येक विषय के लिए उप-विषय बनाए गए। शिक्षकों को इसके लिए प्रस्तुतिकरण प्रक्रिया पर प्रशिक्षण दिया गया और तत्पश्चात शैक्षिक प्रसारण हेतु हर उपविषय का कार्यक्रम तैयार किया गया। वक्ता शिक्षक को कार्यक्रम के उद्देश्य, प्रारूप थीम के बारे में तथा संगीत या ध्वनि प्रभावों के सारे प्रयोग के बारे में समझाया गया। इस टीम वर्क में सबकी जिम्मेदारी तय करके फिर इन उपविषयों की रिकार्डिंग की गई। इनमें प्रायोगिक पाठ्यक्रमों को शामिल नहीं किया गया। वस्तुपरक से विषयपरक आधारित प्रसारण किया गया। विशेष ध्यान रखा गया कि शैक्षिक कार्यक्रम मूलत: संगीत कार्यक्रम नहीं है."*

(अप्रैल 2024 में करनाल जेल में लिए गए एक साक्षात्कार का अंश)

बंदियों की भूमिका-जेल रेडियो के जरिए शिक्षा, उसका प्रभाव और परिणाम

जेल में रेडियो का संचालन बंदी ही करते हैं। कार्यक्रमों के चयन, गठन और प्रसारण के लिए बंदियों की टीम रोज जुटती है। जेल प्रशासन का काम; बंदियों का चयन, कार्यक्रमों को लेकर बंदियों को प्रोत्साहित करना तथा जेल के नियमों के मुताबिक कार्यक्रमों का प्रसारण करवाना है। बंदी जेल रेडियो की अहमियत को समझते हैं। इसलिए वे खुद भी जेल रेडियो को जेल समुदाय के लिए उपयोगी बनाए रखने में जुटे रहते हैं।[1]

जेल में रेडियो के द्वारा शिक्षा का प्रसार काफी असरदार ढंग से हुआ है। रेडियो मौखिक परंपरा का वाहक है और भारत वाचिक परंपरा का देश है, इस तरह जेल से रेडियो का प्रसारण करना हमारी परंपरा के अनुकूल है।

"दसवीं, बारहवीं व स्नातक की मार्च 2021, जून, 2021 और सितंबर, 2021 और दिसंबर, 2021 की वार्षिक परीक्षाओं में जेल रेडियो की वजह से इस जेल का शत-प्रतिशत परिणाम रहा है। इसमें जेल रेडियो के शैक्षिक कार्यक्रमों का अहम योगदान है।"

शैलाक्षी भारद्वाज, डिप्टी सुपरिंटेंडेंट, जिला जेल, करनाल

(अप्रैल 2024 में करनाल जेल में लिए गए एक साक्षात्कार का अंश)

अशोक, वीरेंद्र और सोनिया (असली नाम) 2020 से इस जेल रेडियो से जुड़े हुए हैं। सोनिया 19 साल की उम्र में जेल आई और वह करीब 23 साल जेल में गुज़ार चुकी है। वह हरियाणा के तकरीबन सभी जेलों में निरुद्ध रही। इस

समय वह इस जेल में बंदी है। उसका पति भी इस जेल में निरुद्ध है। जेल में आने के बाद धीरे-धीरे उसने खुद को सृजनात्मक कामों में लगाया। जेल में रहते हुए उसने 5 कोर्स किए। अशोक 2010 से इस जेल में आजीवन कारावास की सजा काट रहा है। जेल में रेडियो आने के बाद उसने शिक्षा की मुहिम तेजी़ से चलाई।

“जेल रेडियो का 90 प्रतिशत बंदियों पर सकारात्मक असर पड़ता है क्योंकि यदि हम किसी को बताएंगे नहीं तो उनको पता नहीं लगता लेकिन रेडियो की घोय़णा पूरी जेल में होती है। पूरी जेल में लोग सुनते हैं, अब आज ये पाठ चलेगा। जिसकी भी उनकी रुचि होती है, वो रेडियो की आवाज सुन कर लाइब्रेरी में आ जाता है, स्कूल में आ जाता है। तब उसको हम वहां पर शिक्षित करते हैं ।

रेडियो जॉकी अशोक, जिला जेल, करनाल में निरुद्ध एक बंदी ।[2]

''जेल का रेडियो हमारे लिए किसी जादू से कम नहीं है। इसकी हमारे लिए जो उपयोगिता है, उसे बाहर के लोग कभी भी ठीक से समझ नहीं सकते।''

रेडियो जॉकी वीरेंद्र, जिला जेल, करनाल में निरुद्ध एक बंदी

जेल प्रशासन इस बात की पुष्टि करता है कि जेल के रेडियो ने जेल के सुचारु ढंग से संचालन में भी बहुत कारगर भूमिका निभाई है। अब जेल में बंदियों के खाली समय को बेहतर ढंग से उपयोग का नियमित साधन आ गया है। खुशी की बात यह है कि खुद बंदी जेल रेडियो के प्रसारण समय को बढ़ाने औऱ उसमें अपने विकास के लिए नए तरह के कार्यक्रमों को शुरु करने की मांग करते हैं। ।[3]

''रेडियो की वजह से जेल मे अनुशासन बढ़ा है। शिकायतों में भारी कमी आई है। जेल रेडियो के कारण, सभी व्यस्त हैं। जेल में रेडियो की उपस्थिति ने ऐसा काम किया है जिसकी पहले सिर्फ कल्पना की जा सकती थी। कई ऐसे बंदी, जिनकी पढ़ने में कोई रुचि नहीं थी, वे अब शिक्षित होना चाहते हैं। जेल में हो रहे इन बदलावों को रोज मापा नहीं जा सकता लेकिन इन्हें देखा और महसूस जरूर किया जा सकता है। जेल दौरे पर आने वाले जजों, सेहतकर्मियों और प्रशासकों ने भी इन बदलावों पर गौर किया है। जेल में रेडियो मनोरंजन औऱ शिक्षा के साथ मानसिक सेहत का भी रखवाला बन गया है। हमें और क्या चाहिए।''

शैलाक्षी भारद्वाज, डिप्टी सुपरिटेंडेंट, जिला जेल, करनाल

भाषा संबंधी विषयों का ज्ञान देने में भी रेडियो लाभदायक रहा है। कोरोना महामारी से लेकर जेल की तमाम जरूरी सूचनाओं को बंदियों तक सटीक औऱ सही तरह से पहुंचाने में भी जेल रेडियो अति उपयोगी सिद्ध हुआ है। रेडियो पर स्थानीय कार्यक्रमों और आंचलिक बोलियों में कार्यक्रमों के प्रसारित करने की जमीन तैयार की जा रही है। राष्ट्रीय टीवी चैनलों पर ऐसी स्थानीयता देखने को नहीं मिलती। अतः जो काम मुख्यधारा का टीवी भी नहीं कर पाता, वह इस जेल रेडियो के ज़रिए हो रहा है।[4]

कोविड-19, शिक्षा और जेल का रेडियो: कोविड-19 का जेलों पर भी गहरा असर पड़ा है। जेलों को अपनी कार्यप्रणाली में कई बड़े परिवर्तन करने पड़े। जेलों में मुलाकातें बंद कर दी गईं थीं। तब तक करनाल जेल में रेडियो आ चुका था, फिर कैदियों को इंटरनेट और फोन के जरिए अपने परिवार और शुभचिंतकों से संपर्क करने का मौका मिला। इसी दौरान ऑनलाइन शिक्षा का प्रचलन भी आरंभ हुआ।

"जेलों में इंटरनेट, लैपटाप या कंप्यूटर नहीं होता। ऐसे में डॉ. वर्तिका नन्दा 'द्वारा शुरु किया गया जेल रेडियो बहुत उपयोगी साबित हुआ। इसने बंदियों को अवसाद और अकेलेपन से निकालने में कमाल का काम किया लेकिन यह एक हिस्सा है जो शिक्षा को लेकर बड़ी उपयोगिता थी। इसके बारे में बाहर की दुनिया को अहसास तक नहीं है।"

रेडियो जॉकी अमित, जिला जेल, करनाल में निरुद्ध एक बंदी[5]

जेल रेडियो की उपलब्धियां

वर्ष 2020 से 2024 के अंत तक करनाल जेल का रेडियो एक ठोस परिपाटी बनाने में सफल रहा है। बंदी, सोनिया चौधरी को जेल रेडियो में अथक मेहनत करने के लिए 2021 को जिला जेल, भोपाल में राष्ट्रीय तिनका तिनका बंदिनी अवार्ड से नवाजा गया। यह भारत की जेलों में बंदियों और जेल स्टाफ को दिए जाने वाले इकलौते सम्मान है। जिनकी नींव 2015 में रखी गई थी। मनोज, वीरेंद्र और सोनिया तिनका जेल रेडियो के कई एपिसोड का हिस्सा बने और उनकी आवाज को देशभर की कई जेलों में सुना गया। [6]वर्ष 2021 में जिला जेल, नूंह के उद्घाटन के दौरान एक विशेष सत्र में हरियाणा के मुख्यमंत्री श्री मनोहर लाल खट्टर ने हरियाणा की जेलों में तिनका जेल रेडियो की भूमिका पर विमर्श किया। वर्ष 2023 में बार्सिलोना (स्पेन), 2022 में ओस्लो (नॉर्वे) और 2019 में मैड्रिड (स्पेन) में अंतर्राष्ट्रीय कॉन्फ्रेंस में तिनका जेल रेडियो पर शोध-पत्र प्रस्तुत किए गए। वर्ष 2023 और 2022 में हरियाणा के जेल रेडियो पर बने पॉडकास्ट को राष्ट्रीय लाडली मीडिया और विज्ञापन पुरस्कारों में वेब-पॉडकास्ट की श्रेणी में सम्मानित किया गया। जिला जेल, करनाल के बंदियों की कविताओं और जेल रेडियो पर उनके अनुभवों पर पुस्तक के प्रकाशन पर काम भी हो रहा है।

नेशनल बुक ट्रस्ट से 2024 में रेडियो इन प्रिजन शीर्षक से पुस्तक प्रकाशित हुई है जिसमें करनाल जेल के रेडियो और बंदियों की भूमिका का विशेष उल्लेख है।[7] महिला जेल की दीवार पर इस आलेख की लेखिका की एक किताब-थी..हूं..रहूंगी...के कवर को पेंट किया गया। इससे महिला बंदियों को हिन्दी साहित्य से जुड़े रहने की प्रेरणा मिली। इसी शीर्षक से आरंभ की गई पॉडकास्ट सीरीज के तीसरे अंक में सोनिया चौधरी का इंटरव्यू प्रकाशित किया गया जिसमें उसने जेल रेडियो की वजह से उसके जीवन में आए सकारात्मक बदलावों की विवेचना की।[8,9]

सुझाव

जेल में रेडियो शिक्षा का प्रसार; निरक्षरों को साक्षर बनाने का सशक्त माध्यम साबित हो सकता है। देश की सभी जेल में रेडियो की स्थापना की जाए। जेल रेडियो पर शैक्षिक कार्यक्रमों का प्रसारण बढ़ाया जाय और नियमित किया जाए। जेल रेडियो में महिला बंदियों की भागीदारी बढ़ाई जाय, एक सशक्त पुस्तकालय बनाया जाए, बंदियों को शिक्षित करने में मदद कर रहे दूसरे बंदियों को विशेष रूप से प्रोत्साहित किया जाए। जेल रेडियो और शैक्षणिक प्रयासों को भारत सरकार की कारागार सांख्यिकी में शामिल किया जाए। इसके साथ ही यूजीसी के रिकॉर्ड किए गए कार्यक्रमों का भी प्रसारण किया जाए।

निष्कर्ष:

रेडियो, जेलों में शिक्षा का एक सशक्त, प्रभावी, सस्ता, सुलभ, उपयुक्त और रचनात्मक माध्यम बन सकता है। इसके जरिए बंदियों को बैरकों में ही पढाया जा सकता है। उनको शिक्षित किया जा सकता है। इससे अपराध में कमी आने की संभावना बढ़ेगी। जेल में समय का सही उपयोग होगा। जेल में हिंसा और अनुशासनहीनता कम होगी। बंदियों

को कौशल प्राप्त होगा। जेल से बाहर जाने पर नौकरी/रोजगार मिलने की संभावनाएं बढ़ जाएगी और जेल वास्तव में सुधार-गृह बन सकता है।

संदर्भ:

1. तिनका तिनका जेल रेडियो:यूट्यूब: एपिसोड 11: होली और करनाल जेल रेडियो: 2021 ,मार्च 29
2. यूट्यूब पर तिनका जेल रेडियो: बंदी अशोक कुमार के साथ वर्तिका नन्दा की विस्तृत बातचीत: एपिसोड 86: 27 April, 2024
3. तिनका तिनका जेल रेडियो:यूट्यूब: एपिसोड 23: रेडियो प्रसारण दिवस: 23 जुलाई, 2021
4. करनाल जेल रेडियो: तिनका प्रिजन रिसर्च सेल: एबीपी न्यूज: 24 मई, 2024
5. रेडियो के जरिए जेल में शिक्षा की अलख: दैनिक ट्रिब्यून: 22 अगस्त, 2024
6. तिनका तिनका प्रिजन रिसर्च सेल
7. रेडियो इन प्रिजन: नेशनल बुक ट्रस्ट: 2024
8. थी.हूं..रहूंगी: यूट्यूब: जेल से सोनिया चौधरी का इंटरव्यू:18 जून, 2024
9. जेल से सोनिया चौधरी:यूट्यूब: तिनका जेल बाइट: 13 मार्च, 2021
10. तिनका तिनका जेल रेडियो:यूट्यूब: एपिसोड 34: हरियाणा की जेलों का एक साल: 16 जनवरी, 2022
11. हरियाणा जेल की वेबसाइट
12. "Study of the condition of women inmates and their children in Indian prisons & their communication needs with special reference to Uttar Pradesh": ICSSR: Vartika Nanda: 2019-2020

डॉ. वर्तिका नन्दा

(एसोसिएट प्रोफेसर एवं प्रमुख, पत्रकारिता विभाग

लेडी श्रीराम कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय

vartikalsr@gmail.com

कंजर समाज और उसका सामाजिक दस्तावेज

('रेत' उपन्यास के विशेष सन्दर्भ में)

डा. हरीश कुमार

हिन्दी उपन्यास लेखन में अपनी विशिष्ट और देशज छवि के कारण भगवानदास मोरवाल का साहित्य में अपना अलग स्थान है। उन्होंने अपने उपन्यासों में आंचलिकता को विविध पहलुओं के साथ उकेरा है, ऐसे ही विषय को लेकर 2008 में उनका 'रेत' उपन्यास प्रकाशित होता है। यह उपन्यास 'कंजर जनजाति को केन्द्र में रखकर लिखा गया है। 'रेत' उपन्यास हरियाणा राज्य के एक गाँव 'गाजूकी' को केन्द्र में रखकर लिखा गया है। इसी गाँव के बीच में 'कमला सदन' स्थित है। इस सदन के माध्यम से उपन्यासकार ने समूचे 'कंजर' समाज का रहन-सहन, उनके सामाजिक ताना-बाना का यथार्थ चित्रण किया है।

उपन्यासकार ने गाजू की गाँव के कमला सदन के माध्यम से कंजर जनजाति के लोक विश्वासों व लोकाचारों की धुरी पर अपने अस्तित्व और अस्मिता के लिए जूझने के संघर्ष का चित्रण किया है। इस उपेक्षित जनजाति की महिलाएँ वैश्यावृत्ति तथा पुरुष शराब (कंजर व्हिस्की) के व्यवसाय करके अपना जीवन-यापन करते हैं। यह एक स्त्री प्रधान जनजाति है। ''कंजर जनजाति की अधिकांश स्त्रियाँ वेश्यावृत्ति अपनाकर अपना जीवन यापन करती हैं।''[1] परिवार की लड़कियाँ जो देह व्यवसाय अपनाती हैं वे 'बुआ कहलाती हैं तथा शादी कर इनके घर आती है, जो इस घर की बहु है वह 'बुआऔं' की सेवा-चाकरी का कार्य करती है उसे 'भाभी' कहते है। कमल सदन में बुआ और भाभी दोनों पर कमला बुआ का वर्चस्व रहता है। उसी की देख-रेख में परिवार की अन्य युवतियाँ देह व्यापार करती हैं। इस समाज में वेश्यावृत्ति के जरिए बुआ बनना प्रतिष्ठा का प्रतीक माना जाता है। उनके पैसों से वे ऐशो-आराम की जिन्दगी जीती हैं। उपन्यास की पात्र सुशीला बुआ अपनी पोती पिंकी को इस दलदल से बाहर निकालकर डॉक्टर बनाना चाहती है। दूसरी ओर किशोरी पिंकी अपने परिवार की बुआओं की स्थिति की तुलना अपनी माँ संतो जो भाभी है से तुलना करती है तो वह बुआ बनना अधिक पसदं करती है। रुक्मिणी द्वारा पिंकी को यह पूछे जाने पर कि वह डॉक्टर बनेगी, टीचर बनेगी या बुआ? पिंकी पूरे आत्मविश्वास के साथ उत्तर होती है-'मैं तो बुआ बनूंगी'[2] पिंकी के इस उत्तर से सबको हैरानी होती है। उसको एक थप्पड़ भी पड़ता है। कंजर समाज की स्त्रियाँ अपने यहाँ फैले हुए दलदल से भली भाँति परिचित भी हैं और आने वाली पीढ़ी को दूर भी करना चाहती है। पिंकी वैद्यजी से अपने उत्तर की पुष्टि करने के लिए कहती है-''बुआ रोज अच्छे-अच्छे कपड़े पहनती हैं। लेटकर टीवी देखती हैं और बुआ के पास जो अंकल आते हैं ना, वो कितना रुपया देकर जाते हैं।''[3]

यह देह व्यवसाय भले ही स्त्री की दयनीय दशा और भोग्या रूप को ही सामने ला रहा लेकिन यह इनकी आजीविका का स्रोत है। इनसे ही अधिक दुर्गति कंजर समाज में उस स्त्री की होती है, जो विवाह करके 'भाभी' बन जाती है। कमला बुआ वैद्यजी से संतो के 'भाभी' बनने को निर्णय पर अफसोस जताते हुए कहती है-''क्या मिला है ब्याह करके। जिंदगी भर खसम और औलाद के साथ-साथ भाभी बन सास नन्दो की चाकरी ही तो करनी पड़ती पड़ती है। मरी, बुआ बनी रहती तो उमर भर मजे करती....पता नहीं, इस मरीने क्या सोच के भाभी बनने का फैसला किया वरन् बुआ बनके उमर भर रानी बनी रहती।'[4]

कंजर समाज की इस स्थिति के लिए वे खुद तो जिम्मेदार है ही कमोवेश प्रशासन भी जिम्मेदार है। ब्रिटिश शासन के आपराधिक जनजाति अधिनियम, वर्ष 1971 में संशोधन करके उसे 1924 में अधिक कठोर बना दिया गया। हालाँकि आजादी के बाद उसे हटा दिया गया, किंतु इन सूचीबद्ध जनजातियों से यह कलंक आज तक नहीं धुल पाया है। आज तथाकथित जनसेवक, प्रशासक, पुलिस प्रशासन उसी नजर इन्हें देखते हैं और इनका शोषण

करते हैं। कानून व्यवस्था बनाए रखने के नाम पर खाकी वर्दी के आड़ में छिपे लोग, खुद को संभ्रांत समझने वाले किस तरह कंजरियों का शारीरिक शोषण करते हैं? पुलिस वाले किस तरह रात-बेरात, समय-असमय कंजरों के घर छापे मारकर पूछताछ के बहाने कंजर पुरुषों और महिलाओं को थाने में बुलाते हैं; वे उन्हें जबरन ले जाते हैं तो कभी कंजर पुरुषों पर मुकदमे दर्ज करने की धमकी देकर कंजरियों के साथ हमबिस्तर होने की मांग करते हैं। जिसका यथार्थ चित्रण इस उपन्यास में किया गया है। ‘‘पर साहब तो हवालात में डालने की बात ही नहीं कर रहे हैं। उन्होंने तो आपको जमानत के लिए बुलाया है। हम सब समझती हैं कौनसी जमानत के लिए बुलाया है? एक ही रास्ता है कस्तूरी! अब चाहे तुम इसे साहब की शर्म समझ लो या उसकी पॉवर पर बता तो सही वह है क्या? बचनों की धड़कने तेज हो उठी।...रास्ता यह है यह है कि...।[5] अब आप इसे साहब की शर्म समझें या उनकी ताकत, बताइए क्या है?

जब सावित्री के माध्यम से धोखे से नेता मुरली बाबू रुक्मिणी को उसकी इच्छा के विरुद्ध दैहिक क्रीडा के लिए जब मजबूर करता, तब रुक्मिणी इसका विरोध करती है। ‘‘बाबू सा! आपने मुझे आज कपट से बुलाया है। आपकी नीयत में खोट है। अगर आप मुझे रुक्मिणी खिलावड़ी की तरह बुलवाते, तो मैं खुद ही दौड़ी चली आती क्योंकि यह तो मेरा धन्धा है...और धंधा करने वाली के लिए मेहनत-मजदूरी करने वाला भी ग्राहक है, आप जैसा इज्जत आबरू वाला भी।[6] लेकिन जब मुरली बाबू अपने वहशीयानापन पर उतर आता है तो रुक्मिणी अपनी इच्छा के विरुद्ध इस कपट जंग में हार नहीं मानती और अंततः मुरली के पेट में काँच की बोतल घुसेड़ कर उसे जख्मी कर देती है।

अब तक जो स्त्रियाँ वेश्यावृत्ति में लिप्त वे अपना सामान तैयार करके शहर में बैचने लगी हैं। ‘‘यह सच होते उन्हीं सपनों में से पहला सपना था कि इधर सभा द्वारा निर्मित वस्तुओं की गुणवत्ता और दिनों-दिन बढ़ती उसकी लोकप्रियता ने सभा का नाम कुछ ही दिनों में देश की अग्रणी स्वैच्छिक संगठनों की सूची मे शामिल कर दिया, तो दूसरी ओर रुक्मिणी का नाम एक जानी-मानी समाज सेविका के रूप में सम्मान से लिया जाने लगा।’[7]

‘विधायक निवास के जिन कमरों में रुक्मिणी ने सबके ठहरने की व्यवस्था कराई, उनमें मौजूद सुविधाओं को देख सबकी आँखें खुली की खुली रह गई। सब एक जैसे रोमांच से सराबोर थे जिसकी उनमें से किसी ने कल्पना भी नहीं की थी। शायद रुक्मिणी इसी रोमांच का अनुभव कराने के लिए तो इन्हें साथ लाई थी। वैद्यजी मन ही मन सोचने लगा कि यह रुम्मिणी की साधना का ही प्रतिफल है, जिसने इन्हें आत्मसम्मान, नई स्फूर्ति, नई ऊर्जा, नया उत्साह प्रदान किया है।'[8] यह समानता, नई ऊर्जा का संचार तथाकथित सभ्य समाज को भला कैसे स्वीकार हो सकता है? तथाकथित इज्जतदार समाज सदियों से अपने द्वारा किए गए अत्याचारों, भेदभाव, धोखधड़ी को भूलकर इन उपेक्षित लोगों का राजनीति में आने को धोखाधड़ी मानता है। उन्हें भला कैसे स्वीकार हो सकता है कि ये असामाजिक लोग हमारे जैसे सफेदपोश लोगों का नेतृत्व करेंगे। उपन्यासकार ने सभ्य कहलाने वाले इन लोगों की घृणित मानसिकता को भी उजागर किया है।

उपन्यासकार ने सभ्य कहलाने वाले लोगों की घृणित मानसिकता को भी उजागर किया है। ‘‘क्या रुक्मिणी कंजर?

- कंजर मायने चोर डकैत?
- जिनकी औरतें धंधा करती हैं, वही
- फिर तो यह भी राम...राम...राम।
- कैसा समय आ गया गया है, चोरी चकारी करने वाले

- अब हमारे रहनुमा हम पर बनेंगे...हम पर हुकम करेंगे।
- लो हो गया बंटाधार...मोरों की रखवाली अब चोर करेंगे।'[9]

उपरोक्त विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि भगवान दास मोरवाल ने 'रेत' उपन्यास के माध्यम से कंजर समाज के आंतरिक एवं बाह्य दोनों पक्षों को उजागर करने के साथ-साथ उनके शोषण एवं संघर्ष की यथार्थ अभिव्यक्ति की है।

संदर्भ सूची

1. भगवान दास मोरवाल, 2013, रेत (उपन्यास) राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, पेपर बैंक पहला संस्करण), पृष्ठ सं. 28

2. वही उपरोक्त संदर्भ पृष्ठ सं. 11

3. उपरोक्त जैसा ही संदर्भ पृष्ठ सं. 12

4. उपरोक्त जैसा ही संदर्भ पृष्ठ सं. 22.23

5. उपरोक्त जैसा ही संदर्भ पृष्ठ सं. 55..56

6. उपरोक्त जैसा ही संदर्भ पृष्ठ सं. 194

7. उपरोक्त जैसा ही संदर्भ पृष्ठ सं. 245

8. उपरोक्त जैसा ही संदर्भ पृष्ठ सं. 311

9. उपरोक्त जैसा ही संदर्भ पृष्ठ सं. 310

डॉ. हरीश कुमार
पता: ख्वाजा गरीब नवाज
महाविद्यालय,
खारची, रामसर, बाड़मेर
मा. 9414213385

बदलते परिवेश में तुलसीदास के शैक्षिक मूल्यों की उपादेयता

डॉ. शीतल

तुलसीदास मध्यकालीन सगुण रामकाव्य धारा के प्रतिनिधि कवि हैं। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जी का कथन है कि ''जिस समय तुलसीदास का जन्म हुआ था, उस समय के समाज के आगे ऊँचा आदर्श नहीं था। समाज के उच्च स्तर के लोग विलासिता के पंक में उसी प्रकार मग्न थे जिस प्रकार उन्हें कुछ वर्ष पूर्व सूरदास ने देखा था। निचले स्तर के लोग अर्थात् स्त्री-पुरुष दरिद्र, अशिक्षित और रोगग्रस्त थे। वैरागी हो जाना मामूली बात थी, जिसके घर की संपत्ति नष्ट हो गई थी, स्त्री मर गई, संसार में कोई आकर्षण नहीं रहा, वह संयासी हो गया।.... सारा देश विश्रृंखल, परस्पर विच्छिन्न आदर्शहीन और बिना लक्ष्य का हो रहा था। ऐसे समय में एक ऐसी आत्मा की आवश्यकता थी जो इसे परस्पर स्थापित करे। तुलसीदास का आर्विभाव ऐसे ही समय में हुआ।''[1]

तुलसी जी ने भारतीय समाज को संस्कृति से जुड़कर लोक का हित करना चाहा। राम को मर्यादा पुरुषोत्तम के रूप में स्थापित किया। आदर्श पुत्र, आदर्श भाई, आदर्श पति, आदर्श स्वामी और राम जैसा आदर्श पति बनाने में गुरु की शिक्षा की प्रमुख भूमिका है। आज के दौर में पिता की संपत्ति के लिए भाई भाई का दुश्मन हो जाता है। लेकिन राम जैसा आदर्श भाई पिता की आज्ञा का पालन के लिए राज्य छोड़कर वन चला जाता है तो भरत जैसा भाई पिता द्वारा दिए राज्य स्वीकार नहीं करता। तुलसीदास जी द्वारा प्रतिपादित शैक्षिक मूल्य मानव एवं समाज के उत्थान का प्रयास करते हैं। इसके लिए उन्होंने गुरु की महिमा का वर्णन किया है। तुलसी के अंतःकरण को अपने युग में व्याप्त आडंबरों के कारण बहुत ठेस पहुंची थी। इसलिए उन्होंने गुरु को भवसागर से पार उतारने वाला कहा है। तुलसी ने कहा कि शिव, ब्रह्मा आदि भी गुरु के बिना भवसागर को पार नहीं कर सकते।

गुरु बिन भवनिधि तरिय न कोई, जो बिरंचि संकर समहोई। [2]

गुरु के बिना ज्ञान और भक्ति की प्राप्ति संभव नहीं है। गुरु अज्ञान के अंधकार को मिटाकर सूर्य की किरणों के समान जीवन को प्रकाशित करके हमें पथभ्रष्ट होने से बचाते हैं। रामचरितमानस के अनेक प्रसंगों में विविध पात्रों माध्यम से गुरु की महिमा का वर्णन किया गया है। तुलसी जी की सभी रचनाओं में गुरु की वंदना भी पूजा ईश्वर के साथ की गई है। गुरु के प्रति शिष्य का कर्तव्य है यह कि गुरु द्वारा प्राप्त ज्ञान को आचरण में उतारना है। विद्यार्थी की पहली शिक्षा उसके घर से ही आरंभ होती है। घर में माता-पिता उसके प्रथम गुरु होते हैं। इसलिए तुलसी ने गुरु के साथ-साथ माता-पिता द्वारा दी गई शिक्षा को भी महत्व दिया। गुरु, माता-पिता और गुरु की शिक्षा के अनुसार आचरण करने में ही जीवन की सार्थकता है। शिक्षा का महत्व राम के आचरण में दृष्टिगोचर होता हैः

मातु पिता गुरु स्वामि सिख सिर धरि करहिं सुभाय ।
लहैउ लाभु तिन्ह जनम कर नतरू जनमु जग जाय।।''[3]

शिक्षित मनुष्य ही बेहतर समाज का निर्माण कर सकता है। तुलसी जी के समय का समाज सामंतवादी था जिसकी दशा दयनीय थी। इसलिए तुलसी जी ने 'राम-राज्य' की कल्पना की और उसे आदर्श राज्य माना। जिसमें कोई भय या शोक न हो और लोग अपने अपने धर्मों का पालन करें।

चारों आश्रमों की शिक्षा देने के साथ-साथ तुलसी जी ने आदर्श परिवार की भी शिक्षा दी है। आदर्श पुत्र के रूप में राम, आदर्श भाई के रूप में भरत तथा लक्ष्मण, एक पत्नी व्रत के रूप में राम, राम-सीता के द्वारा दाम्पत्य प्रेम पारिवारिक जीवन के आदर्श है। व्यावहारिक जीवन में अच्छे मित्र की आवश्यकता पर बल दिया गया है। जिसे सुग्रीव और राम की मित्रता द्वारा चित्रित किया गया है। समाज में व्याप्त काम, क्रोध, मद, लोभ तथा व्यर्थ का दिखावा दिखाने वालों को अनुचित कहा गया है। तुलसी का मानना है कि पारिवारिक संबंधों की मर्यादा ही सामाजिक कल्याण का आधार है, तभी आदर्श समाज की स्थापना हो सकती है।

तुलसीदास ने सामाजिक-राजनीतिक आदर्शों की स्थापना की है। रामचरितमानस के माध्यम से तुलसीदास ने राजनीतिक शिक्षा देने का प्रयास किया है। रामराज्य में राजा अपनी प्रजा से अपने प्राणों से भी अधिक प्रेम करता था और प्रजा भी अपने राजा की आज्ञा का पालन करती थी। एक विवेकशील और दूरदर्शी मंत्री प्रशासन चलाने में राजा की सहायता कर सकता है। रामराज्य में सर्वत्र प्रेम था। बड़े-छोटे, अमीर-गरीब में कोई द्वेष नहीं था। सर्वत्र समानता का भाव था। तुलसी जी ने भरत के राजसिंहासन त्याग का भी वर्णन किया है। रावण जैसे राजा के माध्यम से उन्होंने यह शिक्षा दी है कि राजा को कभी अहंकार नहीं करना चाहिए। राजा का कर्तव्य है कि वह अपने पास शरण में आए लोगों की सदैव रक्षा करे।

तुलसीदास जी ने व्यवस्थित समाज की स्थापना के लिए नैतिक आचरण के आदर्श पर जोर दिया है। उनके संपूर्ण साहित्य में सत्य को सबसे बड़ा धर्म और तप माना गया है। उन्होंने कर्म की प्रधानता स्वीकार की और सद्बुद्धि को नैतिकता का आधार माना। जिसके पास सद्बुद्धि होगी, उसका हृदय भी शुद्ध होगा। नैतिक आचरण हृदय में परोपकार की भावना जागृत करता है। इसलिए तुलसी जी ने मन, कर्म और वचन से परोपकार करने पर जोर दिया है। सत्य, अहिंसा, धैर्य, दया, क्षमा, शील नैतिकता के आधार हैं।

"गोस्वामी जी जिस तरह के नैतिक मूल्यों का निर्माण कर रहे थे उनमें इनका पूर्ण त्याग नहीं था, न ही उनकी पूर्ण स्वीकृति थी। मर्यादा में रहकर ही वे नैतिक मूल्य बनते हैं।"[4]

तुलसी जी ने राम को मर्यादा पुरुषोत्तम कहकर लोक आचरण में तीन प्रकार के आचरणों पर बल दिया है- व्यक्तिगत आचरण, पारिवारिक आचरण और सामाजिक आचरण। व्यक्तिगत आचरण में ; शरीर, मन और आचरण की पवित्रता आवश्यक है। पारिवारिक परिवेश में पिता-पुत्र, पति-पत्नी, माता-पिता, गुरु-शिष्य, सेवक-स्वामी के लिए पृथक पृथकआचरण और कर्तव्य बताए गए हैं। सामाजिक आचरण में लोक कल्याण और समाज में मर्यादित आचरण से लोक कल्याण की भावना दर्शाई गई है।

तुलसीदास जी ने ईश्वर को सर्वोपरि मानकर भक्ति द्वारा ईश्वर को प्राप्त करने की आध्यात्मिक शिक्षा दी है। भक्ति का मूल आधार ईश्वर के प्रति श्रद्धा और विश्वास है।

"श्रद्धा बिना धर्म नहिं होई, बिनु महि गन्ध की पावै कोई।।"[5]

उन्होंने नवधा भक्ति (श्रवण, कीर्तन, स्मरण, पादसेवन, अर्चन, वंदन, दास्य, सख्य, आत्म निवेदन) के द्वारा ईश्वर को प्राप्त करने की शिक्षा दी है। गुरु ही ईश्वर को प्राप्त करने का माध्यम है। भक्ति के लिए भाव की आवश्यकता होती है। जिसे तुलसी जी ने शबरी और भुशुण्डि के द्वारा दिखाया है। उन्होंने स्वयं को भगवान के समक्ष गुणहीन, छोटा, मलिन दीन कहकर शरणागति की प्रार्थना की है। विनय पत्रिका में इन्होंने सत्संग के महत्व को बताया है कि सत्संग ईश्वर की कृपा से ही प्राप्त होता है।

"जब द्रवै दीनदयालु राघव साधु संगति पाईये ।

जहि दरस परस समागमादिक पाप-रासि नसाईये।।"[6]

तुलसी जी की अध्यात्मिक शिक्षा राम में प्रीति रखना और उनके ही ध्यान पर केन्द्रित है। उन्होंने राम को ब्रह्म माना है। और उनकी प्राप्ति ही उनके जीवन का लक्ष्य है। तुलसीदास जी ने जीवन में अनुशासन को अत्यधिक महत्व दिया। माता-पिता और गुरु की आज्ञा को मानकर उनके अनुसार जीवन को नियमबद्ध चलाना ही अनुशासन माना गया है। राम द्वारा गुरु की आज्ञा का पालन करना, भरत और लक्ष्मण द्वारा भाई की आज्ञा का पालन करना अनुशासन ही है। जिसका जीवन को सफल बनाने में बहुत योगदान होता है।

तुलसी जी के समय में नारी की दशा अत्यंत दीन थी। इसलिए उन्होने अपने युग की स्थिति तथा विचारधारा के अनुसार नारी का चित्रण किया है। तुलसी जी ने नारी को वही शिक्षा दी जो प्राचीन भारत में चली आ रही थी। उन्होंने स्त्री को पतिव्रत धर्म का पालन करने की शिक्षा दी है। पार्वती, अनुसूइया, कौशल्या, सीता, सुमित्रा, शबरी, ग्राम वधू आदि के माध्यम से नारी जाति का सम्मान किया है। कुछ आलोचकों ने तुलसी जी के स्त्री संबंधी विचारों की आलोचना की है। किन्तु तुलसी जी ने नारी के प्रबल रूप की प्रशंसा भी की है। वे कहते हैं कि अबला कहलाने वाली नारी भी कितनी प्रबल हो सकती है यह कहना कठिन है:

"काह न पावक जारि सक का न समुह समाई,

का न करैअबला प्रबल केहि जगकाल न खाई।।"[7]

उन्होंने नारी के मायावी रूप की निंदा की है। तुलसी जी नीतिज्ञ पुरुष होने के कारण नारी के सगुण रूप को समाज संचालन के लिए आवश्यक मानते थे। वे स्त्री विरोधी नहीं है बल्कि मध्यकालीन अन्य काव्य ग्रंथो की तुलना में तुलसीदास जी के यहाँ नारी की स्थिति कुछ बेहतर है। वस्तुतः तुलसीदास जी के काव्य में नारी की स्थिति अन्य मध्यकालीन काव्य ग्रंथों की अपेक्षा बहुत बेहतर है।

तुलसीदास ने अपने विचार अवधि भाषा में व्यक्त किए। कुछ रचनाओं में ब्रजभाषा का भी प्रयोग मिलता है क्योकि उनका मानना है कि जनभाषा ही अपनी बात को समझाने का सशक्त माध्यम है। अवधि भाषा में लिखने पर उनका विरोध हुआ लेकिन उन्होंने जन जन के मन में व्याप्त राम की अभिव्यक्ति जनभाषा में ही की।

तुलसी जी ने जहां आदर्श समाज की स्थापना की। सभी के लिए समानता की बात की। वहां धन पर आधारित इस शिक्षा पद्धति ने अमीर और गरीब के बीच की खाई को और बढ़ा दिया। अच्छी शिक्षा के अभाव में राजद्रोही और उग्रवादी होता जा रहा है। भ्रष्टाचार की समस्या बढ़ती जा रही है। आदर्श समाज मूल्यहीन बनता जा रहा है। ऐसी स्थिति से निपटने के लिए राम जैसे आदर्श राजा को सामने आना होगा। इन बातों का अभाव पहले ही संत कवियों को था तभी तो तुलसीदास जी ने कहा था -

"सोई समान जो परधन हारी। जो कर दंभ सो बड़ आचारी।

जो कह झूंठ जो मसखरी जाना। कलिजुग सोई गुनवंत बखाना।।"8

तुलसी जी द्वारा दी गई नैतिक शिक्षा बस किताबों में बंद होकर कर रह गई है। नैतिक पतन के कारण जीवन भी अनैतिक हो गया तथा सभ्य के स्थान पर मनुष्य असभ्य हो गया है। उनमें सुधार तभी संभव है जब शिक्षा में सुधार हो। सही शिक्षा मानसिकता में भी परिवर्तन ला सकती है। कबीर और तुलसी के साहित्य का प्रचार प्रसार आज के जनमानस के लिए बहुत आवश्यक हो गया है। नैतिक शिक्षा के अभाव में मनुष्य दिग्भ्रान्त हो गया है। व्यक्ति नैतिक न हो तो आदर्श समाज की स्थापना कैसे हो सकती है? लोक मर्यादा की बात करें तो: मनुष्य न तो व्यक्तिगत स्तर पर न पारिवारिक स्तर पर और न ही सामाजिक स्तर पर मर्यादित आचरण कर रहा है। शिक्षा पद्धति ही मर्यादा व अध्यात्म से दूर कर रही है क्योकि उस पर पाश्चात्य शिक्षा पद्धति का प्रभाव है। तुलसी जी ने सदैव दोनों धर्मों को मिलाने की बात कही किन्तु आज वैचारिक मतभेद के कारण दोनों धर्म आपस में लड़ने लगे है और धर्म ही मनुष्य मनुष्य बीच खाई पैदा करने का सशक्त माध्यम बन गया है। कबीर ने सारा जीवन लोगों को यही समझाने में लगा दिया-

"हिन्दू तुरुक की एक राह है, सद्गुरु रहे बताई।

कहै कबीर सुनो हो संतों, राम न कहेउ खोदाई।।"[9]

तुलसी का आदर्श परिवार आज भी समस्त विडंबनाओं, कुटिलता, अवसाद, पीड़ा, असंतोष आदि की रामबाण औषधि है। लोक कल्याण की दृष्टि से तुलसी जी का काव्य अत्यंत उपयोगी है। वे भारतीय संस्कृति के लोकनायक कहे जाते हैं। आज भी उनका साहित्य जनमानस में आदर्श और सांस्कृतिक मूल्यों को सहेजे हुए है।

वास्तव में आज की शिक्षा पद्धति (राष्ट्रीय नई शिक्षा नीति) में मूल्य वर्धित पाठ्क्रम जोड़कर छात्रों में मानवीय एवं चारित्रिक निर्माण पर बल दिया जा रहा है। रोजगार कौशल में सुधार करने के लिए उनके अंतः करण कौशल विकसित करने का अवसर दिया जा रहा है। मनुष्य में शैक्षिक मूल्यों के प्रति आस्था जागृत करने का प्रयास किया जा रहा है। नैतिक शिक्षा के पाठ्यक्रम से नैतिक मूल्यों का विकास हो सकता है। तुलसी जी द्वारा प्रदत्त सामाजिक उत्थान संबंधी मूल्यों को अपनाकर सभ्य एवं सुसंस्कृत समाज की स्थापना हो सकती है। मानवीय मूल्यों को विकसित करने में मदद मिल सकती है। अतः तुलसी द्वारा प्रतिपादित शैक्षणिक मूल्य आज के युग में मानव के बहुमुखी विकास में सहायक हो सकते हैं।

संदर्भ ग्रंथ

1. डॉ. मालती दुबे, डॉ. रामगोपाल सिंह, तुलसी के काव्यादर्श - सं. पार्श्व प्रकाशन ,अहमदाबाद , पृ. सं. 200
2. गोस्वामी तुलसीदास: रामचरित मानस, उत्तरकाण्ड, दोहा 93, चौपाई 5, गीताप्रेस गोरखपुर
3. गोस्वामी तुलसीदास: रामचरितमानस, अयोध्याकांड, दोहा 70, गीताप्रेस गोरखपुर
4. तुलसीदास एक विश्लेषण - डॉ. रामविलास शर्मा, पृ. सं. 12,
5. गोस्वामी तुलसीदास - रामचरितमानस, उत्तरकाण्ड, दोहा 90 चौपाई, गीताप्रेस गोरखपुर

6. गोस्वामी तुलसीदास: विनय पत्रिका, पद 136

7. गोस्वामी तुलसीदास: रामचरितमानस, अयोध्याकाण्ड, दोहा 47, गीताप्रेस गोरखपुर

8. गोस्वामी तुलसीदास: रामचरितमानस दोहा, 97, गीताप्रेस गोरखपुर

9. डॉ. सुशीला सिन्हा, लौह पुरुष कबीर - पृ. सं. 177, प्रथम संस्करण 2001 संजय प्रकाशन, दिल्ली

डॉ. शीतल
असिस्टेंट प्रोफेसर
विवेकानंद महाविद्यालय, दिल्ली
विश्वविद्यालय

यौन हिंसा और वैवाहिक बलात्कार के संबंध में सामाजिक एवं कानूनी वर्जनाएँ

सत्येन्द्र कुमार पाण्डेय, शोधार्थी
डॉ. हिमानी बिष्ट, सहायक प्रोफेसर

विवाह के भीतर यौन हिंसा, विशेष रूप से वैवाहिक बलात्कार के रूप में, भारतीय समाज में दुर्व्यवहार के सबसे व्यापक लेकिन अनदेखे रूपों में से एक है। (नाथ ए. 2024, पृ. 62)[1]। जबकि लोगों ने हाल के दशकों में घरेलू हिंसा और महिलाओं के अधिकारों के मामलों पर अधिक ध्यान दिया है। वैवाहिक बलात्कार का सवाल अभी भी सामाजिक वर्जनाओं और मानदंडों में घिरा हुआ है। यह चुप्पी भारतीय विवाहों की लगातार स्त्री द्वेष की वजह से है जो अक्सर महिलाओं को अधीनस्थ और कर्तव्य और सम्मान की पारंपरिक अवधारणाओं को बनाए रखने के रूप में रखती है। इस गतिशीलता के व्यवस्थित सामान्यीकरण से वैवाहिक बलात्कार के अस्तित्व को चुनौती देना बेहद मुश्किल हो जाता है। क्योंकि इस कृत्य को शायद ही कभी सहमति के उल्लंघन के रूप में स्वीकार किया जाता है (वाइसमैन एम 2007, पृ. 387)[2]। पत्नी को उसकी सहमति के बिना उसके पति के साथ यौन क्रियाकलाप में शामिल होने के लिए मजबूर करने के कृत्य को वैवाहिक बलात्कार के रूप में जाना जाता है। दशकों से, महिलाओं के शरीर पर पुरुषों का वर्चस्व रहा है और यह स्वीकार्य मानदंड बन गया है कि एक बार शादी हो जाने के बाद, महिलाओं को अपने पतियों के साथ निहित यौन सहमति के रूप में अधिकार मिल गया है। सामाजिक दबाव, परिवार द्वारा सामना की जाने वाली शर्म और महिला वर्चस्ववाद पर पुरुष नियन्त्रण को देखते हुए वैवाहिक बलात्कार की स्थिति से पीड़ित, ज़्यादातर महिलाएं खुद ही मौन हो जाती हैं और मदद पाने से वंचित रह जाती हैं। इसके कारण, कई महिलाएं वैवाहिक बलात्कार के कारण अकेले ही मनोवैज्ञानिक और शारीरिक पीड़ा झेलती हैं। उन्हें अदालतों या समाज से कोई समर्थन नहीं मिलता। (मार्टिन 2007, पृ. 341)[3] वर्तमान में वैवाहिक बलात्कार को कानूनी व्यवस्था द्वारा अपराध नहीं माना जाता है। जबकि भारत में कानूनी सुधारों ने घरेलू हिंसा के विभिन्न रूपों को संबोधित किया है। (खांडे 2011, पृ. 2)[4]

वैवाहिक बलात्कार

क. विवाह एक धार्मिक संस्था के रूप में

कई धार्मिक परंपराओं में, विवाह को एक संस्कार या पवित्र अनुबंध माना जाता है जिसका आध्यात्मिक महत्व है। हिंदू धर्म में, विवाह को एक पवित्र संस्कार माना जाता है जो जोड़े को धार्मिक अनुष्ठानों की एक श्रृंखला के माध्यम से बांधता है। हिंदू धर्म में विवाह का उद्देश्य केवल परिवार स्थापित करना नहीं है अपितु अपने धर्म (नैतिक और आध्यात्मिक कर्तव्यों) को पूरा करना और मुक्ति (मोक्ष) प्राप्त करना है (विट्टे जे. 2012, पृ.12)[5]। इस्लाम में विवाह को एक पवित्र अनुबंध के रूप में भी देखा जाता है जिसका गहरा आध्यात्मिक महत्व है। यहूदी धर्म, बौद्ध धर्म और सिख धर्म जैसे अन्य धर्म भी विवाह को एक धार्मिक कर्तव्य मानते हैं जो पति-पत्नी के बीच संबंधों और दायित्वों के लिए एक नैतिक आधार प्रदान करता है।

ख. विवाह और सामाजिक मानदंड

विवाह से जुड़े सामाजिक मानदंड यह तय करते हैं कि व्यक्तियों को वैवाहिक रिश्ते में कैसा व्यवहार करना चाहिए और पतियों और पत्नियों के लिए स्पष्ट भूमिकाएँ स्थापित करनी चाहिए। ये मानदंड अक्सर सांस्कृतिक,

ऐतिहासिक और आर्थिक कारकों से आकार लेते हैं और समाज और समय के बीच महत्वपूर्ण रूप से भिन्न हो सकते हैं। यह परिवारों के बीच गठबंधन बनाने, यौन व्यवहार को विनियमित करने तथा संतानों के लिए वैधता स्थापित करने का कार्य करता है। विवाह के माध्यम से व्यक्तियों को सामाजिक व्यवस्था बनाए रखने, पारिवारिक दायित्वों का सम्मान करने और समुदाय की सामूहिक पहचान बनाए रखने की अपेक्षा की जाती है। आधुनिक युग में, विवाह को अक्सर व्यक्तिगत इच्छाओं, प्रेम और अनुकूलता के आधार पर एक व्यक्तिगत पसंद के रूप में देखा जाता है। (स्कॉट ई.एस, 2000 पृ. 1936)[6]

ग. वैवाहिक बलात्कार

सर हेल (18वीं शताब्दी) को, एक ऐसा कानून बनाने का श्रेय दिया जाता है जिसे अक्सर पति को अपनी पत्नी के साथ यौन संबंध बनाने से छूट देने का आधार माना जाता है। इस नियम के अनुसार, "पति अपनी वैध पत्नी के साथ बलात्कार करने का दोषी नहीं हो सकता क्योंकि, उनकी आपसी वैवाहिक सहमति और अनुबंध के द्वारा, उसने इसके लिए सहमति दी है और इस सहमति को वह वापस नहीं ले सकती।" (हेल विल्सन 1778, पृ. 629)[7] यह नियम निर्धारित करता है कि पति को अपनी वैध पत्नी के साथ बलात्कार करने का दोषी नहीं पाया जा सकता। हेल की अवधारणा का आधार वैवाहिक एकता का सिद्धांत है, एक ऐसा दृष्टिकोण जिसे अधिकांश संस्कृतियों द्वारा साझा किया जाता है। दूसरे शब्दों में, पत्नी अपने पति के साथ एक ही टोकरी में अपनी पहचान और अधिकार प्राप्त करती है। (सिंह 2022, पृ. 11)[8] इसका तात्पर्य यह है कि पति अपनी पत्नी की सुरक्षा सुनिश्चित करता है जबकि महिला यह सुनिश्चित करती है कि वह अपने पति की आज्ञा का पालन करेगी। (रयान 1995, पृ. 942)[9] सुप्रीम कोर्ट ने पंजाब राज्य बनाम गुरमीत सिंह 1996 में एक और बड़ा फैसला सुनाते हुए कहा कि यौन हिंसा खासकर बलात्कार न केवल महिला की शारीरिक शक्ति पर घातक प्रभाव डालता है बल्कि महिला की आत्मा और भावना को भी घातक रूप से घायल करता है। इसी तरह से काई अन्य मामालो में भी जैसे, हरियाणा राज्य बनाम जनक सिंह (2013), दिल्ली घरेलू कामकाजी महिला फोरम बनाम यूओआई (1995), और भरवाड़ा हरजीभाई बनाम गुजरात राज्य (1983) द्वारा किए गए अध्ययनों में भी इसी तरह के सबूत मिले हैं।

भारतीय परिप्रेक्ष्य में वैवाहिक बलात्कार के अपराधीकरण में सामाजिक बाधाएँ

रीति-रिवाज, संस्कृति और गहराई से स्थापित पितृसत्तात्मक परंपराओं से उत्पन्न मजबूत सामाजिक बाधाओं के कारण, भारत में वैवाहिक बलात्कार का अपराधीकरण एक अत्यधिक कठिन विषय है। (पटेल 2018, पृ.1529)[10] इन सांस्कृतिक, सामाजिक और नौकरशाही कारकों के कारण कार्यकर्ताओं, कानूनी विद्वानों और अंतर्राष्ट्रीय निकायों के दबाव के बावजूद वैवाहिक बलात्कार वैध बना हुआ जिसके अनेक कारण हैं:

क. विवाह और सहमति की सांस्कृतिक धारणाएँ: धार्मिक सांस्कृतिक और सामाजिक मान्यताएँ भारत के लोगों में विवाह को देखने के तरीके एक केंद्रीय भूमिका निभाती हैं जिसे अक्सर समग्र रूप से सम्मान के रूप में माना जाता है। (रेसनिक एम 2000, पृ.354)[11] इस सामाजिक और कानूनी रिश्ते में विवाह को इस रूप में परिभाषित किया गया है जो पतियों को अपनी पत्नियों के साथ यौन संबंध बनाने का एक अनियंत्रित, अपरिवर्तनीय अधिकार देता है।

ख. पितृसत्तात्मक शक्ति और संरचनाएँ: सामाजिक शक्ति के प्राथमिक स्रोत बताते हैं कि, भारतीय समाज पितृसत्तात्मक समाज बना हुआ है, खासकर पारिवारिक क्षेत्र में जहाँ महिलाएँ पुरुषों के अधीन हैं। इस विचार में यह माना जाता है कि पुरुष अधिकांश घरों में सामाजिक, आर्थिक और यहाँ तक कि यौन शक्ति में भी प्रधानता रखता है। (शर्मा 2021, पृ.1)[12]

ग. सामाजिक वर्जनाएँ और कलंक: भारत में, वैवाहिक बलात्कार सहित यौन उत्पीड़न के मामले सामाजिक रूप से वर्जित बने हुए हैं। वैवाहिक बलात्कार के मामलों की रिपोर्टिंग समाज में महिलाओं पर कुछ प्रतिकूल प्रभाव डालती है क्योंकि उनका मानना है कि वैवाहिक बलात्कार की रिपोर्ट करने से उनके परिवार और खुद पर कलंक लगेगा। (मैक्लेरी 2016, पृ.14,15)[13]

घ. राजनीतिक और धार्मिक नेताओं का विरोध: वैवाहिक बलात्कार को अपराधों की सूची में जोड़ना भी राजनीतिक और धार्मिक नेताओं द्वारा अवांछित है। उनका तर्क है कि यह विवाह की संस्था को कमजोर करता है। अधिकांश रूढ़िवादियों ने तर्क दिया है कि वैवाहिक बलात्कार को एक आपराधिक कृत्य बनाने से रूढ़िवादी समूहों द्वारा समझी जाने वाली पवित्र वैवाहिक संस्था को नष्ट कर देगा । (कनोडिया, 2016 पृ. 50)[14]

ङ. कानून और नीति में हिचकिचाहट: कई चीजों के प्रति विधायिका अपने समग्र उदार रवैये के बावजूद, भारतीय कानूनों ने वैवाहिक बलात्कार के अपराधीकरण को पूरी तरह से स्वीकार नहीं किया है। इन सामाजिक और सांस्कृतिक बाधाओं का वैधीकरण भारतीय दंड संहिता की धारा 375 (अब धारा 63 बीएनएस) में वर्णित है। इसके अनुसार अगर कोई पुरुष अपनी पत्नी के साथ बलात्कार करता है और महिला अठारह वर्ष या उससे अधिक उम्र की है, तो वैवाहिक बलात्कार को बलात्कार नहीं माना जाता है। (राव कल्लकुरु 2018, पृ. 3)[15]

च. कानूनी दुरुपयोग का डर: कानून के दुरुपयोग का डर एक और आम तौर पर बताई जाने वाली बाधा है। वैवाहिक बलात्कार को अपराध बनाने का विरोध करने वाले लोग अक्सर दावा करते हैं कि महिलाएँ अपने पतियों के खिलाफ़ आरोप गढ़ने के लिए इन कानूनों का इस्तेमाल करेंगी। (एडिंक्रा 2011, पृ. 18.)[16]

छ. संशोधन की आवश्यकता: इन बाधाओं के बावजूद, भारत में वैवाहिक बलात्कार को अपराध बनाने के लिए एक अभियान बढ़ रहा है। महिला अधिकारों के बारे में जागरूकता और दुनिया भर में महिलाओं के खिलाफ हिंसा पर ध्यान दिए जाने के साथ कानून में बदलाव की माँग बढ़ गई है। लेकिन यदि वास्तविक परिवर्तन लाना है तो राष्ट्र को संस्कृति और सामाजिक मान्यताओं के उन पहलुओं को भी समाप्त करना होगा जो वैवाहिक बलात्कार को वर्जित मानने की धारणा में योगदान करते हैं। (अत्रे 2023, पृ. 88)[17]

आगे का रास्ता: चुप्पी तोड़ना

भारतीय विवाहों में वैवाहिक बलात्कार और यौन शोषण की मूक लड़ाई को संबोधित करने से पहले चुप्पी का समर्थन करने वाली सामाजिक वर्जनाओं को तोड़ा जाना चाहिए। विवाह में महिलाओं की स्वायत्तता को स्वीकार करने के लिए: सामाजिक जागरूकता, कानूनी सुधार और सांस्कृतिक परिवर्तन के माध्यम से सामूहिक कार्रवाई की आवश्यकता है। विवाह के निजी क्षेत्र के साथ-साथ सार्वजनिक क्षेत्र में भी लैंगिक समानता का सम्मान किया जाना चाहिए।

सुझाव

भारतीय विवाहों में वैवाहिक बलात्कार और यौन शोषण की मूक महामारी को संबोधित करने के लिए एक विविध रणनीति की आवश्यकता है:

क. कानूनी सुधार: वैवाहिक बलात्कार को अपराध घोषित करना नीतिगत प्राथमिकता बन जाना चाहिए। न्याय की जीत के लिए, वैवाहिक बलात्कार को अपराध के रूप में घोषित करने वाला सरल और निश्चित कानून होना चाहिए। मौजूदा कानूनों में बदलाव किया जाना चाहिए ताकि वैवाहिक बलात्कार को राज्य कानून द्वारा घृणित अपराध के रूप में घोषित किया जा सके क्योंकि यह यह मानवाधिकारों के कानूनों का उल्लंघन करते हैं।

ख. जागरूकता अभियान: राष्ट्रीय अभियान का लक्ष्य हानिकारक सामाजिक वर्जनाओं को खत्म करना होना चाहिए। इसकी पितृसत्तात्मक जड़ की खूबी, सांस्कृतिक रूप से उकसाने वाली सोच जिसमें पति को अपनी पत्नी के शरीर का मालिक माना जाता है, को चुनौती दी जानी चाहिए।

ग. न्यायिक संवेदनशीलता: विवाह में यौन दुर्व्यवहार की वास्तविकताओं को पर्याप्त रूप से संबोधित करने तथा पीड़ितों के अधिकारों और शिष्टाचार को सुनिश्चित करने के लिए न्यायाधीशों, पुलिस और कानूनी विद्वनो को पूर्ण रूप से प्रशिक्षित किए जाने की आवश्यकता है।

घ. सहायता प्रणालियाँ: वैवाहिक बलात्कार से पीड़ितों महिलाओ के लिए सुरक्षित शरण, कानूनी सहायता और उनके लिए परामर्श सेवाएँ प्रदान किए जाने चाहिए।

ङ. सांस्कृतिक बदलाव: सम्मानजनक, सहमतिपूर्ण विवाहों का समर्थन करने के लिए शक्तिशाली धार्मिक और सांस्कृतिक हस्तियों को शामिल करने से दीर्घकालिक सांस्कृतिक परिवर्तन हो सकता है और वैवाहिक बलात्कार के संबंध में लंबे समय से चली आ रही वर्जनाएं समाप्त हो सकती हैं, परंपरागत सामाजिक एवं सांस्कृतिक मानसिक्ता को परिवर्तन करके वैवाहिक बलात्कार से शोषित महिलाओ को मानव अधिकार प्रदान किया जा सकता है, और वैवाहिक बलात्कार को अपराध घोषित करके महिलाओं की मूक पीड़ा को समाप्त करने के लिए आवश्यक प्रेरणा प्रदान किया जा सकता है।

निष्कर्ष

विवाह में यौन हिंसा को सामान्य बनाने वाली व्यापक पितृसत्ता समाज द्वारा वैवाहिक बलात्कार को लगातार नकारने से उजागर होती है। महिलाओं के ऊपर लम्बे समय से हो रही यौन हिंसा की आवाज़ लंबे समय से विवाह और लैंगिक भूमिकाओं से जुड़ी सामाजिक वर्जनाओं द्वारा दबाई गई है, जो उन्हें ऐसे वैवाहिक साझेदारों में रखती हैं जहाँ सहमति का सम्मान नहीं किया जाता है। इस चुप्पी को खत्म करने के लिए सिर्फ़ कानूनी बदलाव ही काफी नहीं होंगे, सामाजिक बदलाव की भी ज़रूरत है। इस संघर्ष को तभी रोका जा सकता है जब पारंपरिक लैंगिक पूर्वाग्रहों को समाप्त किया जाए जो पत्नी के शरीर को उसके पति का शरीर मानते हैं। महिलाओं के अधिकारों और व्यक्तिगत स्वतंत्रता को मजबूत करने के लिए, इन सामाजिक वर्जनाओं को समाप्त

करने हेतु संबोधित करने की आवश्यकता है जैसे कि, वैवाहिक बलात्कार जैसे मुद्दे को अपराध के रूप मान्यता दी जानी चाहिए किसके द्वारा महिला की स्वतंत्रता, गरिमा को सुनिश्चित किया जा सके। यह तभी संभव है जब समाज पीड़ितों की दुर्दशा के प्रति संवेदनशील हो जाए, कानूनों को लागू करे और विवाह में यौन शोषण को अपराध घोषित करे। अब समय की मांग है कि इस विवाह को सम्मान, सहमति और गरिमा पर आधारित साझेदारी के रूप में फिर से परिभाषित किया जाए और इसे उत्पीड़न और नियंत्रण के बंधनों से मुक्त किया जाए। तभी और केवल तभी हम उस शांत पीड़ा को समाप्त करने की उम्मीद कर सकते हैं जिससे कई भारतीय महिलाएं विवाह में गुजरती हैं जिससे उनकी मानवीय गरिमा एवं स्वतंत्रता नष्ट होती है।

संदर्भ सूची

1. नाथ, ए., और सिंह, ए. के. "चुप्पी तोड़ना: बलात्कार की त्रासदी को प्रसारित करना" 2024, पृ. 62–85।

2. वाइसमैन, डी. एम. "व्यक्तिगत राजनीतिक है और आर्थिक: घरेलू हिंसा पर" लॉ रिव्यू, 2007, पृ. 387।

3. मार्टिन, ई. के., टैफ्ट, सी. टी., और रेसिक, पी. ए. "वैवाहिक बलात्कार की समीक्षा।" आक्रामकता और हिंसक व्यवहार, खंड 12, संख्या 3, 2007, पृ. 329–47।

4. खांडे, एस. ए. के. "कमला भसीन: एक अग्रणी विकासात्मक नारीवादी और कार्यकर्ता के रूप में" 2011, पृ.2।

5. विट, जे. "संस्कार से अनुबंध तक: पश्चिमी परंपरा में विवाह, धर्म और कानून" प्रेस्बिटेरियन पब्लिशिंग कॉर्प., 2012, पृ. 12।

6. स्कॉट, ई.एस. "सामाजिक मानदंड और विवाह का कानूनी विनियमन" वर्जीनिया लॉ रिव्यू, 2000, पृ. 1936।

7. हेल, एस.एम., विल्सन, जी., और एमलिन, एस. "क्राउन की दलीलों के कानून" खंड 1, टी. पायने एट अल., 1778, पृ. 629।

8. सिंह, वी.पी. "वैवाहिक बलात्कार के अपराधीकरण पर एक ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य" भारतीय जर्नल ऑफ जेंडर स्टडीज, खंड 29, संख्या 1, 2022, पृ. 10–32।

9. रयान, आर.एम. "सेक्स अधिकार: वैवाहिक बलात्कार छूट का कानूनी इतिहास" कानून और सामाजिक जांच, खंड 20, संख्या 4, 1995, पृष्ठ 941-1001।

10. पटेल, के. "भारत में बलात्कार कानून में खामियां: अपराधीकरण और सामाजिक परिवर्तन की अवधारणाएं" फोर्डहम इंटरनेशनल लॉ जर्नल, खंड 42, 2018, पृष्ठ 1529।

11. रेसनिक, आई.एम. "मध्यकालीन संस्कृति में विवाह: सहमति का सिद्धांत और जोसेफ और मैरी का मामला" चर्च इतिहास, खंड 69, संख्या 2, 2000, पृष्ठ 350-71।

12. शर्मा, ए. "महिलाओं के स्वास्थ्य पर पितृसत्ता का प्रभाव" 2021, पृष्ठ 1 1

13. मैक्लेरी-सिल्स, जे., एट अल. "कौमार्य पंथ, शर्म, और अंतरंग साथी हिंसा के लिए मदद मांगने में महिलाओं की सीमित एजेंसी" ग्लोबल पब्लिक हेल्थ, खंड 11, संख्या 11, 2016, पृष्ठ 224-35।

14. कनोडिया, एस., और रे, आर. "वैवाहिक बलात्कार कानूनों में सुधार क्यों होना चाहिए" राइटर्स जर्नल ऑफ ह्यूमैनिटीज एंड सोशल साइंसेज, खंड 21, संख्या 9, 2016, पृष्ठ 49-55।

15. राव कल्लकुरु, आर., और सोनी, पी. "भारत में बलात्कार का अपराधीकरण: संवैधानिक, सांस्कृतिक और कानूनी निहितार्थ।" एनयूजेएस लॉ रिव्यू 121.

16. एडिंक्रा, एम. "विवाह के भीतर बलात्कार को अपराध बनाना: घाना विश्वविद्यालय के छात्रों के दृष्टिकोण" इंटरनेशनल जर्नल ऑफ ऑफेंडर थेरेपी एंड कम्पेरेटिव क्रिमिनोलॉजी, खंड 55, संख्या 6, 2011, पृष्ठ 982-1010।

17. अत्रे, ई. "वैवाहिक बलात्कार: अंतर्राष्ट्रीय सामूहिक अपराध का भंडार" इंटरनेशनल जर्नल ऑफ ह्यूमन राइट्स लॉ, खंड 2, संख्या 4, 2023।

सत्येन्द्र कुमार पाण्डेय, शोधार्थी
विधि विभाग, एसआरटी परिसर, एचएनबी गढ़वाल (केन्द्रीय)
विश्वविद्यालय श्रीनगर, उत्तराखंड, satyendra464@gmail.com

डॉ. हिमानी बिष्ट, सहायक प्रोफेसर
विधि विभाग, एसआरटी परिसर, एचएनबी गढ़वाल (केन्द्रीय)
विश्वविद्यालय, श्रीनगर, उत्तराखंड,
himanibisht874@gmail.com

भारतीय ज्ञान परंपरा में श्री अरविंद का योगदान

-कृष्ण कुमार यादव 'कनक

भारत प्राचीन परंपराओं, अपनी संस्कृति, संस्कार तथा वसुधैव कुटुंबकम् की भावना का संपोषक रहा है। यह तथ्य सर्वविदित है कि भारतीय ज्ञान परंपरा में भारतीय संस्कृति को सर्वथा समग्रता की संस्कृति के रूप में ही स्वीकार किया गया है। इस तथ्य को यदि सामाजिक उपादानों की दृष्टि से मूल्यांकित किया जाए तो भारतीय ज्ञान परंपरा में भारतीय सभ्यता और संस्कृति परस्पर एक दूसरे की पूरक सिद्ध होंगी। इस संदर्भ में यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि सभ्यता और संस्कृति के बीच एक विशिष्ट प्रकार की अन्योन्याश्रितता है, जिसे स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। इस संदर्भ में मनुष्य के लौकिक तथा आध्यात्मिक परिष्कार के लिए किया गया उत्तम वैचारिक उद्योग ही संस्कृति तथा मानवोचित समन्वययुक्त सदाचरण ही सभ्यता है। इन्हीं तथ्यों का समन्वय हमारी भारतीय ज्ञान परंपरा में दृष्टिगत होता है।

मानव समाज में मनुष्य के जीवन तथा उसके द्वारा किए जाने वाले समस्त क्रियाकलापों पर उसकी संस्कृति का प्रभाव सर्वाधिक होता है। इस संदर्भ में श्रीअरविंद जी का यह कथन सर्वथा उपयुक्त है। वे लिखते हैं कि "किसी जाति की संस्कृति उसकी जीवन विषयक चेतना की अभिव्यक्ति होती है और वह चेतना अपने आप को विचार, आदर, ऊर्ध्वमुख संकल्प, आत्मिक अभीप्सा, सर्जनशील आत्म अभिव्यंजना, गुणग्राही सौंदर्य बोध, मेधा, कल्पना व्यवहारिकता में प्रकट करती है।"[1]

यानी कि भारतीय ज्ञान परंपरा में संस्कृति का प्रभाव व्यक्ति के संपूर्ण व्यक्तित्व पर परिलक्षित होता है, इस तथ्य को पूर्णरूपेण मान्यता प्रदान की गई है। अर्थात् कोई भी मनुष्य किसी भी स्थिति में अपनी संस्कृति से विमुख नहीं हो सकता। इस संदर्भ को शब्दार्थ की दृष्टि से परखने का प्रयास किया जाए तो "सम् उपसर्गपूर्वक 'कृ' धातु से भूषण-अर्थ में सुट् का आगम करके 'क्तिन्' प्रत्यय करने से 'संस्कृति' शब्द बनता है। इसका अर्थ होता है-भूषणभूत सम्यक् कृति। अतः भूषणभूत सम्यक् कृति या चेष्टा को ही संस्कृति कहा जा सकता है।"[2]

श्रीअरविंद जी का अवतरण भारतीय सभ्यता और उसकी विश्वप्रसिद्ध संस्कृति का सर्वव्यापी संस्कार लेकर हुआ, जिन्होंने भारतीय ज्ञान परंपरा में एक नवीन अध्याय जोड़ने और इसे अधिक महान बनाने का सराहनीय कार्य किया। श्रीअरविंद जी के संदर्भ में छायावादी चतुष्ट्य के अंतर्गत परिगणित कवि सुमित्रानंदन पंत जी, पंडितराव रावल जी द्वारा रचित बंगला भाषा की कृति 'अरविंदायन' के हिंदी अनुवाद, जोकि कुमारी धर्मा भट्ट ने किया है, भूमिका में 'आमुख' नामक शीर्षक में लिखते हैं कि-"श्रीअरविंद जी का जीवन बहुमुखी प्रतिभाऔं तथा अनेक प्रकार की बाह्य उपलब्धियों एवं सिद्धियों, उनका तप, त्याग, निर्भीकता तथा आत्मनिर्भर स्वभाव अपने में आश्चर्यचकित व अद्भुत इस युग की महान परिणति है। यह एक उच्च कोटि का कवि, बहुभाषाविद, क्रांतिकारी, लोक-नेता, महान् दार्शनिक, सिद्ध योगेश्वर, नवयुग प्रवर्तक, अतिमानस का अग्रदूत तथा विश्व मंगल का विधायक होना एक महत् अवतारी पुरुष से ही संभव हो सकता है। वे मानव जीवन को एक नवीन प्रयोजन, नवीन अर्थ, नवीन विकास के मूल्य दे कर गए हैं। विश्व प्रकृति के कार्य-कलाप में निहित उसके उर्ध्व-आंतर विकास संबंधी उनकी महत्त्वपूर्ण खोज की भविष्य में असीम संभावनाएँ हैं। उन्होंने अतीत के निर्मम बोझ से दबे, मन की मध्ययुगीन

गुफा के अंधकार में खोए हुए मानव जीवन को उबारा है तथा उसे भविष्योन्मुख बनाकर उसे अधिक प्रकाश, अधिक सत्य और अधिक कल्याण की ओर प्रेरित एवं अग्रसर करके गए हैं।“[3]

श्रीअरविंद जी का जीवन स्वयं में एक संदेश है, जो संपूर्ण विश्व को भारतीय ज्ञान परंपरा एवं भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति का सारगर्गभित संदेश संप्रेसित करने में पूरी तरह सफल सिद्ध हुआ है। इस संबंध में डा. विश्वनाथ प्रसाद वर्मा का कथन इस प्रकार है कि “जब वे आध्यात्मिक जीवन की ओर बढे तो उन्होंने भारतीय दर्शन तथा धर्म की ओर भी गहराई से जानने का प्रयत्न किया”[4]

श्रीअरविंद जी ने भारतीय ज्ञान परंपरा के आदि ग्रंथ, पुराण, गीता आदि के अध्ययन के पश्चात् ही ब्रह्म को पूर्ण तथा जगत् को अपूर्ण सत् के रूप में समझाया गया है। उन्होंने अपनी दिव्यतापूर्ण दृष्टि के आलोक में समग्र अद्वैतवाद की व्याख्या उसकी सांस्कृतिक विरासत के अनुशीलन तथा भारतीय ज्ञान परंपरा के परिप्रेक्ष्य में ही किया है। उल्लेखनीय तथ्य यह है कि जब हम श्रीअरविंद जी के सामाजिक एवं राजनैतिक विचारों का चिंतन करते हैं तो ज्ञात होता है कि उनके विचार भी वेदान्त की परंपरा के अनुरूप हैं। अर्थात् श्रीअरविंद जी ने भारतीय ज्ञान परंपरा को नवता के सांचे में ढालकर उसे आगे बढ़ाने का प्रयास किया है। इसी प्रयास का परिणाम है कि श्री अरविंद ने तत्व मीमांसा के साथ-साथ आध्यात्मिक चेतना की शक्ति को भी अपने सामाजिक और राजनीतिक दर्शन में प्राथमिक माना है। श्रीअरविंद जी के मतानुसार समस्त मानव जाति भौतिक संरचना, प्राणमय आलंबन, भावनात्मक आचरण एवं मनोमय सम्यक् प्रकृति के परिप्रेक्ष्य में समान ही है। वे मानते हैं कि मनुष्य एक समान प्रकृतिगत मनोमय उदात्त प्राणी है। जैसे-जैसे मनुष्य अपने जीवन में प्रगति-पथ का अनुसरण करता है, ठीक उसी के सापेक्ष मनुष्य में विभिन्नता की सामर्थ्य भी उत्पन्न हो जाती है। उस व्यापक सत्ता के प्रति अपनी संचेतना को विस्तारित कर सकने की क्षमता का संकलन भी कर लेता है, क्योंकि मनुष्य की प्रगति का वास्तविक यथार्थ इस तथ्य पर निर्भर नहीं कि उसने कितना भौतिक एवं राजसत्तात्मक विकास किया, अपितु इस बात में निहित होता है कि उस व्यक्ति विशेष ने प्रकृति के विकास क्रम में मानसिक और आध्यात्मिक प्रगति के मार्ग में वह किस स्थान पर स्वयं को स्थित पाता है।

श्री अरविंद ने मनुष्य के सार्थक जीवन की वास्तविक दिव्यता को अनेक रूपों में उसकी आध्यात्मिक चेतना के प्रतिबिम्ब के रूप में स्वीकार किया है। यही कारण है कि श्रीअरविंद जी 'भारतीय संस्कृति के आधार' नामक कृति में जहाँ एक ओर भारतीय संस्कृति पर पर हो रहे निरंतर कुठाराघातों से उत्पन्न संकटों के प्रति भारतीय जनमानस को आत्मरक्षा की करने की अनुमति देते हैं, वहीं वे यूरोपीय संस्कृति के प्रभाव एवं उसमें व्याप्त विसंगतियों का अतिसूक्ष्म विश्लेषण करते हुए, उसके प्रभावों तथा उनके माध्यम से उत्पन्न होने वाले विकारों के निवारण के उपायों पर अपना चिंतन प्रकट करते हैं।

इसके साथ ही श्रीअरविंद जी का जोर इस बात पर भी रहा है कि दर्शन एवं धर्म की कला से समृद्ध भारतीय ज्ञान परंपरा के मूल तत्वों को भी समग्र रूप में प्रस्तुत किया जा सके। यहाँ यह कहना अनुचित नहीं कि मानव जीवन की संचारित यात्रा में विकास का क्रम भौतिक तत्वों की स्वीकृति से ही प्रारंभ होता है। उसके बाद ही उसमें जीव जगत् की चेतना अर्थात् प्राण-तत्त्व की व्याप्ति होती है। इसी विकास की क्रमधारा के एक छोर पर मनुष्य नामक इस भौतिक संसार के सर्वोच्च प्राणी की यह अवधारणा मूर्त रूप ले लेती है। यह तथ्य सहजता से दृष्टिगत हो जाता है कि मनुष्य के मन और उसके प्राण तत्त्व पर अपने सभी पूर्वजों की मूलभूत प्रकृति का आधिपत्य बना

रहता है। इस संदर्भ में श्री उमेश चंद्र दुबे जी लिखते हैं कि "भौतिक मन के अमानवीय स्रोतों से मनुष्य ने जड़ता, भूमि के प्रति आसक्ति, खानाबदोशता और लूटपाट की प्रवृत्ति, क्रोध और भय से अभिभूत होना, दण्ड की आवश्यकता और दण्ड पर निर्भरता, वास्तविक स्वतंत्रता की अज्ञानता, बौद्धिक रूप से अर्जित ज्ञान को आत्मसात करने में धीमापन आदि प्रवृत्तियाँ प्राप्त की हैं। अवमानवीय तत्त्वों के कारण ही अपनी स्थिति से ऊपर उठ पाना उसके लिए अत्यंत दुष्कर होता है, किंतु प्रकृति अपने निम्नभाव का अतिक्रमण करके अपने विकास की महान् प्रक्रिया की ओर अग्रसर होती है। अतीत से शिक्षा ग्रहण कर अपनी अनंत संभावनाओं को जानना और तदनुरूप विकास की ओर अग्रसर होना ही मानव के लिए नियत है।"[5]

श्रीअरविंद जी भारतीय संस्कारों में निहित प्राणशक्ति और उसकी श्रेष्ठता के मूल्यांकन के मापदंडों के तीन आधारों को स्वीकारते हैं; जीवन के प्रति मानव के मौलिक चिंतन की सामर्थ्य, जीवन का हेतु, उसका आदर्श व उस आदर्श के अनुरूप कर्म करने की प्रेरक शक्ति। भारतीय मूल्यों तथा संस्कृति के संदर्भ में श्रीअरविंद जी स्पष्ट रूप से कहते हैं कि "वेद भारतीय संस्कृति का आध्यात्मिक और मनोवैज्ञानिक बीज हैं जबकि उपनिषद् सर्वोच्च आध्यात्मिक ज्ञान एवं अनभुव के सत्य की अभिव्यक्ति। सर्व सत्य इस संस्कृति का उच्चतम विचार और चरम ध्येय रहा है। ये दो महान् पवित्र, विशुद्ध अध्यात्मिक मन की भाषा में परिकल्पित एवं वर्णित हैं।"[6]

वे स्वीकार करते हैं कि संपूर्ण भारतीय मनीषा के संचरण का आधार यही प्राचीन शास्त्र हैं जिन्होंने भारतीय ज्ञान परंपरा को चिर स्थाई व सर्वव्यापी स्वरूप प्रदान किया है। प्राचीन ऋषियों से लेकर वर्तमान समय के योगी-संन्यासियों के आत्मतत्त्व को पहचानने के संदेश को भले ही आज के मनुष्य ने गंभीरता से लेने की आवश्यकता अनुभव नहीं की, किंतु इसमें समाहित सार्वभौमिक यथार्थ तथा मानव कल्याण के संदेश तो स्वीकार किया ही है। श्रीअरविंद जी ने सभी ऋषियों को आध्यात्मिक मनुष्य कह कर संबोधित किया है, जो मानव मात्र के जीवन को उसकी पूर्णता की ओर ले जाने में पूर्ण सक्षम हैं। भारतीय ज्ञान परंपरा में उन्हें ही ऋषि नाम से संबोधित किया गया है। इस प्रकार, मान्यता यह है कि ऋषि वह है जिसने मनुष्य जीवन का पूर्ण उपयोग किया और इसे अपने लिए तथा विश्व के अन्य मनुष्यों के लिए सार्थक बनाया है। उसने बौद्धिक, मानसिक और आध्यात्मिक सत्य के यथार्थ स्वरूप को भी पहचान लिया। मानव जीवन की निम्नतर अवस्थाओं से ऊपर उठ गया है। भारतीय ऋषि परंपरा भारतीय ज्ञान परंपरा की वास्तविक संवाहक रहे हैं। जिन्होंने भारतीय ज्ञान परंपरा के प्रवाह को नया मार्ग दिया है तथा मानव कल्याण के उच्च उद्देश्य को सफलता तक पहुंचाया है।

भारतीय ज्ञान परंपरा के संदर्भ में यह भी एक तथ्य है कि वर्तमान समय में सभ्य मानव जाति जिस वैचारिक आधार पर अनुशासित हो रही है, वह वस्तुतः विचारशीलता, नैतिकता, बौद्धिक सत्य, विश्व एवं अपने अतीत को जानने तथा उसके अनुसार सामाजिक एवं आर्थिक जीवन को व्यवस्थित करने, आध्यात्मिक विचारधारा का अभ्यास करने तथा भौतिक अस्तित्व को समय के अनुरूप सार प्रस्तुत करने का ही प्रतिफल है। यह जानना भी अतिआवश्यक है कि द्वितीय विश्व युद्ध के समापन के पश्चात् पश्चिमी देशों की शिक्षा संबंधी विचारधारा में बहुतायत मात्रा में परिवर्तन हुए। परिणामस्वरूप संपूर्ण शिक्षा प्रणाली को भौतिकतावाद पर ही केंद्रित कर दिया गया, तथापि भारत में मानव समाज पर प्राचीन भारतीय शिक्षा पद्धति की परिपुष्ट विचारधारा का व्यापक प्रभाव आज भी बना हुआ है। यही कारण है कि भारतीय ज्ञान परंपरा समस्त भारतवासियों को मानवोचित व्यवहार के लिए प्रेरणास्रोत के रूप में उसे ऊर्जान्वित करने में सफल रही है अर्थात् यह विचारधारा मानव की अपनी योग्यता उपयोगिता पर अधिकाधिक बल देने की है। अतः स्पष्ट है कि भारतीय जनमानस आज के दौर में भी भौतिकतावादी होने के साथ-

साथ आध्यात्मिकता को मानने वाला है। इस संदर्भ में श्रीअरविंद जी की मान्यता है कि, "यद्यपि मानव का मनोमय तत्त्व जो अभी दिखाई तो नहीं देता, किंतु मनुष्य के मन में सत्ता के रूप में विकसित होने के लिए अनिवार्य है।"[7]

सामान्यतः भारतीय ज्ञान परम्परा का उद्देश्य मानसिक जीवन की सात्विक साधना रहा है। आत्मा में भावनात्मक स्तर के उपरांत ही उसका मनोमय जीवन आता है, जिसके दो पक्ष स्पष्ट रूप से दृष्टिगत होते हैं; प्रथम तो प्रकृति के अनुभावात्मक उद्देश्य की प्रधानता लिए, जिसमें ऐंद्रिक संवेदनाओं के आवेगों की अवस्थिति देखी जाती है तो दूसरे में प्रकृति के आलंबन तत्त्व के बाह्य समस्याऔं की प्रधानता रहती है, अर्थात् इसका सीधा संबंध कर्म करने वाले मानव के कर्म-क्षेत्र से है। इस दृष्टि से ज्ञात होता है कि वर्तमान समय में विश्व-मानव अव्यवस्था के युग में जी रहा है। इस संदर्भ में श्रीअरविंद जी स्वीकारते हैं कि, "अब समय आ गया है कि मानस, अतिमानस में उन्नत हो, विभिन्न सामाजिक, राष्ट्रीय संघर्ष, दु:ख, अन्याय, अत्याचार, विनाश इन सबसे मुक्ति पाने का निश्चित इलाज अतिमानस अवस्था प्राप्त करने में है। अन्य सब उपाय तात्कालिक और आंशिक फलदायी सिद्ध होंगे। मानव संस्कृति यंत्र यज्ञ में इतनी विकृत हो गई कि उसका ठीक नियंत्रण मानस के बस की बात नहीं है। सामान्य मानव की भूमिका से वर्तमान जगत् के संघर्षों का शाश्वत समाधान संभव नहीं है, इसलिए उस दिशा में किए जा रहे मानवीय प्रयास असफल हो रहे हैं। भीषण आणविक शस्त्रों से समस्त मानव जाति भयभीत है। अतिमानस अवतरण ही इस संसार को वास्तविक शांति प्रदान करेगा। वही अब दुनिया का एकमात्र आशा है।"[8]

यहाँ यह जानना भी आवश्यक है कि श्रीअरविंद जी अतिमानस के भाव का जागरण एक या दो व्यक्तियों में नहीं अपितु संपूर्ण समाज में चाहते हैं। इस संदर्भ में उनके द्वारा प्रणीत एकात्म-योग किसी एक व्यक्ति की जीवात्मा का उद्धारक न होकर समग्र विश्व के विकास के अर्थ के लिए समर्पित है। वे यह भी मानते हैं कि योग साधना का स्वरूप जब तक किसी एक ही व्यक्ति या कुछ व्यक्तियों के समूह तक ही सीमित रहेगा, तब तक योग का वास्तविक उद्देश्य एकीकृत नहीं हो सकेगा। योग की साधना में साधक का दिव्य पूर्णत्व तभी यथार्थ रूप में सामने आ सकेगा, जब वह स्वयं के साथ-साथ अन्य सभी प्राणियों में भी चैतन्य स्वरूप के स्रोत एवं प्रेम के भाव और विश्वव्यापी समन्वय सूत्र का अनुभव करेगा। सभी प्राणियों में स्थित ईश्वर की जो भी व्यक्ति एकत्व भावना से भक्ति करता है, वह योगी किसी भी प्रकार का आचरण करता हुआ भी सदैव ईश्वर स्वरूप में ही लीन रहता है। सभी विनाशशील प्राणियों में भी समान रूप से स्थित अविनाशी परमेश्वर को ही स्वीकार करता है, वही वास्तविकता का जानकार है। इस प्रकार श्रीअरविंद जी भारतीय ज्ञान परंपरा को नवता के सांचे में ढालकर मानव मात्र के कल्याण का एक मात्र विकल्प स्थापित करने में सफल हुए हैं।

श्रीअरविंद जी भारतीय ज्ञान परंपरा और भारतीय संस्कृति के संबंध में मानते हैं कि, "विज्ञान ने संस्कृति को अथवा संस्कृति के बाह्य आकार को कुछ सीमा तक व्यापक बना दिया, किंतु नीचे से बहुत संख्या में अर्धसभ्य लोगों के आ मिलने से संस्कृति का स्तर ऊपर उठा हो या उसे दृढता प्राप्त हुई हो ऐसा नहीं लगता क्योंकि आज भी उत्तेजना-प्रधान कर्मवाद ही मानव का प्रेरक है और व्यापारवाद की आधुनिक सभ्यता का केंद्र है। कहने का तात्पर्य है कि आज भी मनुष्य की स्थिति असंस्कृत, मनोमय सत्ता की कर्मशील और उत्तेजना प्रवण में ही है। परिणामस्वरूप विचार, कला और साहित्य बहुत सस्ते हो गए। लेखक और विचारक सामान्यजनों की रुचियों और अनुरक्तियों के अनरूप रचना करनी होती है।"[9]

यानी कि साहित्यकार भी अपने नैतिक दायित्व का निर्वहन इसलिए नहीं करते, क्योंकि उनके पाठक या श्रोता उन सब बातों में रुचि नहीं लेते, जो वास्तविक हैं। ऐसे में साहित्यकार भी उनकी रुचि के अनुरूप सृजन करने लगे हैं। अर्थात नैतिकता का ह्रास मानव मूल्यों पर संकट का एक बड़ा कारण है। श्रीअरविंद जी स्वीकारते हैं कि "एक शब्द में उच्च मनोमय जीवन अच्छे और बुरे दोनों परिणामों के साथ लोकायत, संवेदनप्रधान तथा क्रियाशील बन गया है।.... विशेषत: शिक्षा की नवीन प्रणालियाँ, समाज के नवीन सिद्धांत, क्रियात्मक संभावना के क्षेत्र में आने शुरू हो गए हैं, जिनसे संभवत: एक दिन ऐसी घटना घटित होगी जो अभी अज्ञात है, अर्थात् मनुष्यों की एक ऐसी जाति केवल एक वर्ग की ही नहीं अपितु संपूर्ण सृष्टि होगी जिन्होंने कुछ सीमा तक अपने मनोमय पुरुष को प्राप्त और विकसित कर लिया होगा, वह मनुष्य जाति सुसंस्कृत होगी।"[10]

इस प्रकार श्री अरविंद जी ने भारतीय ज्ञान परंपरा के मूलभूत तत्त्वों को ग्रहण करते हुए जिस एकात्म योग के सिद्धांत का उपदेश किया है, वह भारतीय ज्ञान परंपरा को चिरकाल तक चिर स्थाई बनाए रखने में एक मील का पत्थर है।

निष्कर्ष: श्रीअरविंद जो यूरोपीय संस्कारों में पले-बढ़े वे बहुभाषज्ञ और अपराजेय क्रांतिकारी के साथ ही एक सहृदय कवि, कहानीकार, लेखक और आलोचक भी थे। इस दृष्टि से अंग्रेजी में लिखी उनकी कविताएँ और बंगाला भाषा में लिखा गया उनका संपूर्ण साहित्य उनके हृदय में बसी सुसंस्कृत भारतीय आत्मा का दर्शन करता है। इसके साथ ही एक निर्विवाद सत्य यह भी है कि भारतीय ज्ञान परंपरा की भव्यता को प्रतिपादित करने वाले श्री अरविंद का आध्यात्मिक ज्ञान यूरोपीय विद्वानों को भी उतना ही स्वीकार्य है, जितना कि भारतीय विद्वानों को। श्री अरविंद जी का मानना है कि सभी यूरोपीय विचारकों का वैचारिक चिंतन मिथ्या व्यक्तिपरकता के दोष से ग्रस्त रहा है, क्योंकि यह विज्ञान के सिद्धांतों पर आधारित है, जिसके कारण वास्तविक यथार्थ उपेक्षित रह गया है। इस प्रकार श्री अरविंद जी ने भारतीय ज्ञान परंपरा को अपने आध्यात्मिक चिंतन का आधार माना है। श्रीअरविंद जी मानते हैं कि समस्त यूरोपीय विचारकों का वैचारिक चिंतन विज्ञान के सिद्धांतों पर अवलंबित होने से ही एक मिथ्या आत्मनिष्ठता के दोष से आप्लावित रहा है, जिसकी वास्तविक यथार्थ उपेक्षित ही रह गया है। इस प्रकार श्रीअरविंद ने भारतीय ज्ञान को ही अपने आध्यात्मिक चिंतन के आधार के रूप में स्वीकार किया है। इस प्रकार श्रीअरविंद जी के संपूर्ण आध्यात्मिक दर्शन-वैचारिक चिंतन की पृष्ठभूमि का अवलोकन करने पर यह स्पष्ट होता है कि श्रीअरविंद जी ने भारतीय ज्ञान परंपरा में नवीन अवधारणाओं के समाहार के माध्यम से प्राचीन परंपराओं को अधिक पुष्ट करते हुए उसके चिर स्थाई महत्त्व को चिरायु करने का महनीय प्रयास किया है उद्योग किया है। अतः भारतीय ज्ञान परंपरा की सम्पूर्ण श्रृंखला सदैव श्री अरविंद के प्रति कृतज्ञ रहेगी।

संदर्भ:

1. श्री अरविंद: भारतीय संस्कृति के आधार (जगन्नाथ वेदालंकार तथा चन्द्रदीप त्रिपाठी द्वारा अनूदित); पृष्ठ संख्या-66, श्रीअरविंद सोसायटी, पाण्डिचेरी; प्रथम संस्करण: 1968 ई.
2. श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार, श्री चिम्मनलाल गोस्वामी : कल्याण (हिंदू - संस्कृति - अंक); पृष्ठ संख्या -40, गीता प्रेस गोरखपुर - 273005 ; ग्यारहवां पुनर्मुद्रण : संवत् 2072 विक्रमी
3. श्री पंडितराव रावल: अर्विंदायन् (कु. धर्मा भट्ट द्वारा अनुवादित), सुमित्रानंदन पंत: "आमुख"; पृष्ठ संख्या-3, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, पटियाला हाउस,नई दिल्ली ; प्रथम संस्करण अगस्त 1972 ई.

4. डॉ. विश्वनाथ प्रसाद वर्मा: द पोलिटिकल फिलासफी ऑफ श्रीअरविंद; पृष्ठ संख्या-162, मोतीलाल बनारसीदास; प्रथम संस्करण: 1976 ई.
5. श्री उमेशचंद्र दुबे: श्रीअरविंद का संस्कृति दर्शन; पृष्ठ संख्या-5, भारतीय विद्या प्रकाशन, वाराणसी; प्रथम स्करण: 1993 ई.
6. श्री अरविंद: भारतीय संस्कृति के आधार; पृष्ठ संख्या-413, श्री अरविंद सोसायटी, पाण्डिचेरी; प्रथम संस्करण: 1956 ई.
7. श्री अरविंद : मानव चक्र; पृष्ठ संख्या - 83, श्री अरविंद सोसायटी, पाण्डिचेरी ; प्रथम संस्करण : 1964 ई.
8. प्रो.ग.वा.कवीश्वर: श्री अरविंद की अतिमानस तथा दिव्य जीवन की अव-धारणा; (भारतीय दार्शनिक निबंध, संपादक- डॉ. डी.डी. बंदिष्टे तथा डॉ. रमाशकंर शर्मा ; पृष्ठ संख्या - 380, मध्यप्रदशे हिंदी ग्रंथ अकादमी, भोपाल ; षष्ठम् संस्करण: 2008 ई.,
9. श्री उमेशचंद्र दुबे: श्रीअरविंद का संस्कृति दर्शन; पृष्ठ संख्या-12, भारतीय विद्या प्रकाशन, वाराणसी; प्रथम स्करण: 1993 ई.
10. श्री अरविंद, मानवचक्र: लीलावती इन्द्रसेन द्वारा अनूदित; पृष्ठ संख्या-101; श्री अरविंद सोसायटी, पाण्डिचेरी; प्रथम संस्करण: 1984 ई.

कृष्ण कुमार यादव 'कनक' (हिंदी शोधार्थी)
कार्यकारी राष्ट्रीय अध्यक्ष/मुख्य सचिव, हिंदी शोधार्थी संघ, भारत
शोध-निर्देशक, डॉ. संध्या द्विवेदी, सह-आचार्य/विभागाध्यक्ष, हिंदी-विभाग
महात्मा गांधी बालिका विद्यालय (पी.जी.) कॉलेज, फिरोजाबाद
डॉ. भीमराव आंबेडकर विश्वविद्यालय, आगरा
संपर्क:
मो. 7017646795, 9259648428
ई-मेल:- kanakkavya@gmail.com
Website:- pragyahinditrust.in

तीसरी क़सम का फिल्मांकन

(फिल्म समीक्षा)

चित्र लेखा वर्मा

हिन्दी कथा साहित्य के आकाश में फणीश्वरनाथ रेणु का आगमन धूमकेतु के समान माना जाता है। सन् 1954 में 'मैला आँचल' लिख कर रेणु ने हिन्दी उपन्यास साहित्य के क्षेत्र में एक क्रांति ला दी। इस उपन्यास के साथ ही हिन्दी कथा साहित्य में आंचलिक उपन्यास का सूत्रपात माना जाता है।

रेणु के दोनों ही उपन्यास 'मैला आँचल' और 'परती परिकथा' शिल्प की दृष्टि से बहुत विशेष है। दोनों उपन्यासों की विशेषता यह है कि इन दोनों उपन्यासों में नायक है ही नहीं। प्रथम बार ऐसा हुआ था कि नायक की उपेक्षा कर सम्पूर्ण अंचल तथा उसके जन जीवन को नायकत्व की गरिमा और महिमा प्रदान की गयी थी।

आंचलिक उपन्यासों की तरह आप की कहानियों में भी आंचलिकता की विशेषता बरकरार है। उनकी अधिकांश कहानियों को आंचलिकता की संज्ञा दी जा सकती है। जिसमें सबसे प्रसिद्ध कहानी 'तीसरी क़सम उर्फ़ मारे गये गुलफाम' का फ़िल्मांकन भी हुआ।

तीसरी क़सम उर्फ़ मारे गए गुलफाम, सन् 1966 में बनी एक हिन्दी भाषा की फ़िल्म है। इसे सन् 1967 में सर्वश्रेष्ठ हिन्दी फ़ीचर फ़िल्म का राष्ट्रीय फ़िल्म पुरस्कार मिला था। इस फ़िल्म को कई अन्य पुरस्कार भी मिले जो इस प्रकार से हैं; तीसरी क़सम को राष्ट्रपति स्वर्ण पदक, बंगाल फिल्म पत्रकार संघ द्वारा सर्वश्रेष्ठ फ़िल्म का पुरस्कार तथा कई अन्य पुरस्कारों द्वारा भी सम्मानित किया गया था। मॉस्को फिल्म फेस्टिवल में भी यह फिल्म पुरस्कृत हुई थी तथा मॉस्को फिल्म फेस्टिवल में इसे ग्रांफ़्रीक्वेंसी के लिए नामांकित किया गया था।

बासु भट्टाचार्य के निर्देशन में बनी इस फ़िल्म का निर्माण मशहूर गीतकार शैलेंद्र ने किया था जो फ़िल्म हिन्दी सिनेमा में मील का पत्थर साबित हुई। हीरामन और हीराबाई की प्रेम कहानी, जिसे रेणु जी ने प्रेम की एक अद्भुत, महाकाव्यात्मक लेकिन दुखद कहानी के रूप में रचा, वो आज भी पाठकों और दर्शकों को आकर्षित करती है। आज तक प्रेम कहानियों पर जितनी भी फ़िल्में बनी, इसमें 'तीसरी क़सम' सबसे अलग है। रेणु जी द्वारा रचित यह कहानी एक ऐसे आंचल की कहानी है जिसका परिवेश ग्रामीण है। जहाँ आजीविका का साधन कृषि और पशुपालन है।

इस कहानी के मुख्य पात्र हीराबाई और हीरामन हैं। हीरामन एक गाड़ीवान है तथा हीराबाई नौटंकी में काम करने वाली एक खूबसूरत अदाकारा है, जिसे आम तौर पर 'बाई' कहा जाता है। हीरामन एक सीधा-सादा ग्रामीण युवक है, जो 20 साल से गाड़ी चला रहा है और इस कला में उसे महारत हासिल है। कहानी के मुख्य पात्र हीराबाई और हीरामन के अलावा इस कहानी के अन्य पात्र; पलट दास, लाल मोहर का नौकर लहसनवां और धुन्नी राम हैं। फिल्म की शुरुआत एक ऐसे दृश्य से होती है जिसमें गाड़ीवान अपनी गाड़ी चला रहा है और बहुत खुश है। उसकी

गाड़ी में नौटंकी में काम करने वाली हीराबाई बैठी है। हीरामन बहुत कहानी सुनाता है और लीक से हटकर कई लोक गीत सुनाते हुए वह हीराबाई को सर्कस स्थल तक पहुँचा देता है।

इसमें राज कपूर और वहीदा रहमान ने मुख्य भूमिका निभाई थी। फ़िल्म की कास्टिक शूटिंग अररिया ज़िले के औराही हिंगना गाँव में की गई थी जो फणीश्वरनाथ रेणु का गाँव है और मध्य प्रदेश के भोपाल के पास बीना शहर तथा ललितपुर के पास खनन लासा के पास हुई हैं।

फ़िल्म के कुछ दृश्य पवई झील के हैं तो कुछ दृश्य बम्बई के के. मोहन होटल के हैं। फ़िल्म का गाना 'पान खाए सइयां हमारे' पूर्णिया के 'गुलाब मेला' में फ़िल्माया गया। फ़िल्म की इनडोर शूटिंग बम्बई के 'आर.के. स्टूडियो', 'श्री साउंड स्टूडियो' और 'कमल स्टूडियो' की हैं। गुलाब बाग़ मेला की 'द ग्रेट भारत नौटंकी' (नाटक) कंपनी का एक सेट मुम्बई स्टूडियो में बनाया गया।

यह फिल्म भी बहुत लोकप्रिय हुई। फिल्म के गीतकार शैलेन्द्र और हसरत जयपुरी हैं। गीतकार शैलेन्द्र जी के बारे में कुछ विशेष जानकारी: शैलेन्द्र एक आदर्शवादी और भावुक कवि थे। उन्हें अपार धन-दौलत और शोहरत की चाहत नहीं थी। कहने का तात्पर्य है कि वे एक ऐसे इंसान थे जिन्हें पैसों का कोई लालच नहीं था। वे आत्म-संतुष्टि के लिए काम करते थे, वे एक भावप्रण गीतकार थे।

उनका कहना था कि; दर्शकों के रुचि के नाम से उन पर उथलापन नहीं थोपना चाहिए। उनके गीत भाव प्रवण थे जो उनकी दिल की गहराइयों से निकले थे। उन्होंने पैसे कमाने के उद्देश्य से फ़िल्म नहीं बनाई थी। उनका मक़सद एक सुंदर प्रस्तुतिकरण करने का था अर्थात उन्होंने मूल कहानी को यथावत प्रस्तुत किया।

राज कपूर और वहीदा रहमान ने इस फिल्म में अपनी पूरी ताकत झोंक दी थी। जब राज कपूर ने उनसे अपना मेहनताना माँगा तो शैलेन्द्र का चेहरा पीला पड़ गया क्योंकि माँगी गई रकम देने के लिए उनके पास पैसे नहीं थे।

संगीतकार जय किशन को शैलेन्द्र के कथन 'दस दिशाएँ कहेंगी' पर आपत्ति थी। तीसरी कहानी को 'सेल्यूलाइड' पर लिखी कविता कहा जाता है। यह भावुकता, संवेदनशीलता व मार्मिकता से भरी कविता है।

इस कहानी का नायक हीरामन (गाड़ीवाला) है और नायिका हीराबाई (नौटंकी की नायिका) है। अब रही गाड़ीवान के दो बैलों की बात, वे हमें प्रेमचंद की कहानी 'दो बैलों की जोड़ी' की याद दिलाते हैं उस कहानी के नायक हीरा और मोती हैं। वे हीरामन के हाव-भाव, प्यार और भाषा के प्रति बहुत संवेदनशील हैं।

स्टेशन पर पहुंचते ही हीराबाई उसे अंदर ले जाती है, उसके कंधे पर हाथ रखती है और उसे गर्म शॉल खरीदने के लिए अपने बैग से कुछ पैसे देती है। तब वह कहता है, "हर दम रुपय पैसा।" फिर वह हिरामन के चेहरे को ध्यान से देखते हुई कहती है, "तुम्हारा जी क्यों बहुत छोटा हो गया मीता?" महुआ घटवारिन ने सौदागर को खरीद लिया है।

'गुरु जी' यह कहते हुए, हीरा बाई का गला भर जाता है । मीता, महुआ, घटवारिन नहीं है, मुहूर्तों की मूक आवाजें है जो मुखर होना चाहती है, हीरामन के ओंठ हिल रहे हैं। शायद वह 'तीसरी कसम' खा रहा था कि वह 'कम्पनी की

औरत की लदनी' नहीं करेगा' और वह एकदम बैलों को खोल देता है और चाल पकड़ते ही गाना शुरू कर देता है, "अजी हो मारे गए गुलफाम"

इस कहानी का मूल भाव हीरामन की अकल्पनीय पीड़ा है जो उसे हीरा बाई के संपर्क में आने पर भी भावुक और संवेदनशील बनाती है।

इसी तरह जब तेगछिया के बच्चे, हीरामन की पर्दे वाली गाड़ी में हीरा बाई को देखकर ताली बजाते हैं और गाते हैं, "लाली-लाली डोली में लाली रे दुल्हनियाँ" 'पान खाये' सैंया हमारे, तो हीरा के दिल के किसी कोने में मानो नुपूर बज उठते हैं। "दुल्हन पान खाती है और उसके होंठ लाल हो जाते हैं तो वह दूल्हे की पगड़ी पर अपना मुँह पोंछती है" और दुल्हन को याद रखना पड़ता है, गाँव के बच्चे तेगछिया हैं।

नायिका हीराबाई सुन्दरम्, अत्यधिक संवेदनशील, कला प्रेमी, कोमल हृदय, विनम्र और लोगों को पहचानने वाली है। वह एक सुसंस्कृत महिला है, यद्यपि वह एक नाटक कंपनी में काम करती है।

नायक हीरामन का व्यक्तित्व सीधा, सरल और पारदर्शी है, वह नारी की छाया से दूर रहता है। हीरामन सिर्फ़ अपनी गाड़ी और बैलों के प्रति समर्पित है लेकिन कभी-कभी उसके दिल के किसी कोने में सोये हुए कोमल और मधुर सपने हैं। ऐसे मौकों पर वह बहुत भावुक और संवेदनशील हो जाता है। हीरामन; लोक *रुचियों* से संपन्न, सरल, सहज, और सच्चा श्रम जीवी है और गलत कामों से दूर रहता है। हीरामन हमें जायसी (सूफी कवि की 'पद्मावत') के शुक का स्मरण कराता है। नाम के अनुरूप ही वह मानवीय गुणों का हीरा है।

जहाँ तक इस कहानी की बात है, यह कहानी लोक जीवन की सरस, मधुर गंध है। कहानी को मुख्यतः प्रतीकों और संकेतों के रूप में जीवंत नाटकीय शैली में प्रस्तुत किया गया है। जिसमें विभिन्न भावनात्मक कथा प्रसंग, कथा दृश्य, हमारी आँखों के सामने जीवंत हो उठते हैं।

अंत *में* यही कह सकते हैं कि तीसरी कसम का रोमांस हमें एक गहरे अर्थ की अनुभूति से जोड़ता है। यह कहानी उन लोगों की सोच बदल सकती है जो रूढ़ी विचारों की प्रक्रियाओं में आकर लोक जीवन के रोमांस को नकारते हैं। नाट्यकियता और कहानी का ताना-बाना इस तरह बुना गया है कि 'तीसरी कसम' को एक अलग धरातल मिलता है।

नई कहानी आंदोलन में अतीत की कई छाया-छवियों को बहुत मार्मिक ढंग से अभिव्यक्त किया गया है। कहानी के बारे में कुछ आश्चर्यजनक बातें; यह बहुत आश्चर्यजनक है कि 1966 में वासु भट्टाचार्य द्वारा निर्देशित फिल्म 'तीसरी कसम' इसी नाम पर आधारित फिल्म है। कारण :

1. यह एक साहित्यिक कृति पर आधारित फिल्म थी जिसमें करुणा को स्थान दिया गया जो रेणु जी की एक आंचलिक कहानी है और इसका अंत करुणा है।
2. फिल्म के वितरक इसकी साहित्यिक महिमा और महत्व को समझ नहीं पाए।
3. शैलेन्द्र जी ने इस फिल्म को पैसा कमाने के लिए नहीं बनाया था।
4. फिल्म निर्माताओं और फिल्म व्यावसायिकों को इस फिल्म से लाभ मिलने की उम्मीद नहीं थी।

शैलेंद्र जी को इससे बहुत आघात लगा कि उन्होंने इसमें अपनी पूरी ऊर्जा लगा दी। उन्होंने अपने गम को भुलाने के लिए शराब को चुना जो बिल्कुल गलत कदम था। शराब की वजह से उनका लीवर खराब हुआ परिणामस्वरूप उनकी मृत्यु हो गई। जैसा कि उल्लेख किया गया कि बाद में इस फिल्म को बहुत प्रसिद्धि प्राप्त हुई। अंत में मैं गुलाब का उदाहरण देकर अपनी बात स्पष्ट करना चाहती हूँ। गुलाब को फूलों का राजा कहा जाता है। कली से गुलाब की अवस्था में पहुंचते ही यह अचानक से खिल जाता है और लोग इसे तोड़कर अपने-अपने तरीके से इस्तेमाल करके खुद को खुश करते हैं। अंत में इत्र बनाने के लिए इसे पीसा जाता है जो महकता रहता है।

'रहे न रहे हम महका करेंगे' बन के'

'ममता' फ़िल्म का गाना है

मोहम्मद रफ़ी और सुमन कल्याण पुरी ने गाया है।

चित्र लेखा वर्मा
दि इंडियन बुक डिपो, प्रथम तल
अमीना बाद पोस्ट ऑफिस के सामने
झण्डा वाला पार्क, लखनऊ-18

© भारत सरकार
Governemtn of India

ISSN : 2321-0443
UGC Care listed Journal

वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग
शिक्षा मंत्रालय (उच्चतर शिक्षा विभाग)
पश्चिमी खंड-VII, रामकृष्णपुरम, सेक्टर-1
नई दिल्ली-110066
दूरभाष: +91-11- 20867172
वेबसाइट :https://cstt.education.gov.in
https://shabd.education.gov.in

COMMISSION FOR SCIENTIFIC AND TECHNICAL TERMINOLOGY
MINISTRY OF EDUCATION
(DEPARTMENT OF HIGHER EDUCATION)
West Block-VII, Ramakrishnapuram, Sector-1
New Delhi-110066
Telephone : +91-11- 20867172
Website : https://cstt.education.gov.in
https://shabd.education.gov.in